॥ श्री स्वामिनारायणो विजयतेतराम् ॥

फरेणी माहात्म्य

:: लेखक ::

शास्त्री बालकृष्णदासजी - फरेणी

स्वामिनारायण महामंत्र प्रागट्य पर्वे
दशाधिक द्विशताब्दी महोत्सवके उपलक्षमें

:: प्रकाशक ::

श्री सहजानंद संस्कार धाम महामंत्रपीठ
फरेणी (स्वामिनारायण) ३६०३७०

फरेणी माहात्म्य

प्रकाशक : श्री सहजानंद संस्कार धाम महामंत्रपीठ, फरेणी

© प्रकाशक : स्वाधिन

प्रथम प्रकाशन : २१ डिसेम्बर - २०११
स्वामिनारायण महामंत्र प्रागट्य महोत्सव

प्रत : ३०००

मूल्य : रु. २० /-

प्राप्ति स्थान :
श्री सहजानंद संस्कार धाम महामंत्रपीठ
फरेणी (स्वामिनारायण) ३६०३७०
तालुका : धोराजी, जिल्ला राजकोट (गुजरात)
फोन : (02824) 283383 / 283108
E-mail : mantraphithfareni@yahoo.co.in
farenidham@gmail.com
www.farenidham.org

मुद्रक :
हरिकृष्ण ग्राफिक्स, अहमदाबाद
फोन : 079-26421008 , मो. : 98258 50559
E-mail : harikrushnagraphics@yahoo.co.in

प्रस्तावना

सर्वावतारी भगवान श्री स्वामिनारायणने झिस पृथ्वी पर मनुष्य तनु धार के अनेक लीलाओ की है । जिसमें से कभी लीलाओं अपने जीवनके रहस्यको प्रदर्शित करती हैं । वे जिस धरा पर ४९ वर्ष रहकर अपने कार्यों को अपने चरित्र द्वारा सारा सत्संग समाजको दिया है, वे अत्यंत दिव्य है । उनके विचरण के प्रत्येक स्थान, तीर्थो-तीर्थधाम बनते है । वे सबमें स्वामिनारायण महामंत्र प्रागट्य भूमि फरेणी स्थान सभी संप्रदाय के लिये अलौकिक और महत्त्वपूर्ण है। फरेणी धाम स्वामिनारायण संप्रदाय का उद्गम स्थान है । वो बात निर्विवाद है । हाल दिगंतमें जहां जहां स्वामिनारायण मंत्र का जाप हो रहा है - उस मंत्र की प्रागट्यभूमि ''फरेणी महामंत्रपीठ'' जिस फरेणी धाम का महिमा जितना लिखे और कहीये उतना कम है ।

स्वामिनारायण मंत्र प्रगट हुआ उसको दो सैका बीत गया, और वह स्थान सुषुप्त दशा में था । किन्तु जब उस स्थान में एकांतिक सत्पुरुष पधारे हैं तब ही उस स्थान का यथार्थ महिमा जानने में आता हैं और उस स्थान का विकास भी सच्चे अर्थ में ऐसे संत के योग से ही होता है । जिस न्याय के अनुसार अपने गुरुवर्य प.पू. स्वामीश्रीने जिस तीर्थ का महिमा ग्रंथस्थ करके सत्संग को भेट रूप प्रदान किया है ।

इस प्रकाशनमें नोंधनीय बाबत ये हैं कि प.पू. ध.धू. १००८ आचार्य महाराजश्री राकेशप्रसादजी महाराज, वडताल मेनेजिंग ट्रस्टी द्वारा अपने शुभ आशीर्वाद के साथ अपनी अति प्रसन्नता व्यक्त की है ।

इस फरेणी माहात्म्य ग्रंथ लेखनमें प.पू. गुरुवर्य स्वामीश्रीने सांप्रदायिक संदर्भ ग्रंथो का विशेष रूप से आधार लिया है और विशेष रूप से जामजोधपुर के प.पू. सद्. शास्त्री श्री भगवतचरणदासजी स्वामी के पाससे बहोतसी अगत्य माहिती प्राप्त की है । उनको आभार व्यक्त करने के लिये शब्द कम पडते है ।

लि. कोठारीश्री
श्री सहजानंद संस्कार धाम महामंत्रपीठ, फरेणी

॥ श्रीहरि ॥

प्रथम आवृत्ति के उपलक्ष्य में :

तुलसी जाके मुखन से, भूले निकसे राम,
ताके पगकी पहनियाँ, मेरे तनकी चाम.

सर्वावतारि भगवान श्री स्वामिनारायण इस धरा पर ४९ वर्ष तक रहे । इन वर्षोंमें से ३० वर्ष गढपुर में रहकर संप्रदायका अद्वितिय कार्य किया । असूरोंसे अपवित्र बनी हुई इस धरा को पवित्र किया । अधर्म का मूल नाबूद करके धर्म संस्थापित किया । अपने साथ छः संकल्प लेके आये थे जो अपने इस काल में पूरे किये । मंदिर बनाये परंपराओं को जिवित रखने के लिए, शास्त्रका निर्माण कराया ज्ञान के लिये, संत बनाये स्वामिनारायण की धरोहर को आबाद करने के लिए, आचार्य बनाये अपनी धर्मकुल परंपरा जिवंत रखने के लिये ।

श्रीहरि की इस पवित्र धरोहर को आगे ले जाने के लि ये संतो और आचार्यो ने जिम्मेदारी उठा ली । सद्.गुणातीतानंद स्वामी उनके शिष्य सद्. स्वामी बालमुकुंददासजी, उनके कृपापात्र सद्. स्वामी धर्मप्रसाददासजी जिन्होंने भगवान श्रीहरि का इस कार्य को अपनाया, सराहा और आगे ले जाने के लिये अपने शिष्य को प्रेरणा दी ।

सद्. स्वामीश्री धर्मप्रसाददासजीने अपने कार्यकाल में बैठे नहीं रहे । अेक अेक पल का सदुपयोग किया और श्रीजी महाराज का अविरत बढता हुआ कार्य आगे बढाया । अपने कृपापात्र और वारसदार शिष्य प.पू. सद्. शास्त्री श्री बालकृष्णदासजी स्वामीने अपना निजि ज्ञान सोंपा और आज्ञा दी कि तुम सत्संग में विचरण करना, मुमुक्षु जीवों कों प्रकट भगवान स्वामिनारायण को पहचान करवाना विषयी जीवात्माओं को निर्.विषयी बनाना, व्यसनीयों को निर्व्यसनी बनाना ।

गुरूदेव का आदेश संपूर्णतया अंगीकार करके प.पू. शास्त्री स्वामीने अपने साधु जिवनमें कभी भी आराम नहीं किया । गाँव, कस्बा, नगर, शहर जहां रास्ता हो या न हो उनके भ्रमण को कोई भी रोक नहीं सका ।

देश हो या विदेश हो, पू. स्वामीजी अपने साधु मंडल को लेकर विचरण करते रहे हैं । निमंत्रण हो या न हो – पू. स्वामीजी को मालुम होते ही की इस गाँव में मुमुक्षु जीवात्मा रहता है । इस जीवात्मा का जैसा श्रेय होना चाहिये वैसा वे करते हैं ।

दिल्लीमें एक हरिभक्त नाम रमेशभाई गजेरा रहते हैं । रमेशभाई के छोटे भाई बीमार हुए और उनको राजकोटमें वोकहार्ट अस्पताल में दाखिल किया । रमेशभाईने फरेणी स्वामीजी को फोन करके सब समाचार दिया । रमेशभाई और उनकी धर्मपत्नी दिल्ली से राजकोट आ पहुँचे और पू. स्वामीजी फरेणी से तुरन्त आये । रमेशभाई के छोटे भाई को डाक्टरने नाउम्मीद बताया । मगर रमेशभाई और उनकी धर्मपत्नी को पूरा विश्वास था कि पू. स्वामीजी आ गये और आशीर्वाद दिया है इसलिए वे दोनों नचिंत थे ।

न होनी को होनी कौन कर सकता है । रमेशभाई के भाई अच्छे होने लगे और जो डाक्टर सुश्रूषा कर रहे ये उनको भी ऐसा महसूस हुआ कि यह सब स्वामीजी के आशीर्वाद बिना कुछ नहीं हो सकता । जिस प्रसंग से रमेशभाईने ठान ली की मुझे तो स्वामीजी मिल गये हैं मगर दिल्लीमें जो हरिभक्त और मेरे मित्रमंडल रहते है उनको भी लाभ हो इसलिए स्वामीजी को दिल्ली आने की दावत दी । मुझे भी मिले और कहने लगे कि तुमको भी स्वामीजीके साथ आना पडेगा ।

दिल्ली जाने का दिनांक तय हुआ और मैंभी पू. स्वामीजी के साथ विचरण में शामिल हो गया । संत मंडल दिल्ली पहुँचा जहाँ रमेशभाई ओर अन्य उनके मित्र और हरिभक्त उपस्थित थे । रमेशभाई चाँदनी चौक विस्तार में रहते है । यह विस्तार दिल्ली का पुराना मार्ग है जहाँ मोटरकार नही जा सकती । मानव रीक्षामें पु. स्वामीजी को बैठाकर ले गये । इस पुराने विस्तार में मकान भी वैसे पुराने हैं । सीढी भी ऐसी होती हे कि चढनेवाले को बहुत ध्यान रखना पडता है ।

रमेशभाईने भी स्वामीजी का खातिर किया और ठाकुरजी का पूजन–अर्चन और बहुत प्रकारकी सेवापूजा की । जिस समय दिल्लीमें बहुत गर्मी थी । घरमें भी गरमी का माहोल महसूस करना पडता था । मगर रमेशभाई के भावपूर्ण व्यवहारमें गर्मीमें भी ठंडकका अहेसास हुआ । तीन दिन तक पू.

स्वामीजी उनके घर रहे । दिनमें रमेशभाई के भागीदार एवं अन्य मित्र-मंडल आ पहुँचे, स्वामीजीका लाभ लेने लगे और रातमें सत्संग सभा का आयोजन हुआ । जिस सत्संग सभामें पू. स्वामीजीने 'मानवदेहका मूल्य' पर शोचनीय वक्तव्य दिया जिससे श्रोतागण बहुत प्रभावित हुअे । पू. स्वामीजी का लिखा हुआ पुस्तक ''फरेणी माहात्म्य'' जो गुजरातीमें है उसको हिन्दी में भाषान्तर करनेका सुझाव दिया । यहाँतक कि इस पुनित कार्य में जो खर्च करना पडे उनका योगदान देने के लिए स्वामीजी कों प्रार्थना की । तव से स्वामीजीने ठान लिया कि फरेणी जाने के बाद इस संकल्पसिध्ध 'फरेणी माहात्म्य' को हिन्दी में भाषान्तर करवा कर हरिभक्तों जो हिन्दी भाषी है और गुजराती पढना नहीं जानते उनका मनोरथ पूर्ण करें ।

फरेणीमें आ के प.पू. स्वामीजीने फरेणी माहात्म्य का हिन्दी अनुवाद करने के लिये अपने शिष्य पीपलाणा निवासी हाल जूनागढ स्थित प.भ.डॉ. कांतिभाई सवजीभाई चोटलिया को आज्ञा दी और बडे भाव से डॉ. चोटलियाने तुरन्त फरेणी माहात्म्य का हिन्दी अनुवाद कर दिया । सर्व प्रकार के आशीर्वाद के अधिकारी बन गये ।

इस छोटीसी चिनगारी जो हरिभक्तों का दुःख दर्द मिटानेके लिये वडवानल बन गई । कई हरिभक्तों और अन्य उपासक को इस हिन्दी अनुवादित फरेणी माहात्म्य की राह देख रहे हैं । जैसे मोर बारिस की, चातक चंद्र किरणकी और प्यासा पानी के लिये तरसता हो ।

दिल्लीमें दस दिन का विचरण था । इस संस्था के साथ जुडे हुअे अन्य आगेवान सत्संगीयों जिनके नाम है प.भ. बिपीनभाई वडोदरिया, धनेशभाई वडोदरिया सह परिवार सेवामें लग रहे । प.भ. विनोदभाई करशनभाई नशीतने भी तन, मन और धन से सेवा का लाभ लिया जो प्रसंशनीय है । प.भ. धनजीभाई वरसाणी और उनके मित्र मंडलने भी सेवा समागम और दर्शन -पूजन का लाभ लिया ।

दिल्ली स्थित अन्य सत्संगीयोंने भी सत्संग सभा, पधरामणी और संत समागमका अमूल्य लाभ लिया । उनके नाम है श्री अशोकभाई अग्रवाल, प्रमोदजी अग्रवाल, जयकुमार जैन, राजीव जैन, दीपक जैन, संदिप पंडित, चिराग शर्मा और अंकिता शर्मा ।

सच्चे संत समागम का प्रस्ताव निश्चित रूप से पडता है । प.भ. रमेशभाई के घर की छत पर सत्संग सभा का आयोजन हुआ । कइ गुजराती भाषी और

हिन्दी भाषी पुरूषों और स्त्री आये थे । इस सत्संग सभामें स्त्रीयों की बैठक व्यवस्था अलग की हुई थी । स्त्री सभामें से प.भ. रमेशभाई की ध.प. कुन्दनबहनने मुझे बुलाया और कहने लगी कि हम औरतों सत्संग सभा के उपलक्ष्यमें नियम लेना चाहती हैं, तो आप पू. स्वामीजी को हमारी प्रार्थना पहुँचाओं । मैने पू. स्वामीजी के पास जा के इस नम्र निवेदन सुनाया । पू. स्वामीजी प्रसन्न होकर आज्ञा दी कि हर रविवार को अनुकूल समय पर सब औरतें प.भ. रमेशभाई के घर आ करके महामंत्र 'स्वामिनारायण' की धून दो घंटे तक करे । चांदनी चौक में रहनेवाली हिन्दी भाषी महिलायें २प-३० की संख्यामें श्रीमति कुन्दनबहन के घर हर रविवार को आती है और धून-नामस्मरण करती है । यह नियम का अतूट रूपमें पालन करते है । भगवान श्री स्वामिनारायण उन सबका मनोरथ पूर्ण करे ऐसी उनके चरणकमलमें प्रार्थना ।

फरेणी माहात्म्य का हिन्दी अनुवाद करने में प.भ.डॉ. कांतिभाई सवजीभाई चोटलिया बडी खंत से और परिश्रम करके अपनी सद्विधा को पू. गुरूजी की आज्ञा से त्वरित गति से संपूर्ण किया जो सराहनीय है । भगवान श्रीहरि उनको और उनके परिवारजनों - पिताश्री सवजीभाई, मातुश्री लक्ष्मीबहन, ध.प. भावनाबहन, सुपुत्र मयंक ओर सुपुत्री दृष्टि- उन सब पर महामंत्र पीठाधिपति भगवान श्री स्वामिनारायण सर्व प्रकारसे मंगल श्रेय करे और उनके परिवारमें सत्संग का सर्व प्रकारसे अभिवृद्धि हो ऐसी प्रार्थना ।

फरेणी माहात्म्य की यह हिन्दी में प्रथम आवृत्ति श्री स्वामिनारायण महामंत्र प्रागटय दशाधिक द्विशताब्दि महामहोत्सव के उपलक्ष्य में श्री सहजानंद संस्कारधाम - महामंत्रपीठ - फरेणी (स्वामिनारायण) की और से किया गया है । इसके आर्थिक योगदान अ.नि. मातुश्री जमनाबेन गोरधनभाई गजेराकी स्मृतिमें दिल्ली स्थित प.भ.रमेशभाई गोरधनभाई गजेरा और उनकी ध.प.अ.सौ. कुंदनबेन रमेशभाई गजेराने उदार भाव से की है । इनके साथ सेवामें भाग लिया अ.नि. पिताश्री मोहनलालभाई की पूण्य स्मृतिमें उनके सुपुत्र प.भ. रामरतन मोहनलाल अग्रवाल उनकी गं.स्व. मातुश्री निर्मलादेवी, सुपुत्रो पुनित तथा सुमित और परिवारने सहयोग दिया । महामंत्र पीठाधिपति भगवान श्री स्वामिनारायण दाताओं को सर्व प्रकार से मंगल सेवा करे ऐसी अभ्यर्थना ।

चरण सेवक

नौतमलाल केशवलाल सोलंकी - राजकोट

माहात्म्यम्

भगवान स्वामिनारायणने इस पृथ्वी यह पर आकर भागवत धर्मकी स्थापना की । स्वस्वरूप अनुरूप दो दो आचार्यकी स्थापना की । एवम् भागवत जंगम तीर्थ स्वरूप अनेक संतो बनाये । स्थावर तीर्थ स्वरूप अहेमदाबाद, वडताल आदि धाम बनाये । जिस तरह जंगम और स्थावर तीर्थो द्वारा आत्यंतिक कल्याणका मार्ग शुरु किया ।

भागवती दीक्षायें स्वहस्त दी । गुणातीतानंद स्वामी, गोपालानंद स्वामी, ब्रह्मानंद स्वामी और निष्कुलानंद स्वामी जैसे ऐश्वर्यमूर्ति, वैराग्यमूर्ति, समर्थ साधुताकी मूर्ति समान पांचसो पांचसो परमहंसो रूप जंगम तीर्थका मुमुक्षुओंको प्रदान किया । आचार्यो द्वारा भगवती दीक्षा देनेकी प्रणालिका चालु की और उस द्वारा भी दास पंक्ति के संतोकी परंपरा अद्यापि पर्यंत जीवंत है । इससे जंगम तीर्थोंकी प्रणालिका भी आत्यंतिक कल्याण करनेमें दीवेल पूरती रही है ।

अनंत जीवात्माओंका आत्यंतिक कल्याण केन्द्रित करके षडंगी संप्रदाय द्वारा श्रीजी महाराज स्वयं भक्तोंकी सर्व प्रकार से रक्षा कर रहे हैं । उसमें जंगम तीर्थोंको स्थावर तीर्थोंका आधार बनाया । देव का दैवत प्रतिष्ठापक के आधार पर है । यह न्यायको ध्यानमें रखकर आत्यंतिक कल्याणका मुख्य मार्ग संकुचित कर दिया है ।

न देखी जातकुजात, पुरुषोत्तम प्रगटी रे ।
भूमि थकी ब्रह्ममोल लग रे,किया चालु मोक्ष मारग रे ॥

ऐसी नंद संतोकी सार्थक कंडिकाओंका विचार करते हैं तो कोई भी जीवात्मा जमपुरीमें नहीं जायेंगे । छः छः धाम तदुपरांत जन्म स्थान छपैया. तीर्थाटनकी पूर्णाहुति सम लोज, दीक्षाधाम पीपलाणा, पदाभिषेक धाम, जेतपुर और स्वामिनारायण संप्रदायका उद्भव स्थान 'श्री फरेणीधाम' ऐसे चेतनवंत धामे अकारण कृपा करके वसियत में दे दिया । स्वामिनारायण संप्रदाय दिगंत तक प्रवर्तन किया हो वैसे जंगम तीर्थके सम नंद संतो, और दाससंतो द्वारा ऐसे तीर्थधामों को जप, तप, नियम, आत्मनिष्ठा, स्वधर्म और साधुतासे प्रकाशित किया तेजस्वी बनाया । तदुपरांत स्वामिनारायण संप्रदायका उद्भव

स्थान बननेका सुवर्ण अवसर छोटासा यह फरेणी गाँवको प्राप्त हुआ । सहजानंद स्वामी और सद्. गुणातीतानंद स्वामी जैसे समर्थ मूर्ति नंद संतोने जिस गाँवको जीवंत तीर्थ स्वरूप बनाया, सत्य संकल्प बनाया । उनकी पावन प्रणालिकाओंको स्वामी एवम् करूणामूर्ति सद्. कृष्णाचरणदासजी स्वामीने इस पवित्र धामको चैतन्य स्वरूप होने का भरपूर आशीर्वाद दिया । कृष्णदासजी स्वामी अकारण करुणा करके आशीर्वाद देते समय बोले कि ''यहाँ तो सक्कर और धृतकी मीठाई बनेगी और अनेक उत्सवोंका निर्माण होगा'' आशिर्वादोंसे यह भूमि सत्य संकल्परूप बनी है । जिस वजहसे हमारे गुरुवर्य सद्गुरु जोगी स्वामी श्री धर्मप्रसाददासजी स्वामीका सेवा और समागमसे प्राप्त हुए तीर्थका महिमा अंशतः लिखा है ।

इस तीर्थधामका दर्शन करनार दर्शनार्थीओंकी मनोवांछित इच्छायें पूर्ण होगी । कोई कार्यकी सिद्धि के कार्यकी सिद्धि होगी और धर्म, अर्थ, कामकी सिद्धि हो जायेगा । सद्गुरु रामानंद स्वामी स्थापित कष्टभंजन देवकी श्रीजीमहाराजने भी आरति उतारकर आधिकातिशय दैवत प्रदान किया है । यह कष्टभंजन देव दर्शनार्थीओका कष्टका निवारण करेंगे । यात्रिकों और दर्शनार्थीओ के लिये सहजानंद संस्कार धाममें रहनेकी पूरी और प्रसाद की सुविधा है । सद्. रामानंद स्वामी द्वारा प्रस्थापित सदावृत चालु है । जिस सदाव्रतमें प्रसाद लेनेवालों को शांति होगी । संतोका दर्शन - समागम से भी आनंद प्राप्त होगा । ऐसे धर्म, अर्थ काम के दर्शन किये बिना कौन बाकी रहे ? इसलिये यात्रिकों, दर्शनार्थीओं ! पधारो... इस धाम आपके मनोवांछित संकल्पों पूरा करने के लिये उत्सुक है । आपको आवाज देकर बुलाते हैं । जिस वास्ते मुमुक्षुजनोंको इस धाम ''मेरा ही है'' ऐसे मानकर आत्मीयातापूर्वक समझकर जरूर आना । स्वामिनारायण संप्रदायके आद्य प्रवर्तक स्वामिनारायण भगवान दर्शनार्थीओंकी सर्व कामनायें पूर्ण करे ऐसी प्रार्थना साथ शुभाशीर्वाद ! अस्तु !!

शास्त्री बालकृष्णदासजी का
सस्नेह जय श्री स्वामिनारायण ।

अनुक्रमणिका

प्रकरण-१ - उद्धव-स्मृति

१.०१ अधर्म का अभिज्ञान..... ०८७
१.०२ उद्धवजी का अवतरण..... ००
१.०३ संसार त्याग..... ००
१.०४ गुरू दीक्षा..... ००
१.०५ आत्मानंद से अलग..... ००
१.०६ कृपादीक्षा..... ००
१.०७ साधुता..... ००
१.०८ दिव्य आदेश..... ००
१.०९ सोरठ का सद्भाग्य..... ००
१.१० धर्मदेव को दीक्षा..... ००
१.११ सारंग के संत स्वामी रामदासजी..... ००
१.१२ देवीपुत्र को दीक्षा..... ००
१.१३ मुकुंददास मुक्तानंद बने..... ००
१.१४ स्वामीश्री का शिष्य मंडळ..... ००
१.१५ सत्संग के रंगमे रंगे हुअे गाँवो..... ००
१.१६ स्वामी स्थापित सदाव्रत..... ००
१.१७ फरेणी में कष्टभंजन देव की प्रतिष्ठा..... ००

प्रकरण-२ - नीलकंठ स्मृति

२.०१ धर्म-भक्ति..... ००
२.०२ गुरू-शरणागति..... ००
२.०३ प्रभु दर्शन..... ००
२.०४ संकट हरे हनुमानजीने..... ००
२.०५ श्रीहरि प्रागटय..... ००

२.०६ धर्मोपदेश..... ००
२.०७ माता को दिव्यगति..... ००
२.०८ पिता को दिव्यगति..... ००
२.०९ चले उत्तर दिशा में खुद अकेले..... ००
२.१० पूर्व और दक्षिण दिशे कृपालु..... ००
२.११ प्रभुजी पश्चिम में..... ००
२.१२ प्रभुजी पीपलाणा गाँव..... ००
२.१३ लोज की बावली..... ००
२.१४ गुरू झंखना..... ००
२.१५ प्रथम मिलन..... ००
२.२६ दीक्षा महोत्सव..... ००
२.१७ आखरी सत्संग विचरण..... ००
२.१८ पट्टाभिषेक..... ००

प्रकरण-३ - फरेणी स्मृति

३.०१ रामानंद स्वामी की तिरोधान लीला..... ००
३.०२ संप्रदाय की प्रथम धर्मसभा..... ००
३.०३ महामंत्र प्रागटय..... ००
३.०४ सद्गुरू संपन्न मंत्ररत्न महिमा..... ००
४.०१ सद्. श्री सुखानंद स्वामी..... ००
४.०२ सद्. श्री नृसिंहानंद स्वामी..... ००
४.०३ योगीवर्य सदगुरू श्री गोपालानंद स्वामी..... ००
४.०४ अ.मु. सद्. श्री गुणातीतानंद स्वामी..... ००
४.०५ सद्. प्रेमसखी श्री प्रेमानंद स्वामी..... ००
४.०६ वैराग्यमूर्ति सद्.श्री निष्कुणानंद स्वामी..... ००
४.०७ सद्. श्री बालमुकुंददासजी स्वामी..... ००
४.०८ सद्. श्री महापुरूषदासजी स्वामी..... ००
४.०९ सद्. श्री कृष्णचरणदासजी स्वामी..... ००

४.१० सद्. जोगीस्वामी श्री धर्मप्रसाददासजी स्वामी......... ००
३.५ वेदादि सच्छास्त्र मान्य मंत्रार्थ ।............................... ००
३.६ कल्याणकारी पावन प्रसंगे................................ ००
६.०१ सांठ संतो को दिव्यगति............................ ००
६.०२ भक्त के द्रोह का फल जरूर भुगतना पडता.. ००
६.०३ व्याकानंद स्वामी को समाधि..................... ००
६.०४ उन्नसीतेर काल की आगमवाणी................ ००
६.०५ उपलेटा की मलाईबाई............................... ००
६.०६ सुख की कुँची.. ००
६.०७ आश्चर्यप्रद औषधि.................................... ००
६.०८ फरेणी से जेतपुर.. ००
६.०९ समर्पण.. ००
६.१० प्रत्यक्ष पुजासे पुर्णता.................................. ००
६.११ सांख्य बिना आधा सत्संग कहा जाता है.... ००
६.१२ जिसको निश्चय हुआ हो उसके वचनो से ही निश्चय होता है.................................. ००
६.१३ भगवान का निश्चय भगवान से ही होता है. ००
६.१४ स्वामिनारायण मुखे उचरे........................... ००
६.१५ श्री हरि का २७ वा प्रागटयोत्सव................ ००
३.७ दिनमणि शर्मा फरेणी में (सद्. श्री नित्यानंद स्वामी)............... ००
३.८ सद्.श्री गुणातीत स्वामी फरेणी में........................... ००
१.९ सद्.श्री बालमुकुंददासजी स्वामी........................... ००
३.१० सद्.श्री कृष्णदासजी स्वामी की कृपा..................... ००
३.११ पार्षद पोपट भगत... ००
३.१२ सद्. पुराणी श्री हरिवल्लभदासजी स्वामी.............. ००
३.१३ प.पू. सद्. जोगीस्वामी श्री धर्मप्रसाददासजी स्वामी (पीपलाणा वाले).. ००
३.१४ पुराणी स्वामी का पूर्ववत् योगदान........................ ००
३.१५ कोठारी स्वामी देवस्वरूपदासजी............................ ००

१ प्रकरण

उद्धव-स्मृति

१.१ अधर्म के अभिज्ञान

रामकृष्णादिक अवतारों ने अपने चरित्रों के माध्यम से युगप्रवर्तक धर्मोपदेश का भारत देश में स्थापन किया है । मर्यादा पुरूषोतम श्री रामचंद्रजी भगवानने असूरों का नाश करके , समाज की मर्यादा दृढ की और रामराज्य का निर्माण किया । इस तरह राजनैतिक आध्यात्मिक शक्ति से लोगों को भी सुरक्षित किया । इसके अतिरिक्त भगवान श्रीकृष्णने भगवत् गीताका उत्तम उपदेश केवल भारत देश को ही नहीं,.......बल्कि समस्त ब्रह्मांडको धन्य कर दिया है । क्योंकि यह गीतामृत से समग्र विश्व को सनातन सत्य की प्राप्ति होती है । स्वाभाविक रूप से मिलनेवाले ऐसे सनातन सत्य के सिद्धांत को खण्डित करने से क्या परिणाम आता है वह हम जानते हैं ? उसके परिणाम स्वरूप भुगतनी पडती है, विनाशक ईतिहास की पीडा । जैसे भूकंप, हिमप्रपात, अनावृष्टि, अतिवृष्टि आदि.... वह असीम परिस्थिति से समस्त लोग त्राहिमाम् त्राहिमाम् कहकर पुकार उठते हैं । ऐसी ही भयंकर स्थिति आज से तीन सौ साल पहले भारत देश के लोगों को भुगतनी पडी ! जीस देश की जनता वैदिक संस्कृति से भरी हुई थी, वही देश की जनता ही आज असह्य पीडा भुगत रही हैं । उसका कारण है -- धर्म प्रचारकों की वेद विरूद्ध आसूरीवृत्ति के वजह से

संपूर्ण समाज में राजकीय अंधाधूंधी का व्याप हो गया है । इसके परिणाम स्वरूप प्रजापालक राजा ही स्वयं लूटेरा बन गया, जो न्याय को अन्याय का रूप देकर लोगों की संपत्ति लूट रहा है । अधर्म को ही धर्म समजकर वैठनेवाले अधर्माचार्यो अपने मत को ही श्रेष्ठ मानकर लोगों को परेशान कर रहे हैं।

इसके अतिरिक्त अनेक क्रूर रीति-रिवाजों से संपूर्ण समाज दूषित समुद्र में गोता खाने लगा है । यह क्रूर रूढीयाँ जैसी कि; सतीप्रथा, बेटीयोंकों (लडकियोंको) दुधपीलाकर मारने की प्रथा, वाममार्गीयों का पंच 'म'कारका सेवन, हिंसक यज्ञों और देवदासी जैसी आसूरी वृतियाँ इस देश में निवास करके बैठ गई है । साथ साथ इस यौवनकाल में हिन्दु धर्मस्थानों भी लूटने लगे, और मूल धर्मस्थलो की जगह अन्य अधर्म स्थानों का सर्जन होने लगा । ऐसे अंधशासन के वक्त असंख्य अनार्य हुकूमत करनेवाले आर्य प्रजाकों लूट रहे है । इसके परिणाम स्वरूप हिन्दु देवस्थानों का और हिन्दु आध्यात्मशास्त्रों का ध्वंस होने लगा है । अब तो यह पवित्र प्रदेश में धर्महीन, कर्महीन तथा जातिहीनता की ज्वाला तेजी से फैल गई है ।

ऐसे कठिन काल में धार्मिक लोग बिलकुल उब गए थें । और यह अधर्मरूपी सर्ग से त्राहिमाम् करके पुकारने लगी । अरे ! कितने भगवद् भक्तो यह अधर्मतांडव से कष्ट उठाकर भगवानकों हृदयपूर्वक प्रार्थना करने लगे कि ; ''हे प्रभों ! निराधार के आधार ! अब हमारे पास कष्ट जेलने की जो शक्ति है, वह खत्म हो गई है, अब हमें यह अधर्मताण्डव में से मुक्त कर, शांति, सुख का अर्पन कर, और एसी शांतिप्रद-सुखप्रद युगपुरूष का योग करके.... अब इस कठिनाई से उबारना ....प्रभों !'' ऐसी हृदयद्रावक प्रार्थना प्रत्येक दैवी जीवात्माओं के हृदय में होने लगी । यधपि ऐसे दुःसह्य दुषणों

के सामने यथार्थ धर्म का रहस्य समजाने के लिए श्रीशंकराचार्यजी, श्री विष्णुस्वामी, श्री चैतन्य गौरांग जैसे समर्थ आचार्यों वैदिक धर्म का स्थापन करने के लिए कटिबद्ध बने ही थे । इसके अलावा इस समय राजस्थान के महाराणा प्रताप, धर्म के छत्ररूपी छत्रपति शिवाजी जैसे समर्थ पुरूष दिल्हीश्वर यवन सम्राटों के सामने गिरिकंदराओं में भटककर भी धर्मरक्षा का कार्य करते थे । किन्तु यह दैवी जीवात्माओं की हृदयगत प्रार्थना प्रभु तक पहुँच गई और समर्थ उद्धवजीके अवतरणः के चिन्हरूपी शांति सर्व वैदिक पुरूष के हृदय में अंकित हो गई है ।

१.२ उद्धवजी का अवतरण

भगवान श्रीकृष्ण स्वयं अवतार कार्य की लीला समेटने के निमित्तरूप सौराष्ट्र के सोमनाथ तीर्थमान के निकट प्राचीन तीर्थ भालका में शिकारी के बाण से बेंधकर गीर गये थे । भगवान की लीला कैसी है ! अब श्रीकृष्ण भगवानने अपने अवतार कार्य को पूर्ण करने का ही संकल्प ले लीया है । और अपने प्रिय भक्त उद्धवजी को वहाँ बुलाते हैं । उद्धवजी और भगवान श्री कृष्ण दोनों ने ज्यादा ही गहरी रहस्य समेत चर्चा करके असुरोंके नाश की समीक्षा की । उस समय प्रभु, उसके प्रिय भक्तों को यथार्थ सुख-आनंद न दे शके उसका दुःख व्यकत किया; और इसके बाद उद्धवजी द्वारा ही उसके शरणागत भक्तों को सुख देने का संकल्प करके उद्धवजी को बद्रिकाश्रम में तप करने के लिए जाने की आज्ञा देकर स्वयं प्रभु उनके गौलोक में चले गये और भारत वर्ष का भाग्य खंण्डित हो गया ।

तब बद्रिकाश्रम में भगवान नर-नारायण सभा करके बैठे है, उस वक्त यह सभा में मरीचि आदिक ऋषिओं और धर्म तथा मूर्ति

और उद्धवजी भी उचित स्थान पर बैठे हैं । इस सभा में भगवानने भारत वर्ष की प्रजा के समाचार की पूछताछ की । तब ऋषिमुनियोंने विरक्त-भाव के साथ भारत में प्रवर्तमान अधर्म ताण्डव का तादृश वर्णन किया । ऋषिमुनिओं से व्यक्त हुए हृदयगत अभिप्राय अब भगवान श्री नरनारायण, धर्म-मूर्ति और उद्धवजी इन सबने शांत-चित्त से सुना । यह दुःखी ऋषिमुनिओं द्वारा किया गया अधर्मताण्डव का अभिप्राय अब अवतारी प्रभु पुरुषोत्तम नारायण तक भी पहूँच गया और इससे ही उसके संकल्प से दुर्वासाऋषि इस सभा में आ गए क्योंकि अवतारी पुरूष के अवतरण के लिए कुछ निमित्त बनता है । शांतचित श्रवण-पान कर रही यह सभामें दुर्वासा मुनिका आगमन किसी की नजर में न आने से यह ऋषिका सम्मान न हुआ । जिसकी वजह से दुर्वासामुनि ने प्रकृतिवश होकर रौद्ररूप धारण करके सभी संतो को, ऋषिओं को और स्वयं नर-नारायण प्रभु को शाप देते हुए कहा कि -- '' जाओ ! तुम सब पृथ्वी पर जन्म धारण करना और असुरों द्वारा दिए गये कष्ट को सहना । ''

इस तरह स्वयं प्रभुका पृथ्वी पर प्रगट होने के लिए निमित्त बनी यह सभा समाप्त हुई, और सभी ऋषिओं तथा सर्वावतारी - प्रभुने इस भारत भूमि में जन्म लेने का निश्चय किया । स्वयं भगवानने ही धर्म भूर्ति के वहाँ पुत्र रत्न स्वरूप प्रकट होने की शुभ प्रतिज्ञा करली है । अन्य संतोने भी अब पवित्र-पुण्यात्मा जीवों के वहाँ प्रगट होने लगे है । तब संवत १७९५ की सावन वद कृष्ण जन्माष्टमी के शुभ दिन अयोध्या तीर्थ में निवास करने वाले विप्र अजयशर्मा और सुमति के कूख एक सुंदर पुत्ररत्न का जन्म होता है । जिसका नाम 'रामशर्मा' रखकर माता-पिता यह पुत्ररत्न को प्रेम से पालन-पोषन करने लगे । पुत्र रामशर्मा भी पूर्वजन्म के महान भक्त होने से स्व प्रकास से उजासित होने लगे । और आठवें साल तो

पिताजीने उपवित संस्कार भी संपन्न कर दिया । तब से यह रामशर्माने ब्रह्मचारी रूप धारण करने मन से ही नित्य यह ब्रह्मचर्याश्रम में रहने के लिए, गृहत्याग का संकल्प कर लिया । किस तरह की रीति होती है--ऐसे पूर्वजों के समर्थ संतो की ! यह वही ही संत है, जो बद्रिकाश्रम की सभा में उद्धवजी के रूप में श्रवण पान कर रहे थे और जिसका अवतरण प्रभु के शुभ संकल्प से पृथ्वी पर हो गया है!

१.३ संसार त्याग

प्रभु के पूर्ण संकल्प से पृथ्वी पर प्रगट हुए उद्धावतार श्री रामशर्माने उसके प्रागटयके मूल हेतु की ओर दृष्टि डालकर संसार त्यागने का संकल्प लिया ।

''पीछे वर्णी व्रतको, दृढ मनमें कर ठान लिया,
गृहस्थाश्रम नही करना, ऐसा मनमें फिर विचार किया । ''

इस तरह दृढ संकल्पी हुए श्रीरामशर्मा निवृतिसम संतो का संपर्क करने लगे । साथ ही पिताजी के पास से श्रीमद् भागवत् का श्रवण करके अगम रहस्य पान करने लगे । भगवान श्री कृष्ण की मूर्ति का हंमेशा पूजनार्चन करते; परंतु प्रत्यक्ष श्री कृष्ण दर्शन की अभिलाषा भी हृदय में रह गई ही थी । इसलिए संसार त्यागकर अपने पृथ्वी पर के आगमन का मूल उदेश पूरा करने के लिए अब धैर्यरहित बनकर माता-पिता के पास वेदाभ्यास के लिए गृहत्याग करने की अनुमति ली । तब माता सुमति देवी श्री रामशर्मा की यह इच्छा जानकर मूर्छित हो गयी; और मूर्छितवस्थामें श्री राम को कहने लगी कि; ''हे राम ! आप अगर यहाँ से चले गए तो मैं कैसे रह पाउँगी ? इसलिए बेटा ! यहाँ घर में रहकर ही प्रभु का भजन करना !'' तब श्री राम कहता है कि ; ''माँ ! अब मैं यहाँ तुम्हारे कहने से रूकनेवाला नहीं । ''

''श्री राम ने कहा सूनो माँ, मुझे जाना है जरूर,
रूका तुम्हारा नही रूकनेवाला, मेरा अंतःकरण है आतुर''

यह सुनकर मर्मज्ञ माँ संक्षेप में सबकुछ समज गयी । और ममत्वभाव से मातृ हृदय तुरन्त ही बोल उठता है कि, 'बहुत अच्छा बेटा ! खुशी से जाना, किन्तु बेटा ! मेरे हाथ का बना हुआ भोजन मुझे प्रेम से तुझे खिलाना है ! बेटा ! तु खायेगा न ? '' तब श्रीराम मातृप्रेम का हार्द समझकर तुरंत ही बोल उठते है कि; ''ठीक है माँ! आप भोजन की तैयारी किजिए । मैं आपके हाथ का खाना खाने के बाद ही जाउँगा । '' तब उस माँ की मूर्छा उत्तर गई और पुत्र श्रीराम को स्नेह से खिलाया । श्रीराम भी पश्चिम दिशा की ओर जाने के संकल्प के साथ तेजी से खाना खाकर चले गये ।

''जैसे पूर्व दिशे प्रगटी, इन्दु आए वरूणि दिश,
इस तरह श्रीराम आपने, किया पश्चिम में प्रवेश ।''

इस प्रकार, उद्धवावतार श्री रामशर्मा ने अपने सहेतुक कार्यो सिद्ध करने के लिए गृहत्याग किया । यह सहेतुक कार्यो थे-उद्धव सम्प्रदाय को प्रकाशित करके योगभ्रष्ट जीवात्माओं को योग में लेने का ! इसलिए यह भी रामरूप चन्द्र पूर्व की और प्रकट होकर पश्चिम में प्रकाश देने का दृढ संकल्प करके पश्चिम में स्थिर होता है । सदैव निस्पृही यह श्री रामशर्मा असंख्य तीर्थ स्थानो के दर्शन करते करते, साकारवादी सद्गुरूओं को नमन करके पश्चिम की ओर स्थित समुद्र तट परके तळाजा नामक गाँव में आते हैं । यह गाँव में रहनेवाले संत काशीराम के पास ज्ञानामृत का पान करके बहुत खुश हुए । वहाँ से रेवताचल गिरनार की पठवारी में गोपनाथ से जाकर योगीवर्य गोपालयोगी के शिष्य आत्मानंद मुनि को मिले । यह आत्मानंद मुनि अष्ट प्रहर समाधि में रहते और गुरू के प्रभाव से अनेक सिद्धियाँ प्राप्त की है । यह आत्मानंद मुनि से योगसिद्धि प्राप्त

करनेवाले अनेक शिष्य भी थे । ऐसे यह समर्थ आत्मानंद मुनि के दर्शन करके श्रीरामशर्मा खूब ही प्रभावित हुए । श्रीरामशर्मा को ऐसा विश्वास हो गया कि; यह आत्मानंद मुनिको समाधि में प्रत्यक्ष श्रीकृष्ण के अवश्य दर्शन होते होंगे । उस तरह मन ही मन स्विकार करके वह आत्मानंद मुनि का शरणागत बनकर प्रार्थना करने लगे कि; ''हे गुरूदेव ! मैं तुम्हारें शरण आया हूँ । आप मेरी पिडा हरनेवाले है । हे स्वामी ! मुझे साक्षात् श्रीकृष्ण प्रभु के दर्शन की तीव्रेच्छा है । यदि प्रभु ! इसके लिए मुझे आपकी ओर से कोई भी आदेश रहेगा वह पालने के लिए मैं कटिबद्ध हूँ ।'' श्रीराम की यह नम्र बानी सूनकर मुनि आत्मानंद अधिक ही प्रसन्न हुए ।

१.४ गुरूदीक्षा

शरणागत श्रीराम की यह विनम्र वाणी सूनकर प्रसन्न हुए आत्मानंद मुनिने कहा कि; राम ! श्रीकृष्ण का प्रकट दर्शन करने के लिए जरूरी है । यह अष्टांगयोग सिद्ध करने से तुम्हारे सभी संकल्प अवश्य सिद्ध होंगे । एसे कृपावचनों को सूनकर श्रीराम हर्षित होकर प्रार्थना करने लगे कि;

''शिष्यस्तेडहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ।''

मैं आपका शिष्य हूँ । आपके शरण में आया हूँ । मुझे योग का उपदेश दिजीए । ऐसे शरणागत शिष्य को अपनाकर आत्मानंद मुनिने श्रीराम को भागवती दीक्षा देकर श्री रामानंद नामाभिधान किया ।

बाद में तो श्रीरामानंद स्वामी श्री गुरूदेव के बारे में पूर्ण दैवतभाव को पाकर गुरू कृपा के बल से यम, नियम, आसन, प्राणायाम्, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि के साथ अष्टांगयोग को सिद्ध कर लिया । समाधि के बारे में अखंड ब्रह्मतेजका दर्शन हुआ... लेकिन यह तेज के बारे में साकार श्रीकृष्ण भगवान के दर्शन

हुआ नहीं । इसलिए व्याकुल बने हुए श्रीरामानंद स्वामी अत्यंत विरक्त हो गये । तो फिर यही निरपेक्षता को टालने के लिए गद्‌गदित् कंठ से वह गुरूदेव आत्मानंद मुनि से प्रार्थना करने लगे कि; ''है गरूदेव ! हे दीनदयाल ! आपकी कृपासे मुझे तेज का दर्शन होता है, लेकिन यह निराकार तेजमें साकार श्रीकृष्ण के दर्शन मुझे नहीं होते, इसलिए मैं उद्विग्न बन गया हूँ । तो आप अब कृपयॉ करके मुझे श्रीकृष्ण भगवान के दर्शन कराइए । '' यह सूनकर गुरू आत्मानंद मुनि कहने लगे कि; ''ब्रह्मचारी ! यह निराकार तेज वही श्री कृष्ण है । आकृतिमात्र तो मायिक ही है !'' गुरूदेव का यह कथन सूनकर श्री रामानंद स्वामी बेहोश होकर पृथ्वी पर गिर पडे । कुछ देर बाद जब होश में आए तब गुरूदेव के द्वारा कह गई निराकार स्वरूप की बात का स्मरण कर बिलख-बिलखकर विलाप करके शोक व्यक्त करने लगे ।

१.५ आत्मानंद से अलग

आकार मात्र को मायिक समझानेवाले यह आत्मानंद की अरूचि आ गई रामानंद स्वामी को । फिर तो यह समाधिनिष्ठ, स्थितप्रज्ञ सद्‌गुरूका त्याग करके रामानंद स्वामी वहॉ से चल पडे । गुरूने वहॉ रूकने के लिए अधिक प्रयत्न किया, फिर भी न रूकनेवाले यह आत्मानंद स्वामी में सत्-असत्‌को परखने की अलौकिक विवेक बुद्धि थी । यह आत्मानंद मुनि का त्याग अनेक मुमक्षुओं को साकारनिष्ठा का सदाग्रह पूरा कर रहा था । ऐसे असंख्य शुभ संकल्पो वाले श्री रामानंद स्वामी रैवताचल से रामानुज की गद्‌दीस्थान श्रीरंगक्षेत्र की ओर चल पडे । ऐसे प्रत्यक्ष दर्शाभिलाषी उद्धवावतार श्री रामानंद स्वामी का कोई स्वाभाविक रूप आत्मनिष्ठ आत्मानंद मुनिका त्याग कर शकें, दूसरे मुमुक्षजनो का काम नहीं । इसलिए ही

श्री रामानंद स्वामी के जीवन में से ऐसी प्रेरणा मिलती है कि; भगवान मूर्तिमंत ही है और यह प्रत्यक्ष स्वरूप से ही आत्यंतिक कल्याण पूर्ण होता है । धन्य है .... यह प्रत्यक्षवादी उद्धवावतार श्री रामानंद स्वामी को ! कि जिन्होंने हम सबको साकारवाद का प्रेरना युक्त पीयुषपान कराते हैं ।

१.६ कृपादीक्षा

रामानंद स्वामी श्रीरंगक्षेत्र में पहुँचने के बाद पवित्र नदी कावेरी में प्रतिदिन स्नान करके संध्यावंदन आदि आह्निक कर्मो श्रद्धा के साथ करने लगे । वहॉ बिराजमान श्रीरंगनाथ भगवान के दर्शन करके, भावातुर बनकर प्रार्थना करने लगे । श्रीरामानुजाचार्य रचित 'भाष्य' और 'भगवत्‌गीता' आदि सच्छास्त्रों की कथा वहॉ के वैष्णव करते थे और यह कथा का श्रवण-पान रामानंद स्वामी बहुत ही श्रद्धा के साथ करके गौरव के मनोभावों का अनुभव करने लगे, तो फिर उसके बाद श्रीप्रपन्नामृत ग्रंथ की कथा भी इस स्थान पर प्रतिदिन होती है । यह कथा-पान करके रामानंद स्वामी इस स्थानक के बारे में महिमा के साथ भगवत् भक्तों की सेवा करने लगे । यह श्री रंगक्षेत्र में भगवान रामानुजाचार्ये अवश्य निवास किया है ऐसा मानकर रामानंद स्वामी इस स्थान के सेवक बनकर श्री रामानुजाचार्य रचित साकार-ब्रह्म प्रतिपादिक श्रीभाष्य आदिक सद्‌ग्रंथोंका अमृतपान करने लगे ।

इस तरह यह स्थान के बारे में सेवक बने हुए श्रीरामनंद स्वामी को इधर आने में तीन मास बीत गये । रामानंद स्वामी के महत्त, श्रध्धा और प्रत्यक्ष दर्शन की तीव्रेच्छासे प्रसन्न हुए श्री रामानुजाचार्यने चैत्र सुद पांचम के दिन प्रातःकाल में रामानंद स्वामी को स्वप्न में दर्शन दीये । यह चैत्र सुद पांचम का दिन सचमुच

जन्मदिन बन गया । सूर्यक्रान्ति को लज्जित करे वैसे यह मूर्ति का तेज और कामदेव को भी लज्जित करे ऐसा रूप का दर्शन कर रहे रामानंद स्वामी यह प्रत्यक्ष मूर्ति के करूणासह कृपारस से अब भीग गये हैं । हाथ में सज्ज हुए तीन दंड से मानो पापीको को दंड देनेवाला भाव यह प्रत्यक्ष दर्शन रूपी दैवी मूर्ति में से प्रकट होता था । ऐसे प्रत्यक्ष दर्शन होने से रामानंद स्वामी की जन्म जन्मांतर की इच्छा पूरी हो गई और 'प्रपन्नामृत' में किये हुए लक्षण से युक्त यह ही स्वयं श्रीमन्नारायण है वैसे दृढ निश्चय के साथ श्री रामानुजाचार्य के चरनकमल में साष्टांग प्रणाम करने लगे । तब प्रसन्न हुए श्री रामानुजाचार्य ने कहां कि; ''वरं वरय मद्वर्णिन् रामानुजमवेहि माम् ।'' हे वर्णिन् ! आपने जिसकी आराधना की वही मैं रामानुज हूँ । आप की जो इच्छा हो वह वर माँगो मैं आप पर प्रसन्न हुआ हूँ !! '' ऐसे कृपा बचनों को सुनकर श्री रामानंदवर्णी बहुत ही हर्षित हुए.....और बोल उठे कि; ''हे गुरूदेव ! मैं आपके दर्शन से कृतार्थ बना हूँ । प्रभों ! अब मुझे सर्वेश्वर श्रीमन्नारायण के प्रत्यक्ष दर्शन करने की कृपा करें । ऐसी प्रार्थना बचन सुनकर प्रसन्न हुए श्री रामानुजाचार्य रामानंद स्वामी को भागवती कृपा दीक्षा देकर और '' श्रीमन्नारायण चरणौ शरणं प्रपधै ।'' और ''श्रीमते नारायणाय नमः । '' यह दो मंत्रो को देकर मंत्रजाप करने का आदेश दिया और कहा कि; ''यह मंत्रजाप करने से आपके सभी संकल्प सिद्ध होगे । आपको श्रीमन्नारायण प्रत्यक्ष दर्शन देंगे ही । धर्म के साथ भक्ति, ज्ञान, वैराग्य को फैलाना । शरणागत लोगों को सद्बोध देकर, पृथ्वी पर एकांतिक धर्म का स्थापन करना । तुम्हारे कारन असंख्य दैवी जीवात्माओं को प्रभु की प्राप्ति होगी क्योकिं आप भगवान के कृपापात्र है ।''

इस तरह उपदेश देकर श्रीरामानुजाचार्यने तुलसी की दोहरी कंठी, जपमाला और उर्ध्वपुड्र तिलक की पद्धति दिखाकर रामानंद

स्वामीने वैष्णवाचार्य पद के पुरोहित का सम्मान करके..... शरणागत जीवों को वैष्णवी दीक्षा देने की आज्ञा की । फिर कहा कि; ''जो यह स्थूल पर दंभी भक्तों की ओर से आपको उपद्रव हो तो अन्यत्र जाकर भजन-भक्ति करना, और दूसरे को भी भक्तिमार्ग में लाना ।'' ऐसे शुभार्शीवचन देकर श्री रामानुजाचार्य अदृश्य हो गए और धन्य बन गए.... कृपा दीक्षित श्री रामानंद स्वामी ।

१.७ साधुता

गुरू रामानुजाचार्य द्वारा दीक्षित रामानंदस्वामी आज पूर्णकाम बन गए । स्वयं सचेतन होकर, तुलसीकी दोहरी कंठी, जपमाला और द्वादश उर्ध्वपुंड्र तिलक देखकर अत्यानंद के अनुभवी बन गए । प्रत्यक्ष दर्शन के मनोभाव पूर्ण हुए । फिर तो रामानुजाचार्य की आज्ञा के मुताबिक जप, तप और धर्म के साथ भक्ति में लीन बन गये । अन्य भक्तो की अपेक्षा; कृपा दीक्षित रामानंदस्वामी ज्यादा ही तेजस्वी बनकर सूर्य प्रकाश की तरह सर्वत्र प्रकाशित बन गए । परिणाम स्वरूप दुष्ट भक्तों सभी तरह से रामानंद स्वामी को तंग करने लगे । इससे उदास होकर श्री रामानंद स्वामी यह श्रीरंगक्षेत्र का त्याग करके अन्य क्षेत्र में विहरने लगे । शरणागत् मुमक्षुओंको वैष्णवी दीक्षा देकर धर्म, ज्ञान, भक्ति से प्रत्यक्ष श्रीकृष्ण के दर्शनाभिलाषी किये-श्री रामानंद स्वामी ने ! इसलिए ही गुरूदेव श्री रामानंद स्वामी की महिमा सर्वत्र फैल गई । रामानंद स्वामी के ऐसे अलौकिक प्रभाव से तेजो द्वेषीओं जलने लगे और रामानंद स्वामी का पराभव करने के लिए उसकी निंदा और अपमान करने लगे । अरे..... यह असूर पापी भक्तोंने तो रामानंद स्वामी को ताडन करने की भी कोशिष कर ली । फिर भी क्षमाशील यह उद्धवावतार श्री रामानंद स्वामीने क्षमा का त्याग किया नहीं । अरे....फिर तो यह तेजोद्वेषीओंने रामानंद स्वामी के

पूजा-किताबों, कमंडल, कंठी, जनोई, ठाकुरजी की सिहासनादिक चीजो भी तोड-फोड कर तहस-नहस कर डाला । फिर भी यह क्षमासागर समर्थ स्वामीने दूसरे के अकल्याण का संकल्प भी नहीं किया । अंत में रामानंद स्वामी द्वादश उर्ध्वपुंड्र तिलक का त्याग करके, भगवान का ध्यान-भजन करते करते यह अनार्य देश का त्याग करके वृंदावन के पथ चल पडें ।

१.८ दिव्य आदेश

अब तो उद्धवावतार सद्गुरू रामानंद स्वामी श्री कृष्ण परमात्माकी रमणभूमि वृंदावन में आ गए । कृष्ण के प्रेमिओंको यह भूमिका का आकर्षण सहज रहता ही है ! यह भूमि पर आनेवाले भाविक भक्तों को गोप-गोपीओंका सुख मिलता है और बंसी के सूरो सुनाई देते हैं । ऐसी यह प्रसादकी भूमि पर रामानंद स्वामी भी भावाविष्ट (भावमय) होकर भजन-भक्ति करने लगे । यह तीर्थमें बिराजमान श्री कृष्णप्रभु की मूर्ति में ही प्रत्यक्ष भगवान का भाव रखकर एकाग्रता से रामानंद स्वामी भजन करने लगे । अरे... अब तो एकाग्र चित्त में बैठकर घंटो तक रामानुजाचार्य के द्वारा दिये हुए मंत्र का पाठ करने लगे । भावमय बन गये ! इस तरह एकबार श्रीकृष्ण प्रभु के मंत्र का जाप करते -करते अंतर में दिव्य तेज प्रकट हुआ । यह दिव्य तेजमें उसे वृंदावनविहारी श्रीकृष्ण प्रभु के दर्शन हुए । यह दिव्य दर्शन से स्वामी का हृदय प्रफुल्लित हो गया । और प्रसन्न हुए परमात्मा सर्वकर्म समाराध्य और सर्वाविर्भाव के कारण श्री कृष्ण ने ऐसे दो कृपा मंत्र दिये ।

(१) श्री कृष्ण त्वं गतिर्मम् ।

(२) ब्रह्माहं कृष्णदासोडस्मि ।

वृंदावनविहारिके यह दो कृपा मंत्रो को पाकर उद्धावतार सद्.श्री रामनंदस्वामी तो कृतकृत्य हो गए ।

१.९ सोरठ का सद्भाग्य

भगवान श्रीकृष्ण का दिया हुआ यह दो महामंत्रो को प्राप्त कर रामानंद स्वामी प्रभु के शरणमें ढल गये । तब श्री कृष्ण परमात्माने प्रसन्न होकर आशीर्वाद देकर कहा कि; ''अब आप सोरठ देशमें जाकर निवास करना । वहाँ बहुत दैवी जीवात्माओं आपके शरणमें आएंगे । उन सर्व मे धर्म के साथ भगवान की भक्ति पैदा करना । मैं भी अब पृथ्वी पर नरतनु का रूप धारण करके आपको सोरठ में मिलुंगा । साथ ही, दुर्वासा के शाप से नरदेह प्राप्त किये हुए मुनिओं भी आपके पास वहाँ सोरठ में आएंगे । आप सभी वहाँ सदाव्रत अन्नक्षेत्रो की स्थापना करना । यह अन्नक्षेत्र में आनेवाले मुमुक्षुजनो को मेरी भक्ति कराना और उद्धव सम्प्रदाय की स्थापना करना ।'' ऐसे आशिर्वचन को सूनाकर भगवान श्री कृष्ण अदृश्य हो गए ।

ऐसे अलौकिक आशीर्वचन प्राप्त कर उद्धवावतार रामानंद स्वामी हर्षोल्लास से भर गये । अब तो जब भी ध्यान करते तब श्रीकृष्ण प्रभु के प्रत्यक्ष दर्शन होने लगे । साथ ही भगवान को अर्पन किये गये भाव के प्रतीक सम पुष्पमाला और फूलों का गुच्छ श्री भगवान प्रत्यक्ष अंगीकार करने लगे । इस तरह श्रीकृष्ण परमात्मा के प्रत्यक्ष दर्शन कर रहे श्री रामानंद स्वामी वृंदावनमें एक मास रहकर बहुत ही मुमुक्षुओंको अपने आश्रित किये । गुरूदेव श्री रामानुजाचार्य का दिया हुआ अध्यात्मज्ञान समझकर, कृष्णभक्ति को पृथ्वी पर प्रकट कर रामानंद स्वामी अब प्रयागक्षेत्र जाने के लिए तैयार हुए । यह सब तीर्थोमें जाकर अंत में तो सोरठ में जाने का संकेत स्वामीजी को हो रहा है ..... क्योंकि भगवान श्रीकृष्ण का आदेश सोरठमे स्थित होने का है । ऐसा है.....सोरठ का सद्भाग्य ।

१.१० धर्मदेव को दीक्षा

उद्धवावतार सद्‌गुरू रामानंद स्वामीने प्रयागक्षेत्र में पहुँचकर त्रिवेणी स्नान दर्शनविधि करके एकांत स्थल पर निवास किया । शरण में आनेवाले मुमुक्षुजनों को धर्म के साथ भक्ति का उपदेश देने लगे । इससे मुमुक्षुओं रामानंद स्वामी के आश्रित होने लगे । यह तीर्थक्षेत्र में आ रहे मुमुक्षुओं में एक पवित्र दंपती भी दर्शन के लिए आते हैं । यह दंपती पवित्र सरयू नदी के तट पर स्थित अयोध्या के पास आये इटार गाँव में रहनेवाले सरवरिया ब्राह्मण थे । उसका नाम था । धर्मदेव और भक्ति ! यह पवित्र पति-पत्नि को रामानंद स्वामी के दर्शन होते ही हृदय में कुछ अलौकिक आनंद की अनुभूति हुई । यह पवित्र दंपती सद्‌गुरू रामानंद स्वामी को समर्थ संत मानकर हर्षसभर पूजा करने लगे ।

एक दिन श्री धर्मदेव रामानंद स्वामी के भावपूर्ण चरण सेवा कर रहे है, तब उनके अलौकिक सेवापद्धति से प्रसन्न हुए रामानंद स्वामी की कृपा से उनको एक दिव्य तेज के बीच भगवान श्री कृष्ण के दर्शन हुए । यह अलौकिक दर्शन से कृपान्वित हुए धर्मदेवने पहचाना कि यह दर्शन होने का एकमात्र कारण सद्‌गुरू रामानंद स्वामी की कृपादृष्टि ही है । इस तरह स्वीकारकर यह समर्थ सद्‌गुरू के शरण का स्वीकार किया-यह पति-पत्नि अब तो यह शरणागत दंपत्तीने उद्धवावतार रामानंद स्वामी की सेवाकार्य करके उनको प्रसन्न करके; उनके हस्त भागवती दीक्षा प्राप्त करने की तीव्रेच्छा प्रकट की । इसलिए रामानंद स्वामीने भी मुमुक्षु श्रेष्ठ धर्मदेव के कण्ठ में तुलसीकी दोहरी कण्ठी पहनाकर स्वयं श्रीकृष्ण भगवान के पास से प्राप्त किए हुए अष्टाक्षर मंत्रका उपदेश दिया... और अनुष्ठान योग्य स्वधर्म का आदेश देकर धर्मदेव को सुखी कर दिया ।

इस तरह धर्मदेवने विधि-निषेधरूप धर्म का उपदेश देकर कृपा वचनों को व्यक्त किया कि; ''मुमुक्षुजनों को आप संसार के बंधनसे मुक्त करना । मेरे सभी शिष्यो में आप श्रेष्ठ होंगे । साथ ही, आपके शरण मे आनेवाले मुमुक्षुजनों को मंत्रोपदेश देने के लिए मैं आपको अधिकार देता हूँ । आपके निवास जाकर तुम दोनों साथ ही अष्टाक्षर महामंत्र का नित्य जाप करना । इहलोक एवं परलोक का सुखार्थे आप दोनों अब आज से 'ब्रह्माहं कृष्णदासोडस्मि ।' यह मंत्र का पुरश्चरण करना और कराना । यह पुरश्चरण से आप चतुर्थ पुरूषार्थ की सिद्धि को प्राप्त कर सकेंगे । अर्थात्, ज्ञान प्राप्ति के लिए अब तुम दोनों गुरूवर्य रामानुजाचार्य रचित 'श्रीभाष्य' आदि ग्रंथो को पढना और पढाना । गुरूदेव श्री रामानुजाचार्य रचित ग्रंथ ही मुझे अभीष्ट है..... क्योंकि तत्व के मत में रामानुजाचार्य जैसा बुद्धिवादी अन्य कोई आचार्य नहीं है । अतः आप दोनों पति-पत्नि आजसे यह सिद्धांत से भरपुर ग्रंथ का श्रद्धा के साथ पठन करना और कराना । आप दोनों धन्यभागी हो !''

इस तरह रामानंद स्वामीने स्वनिर्धारित पवित्र रहस्य सिद्धांत का पान धर्मदेव को कराकर उसको कृतार्थ कर दिया ! बाद में गुरूवर्य रामानंद स्वामीने प्रसन्न होकर धर्मदेवको घर जाने की आज्ञा दी । धर्मदेव भी ऐसे समर्थ गुरू की प्राप्ति से प्रसन्न होकर गुरूदेव को साष्टांग प्रणाम कर, अपनी पत्नी के साथ घर जाने के लिए बिदा हुए । उद्धवावतार श्री रामानंद स्वामी भी अब प्रयागक्षेत्र में से बिदाई लेकर द्वारका की ओर जाने के लिए चल पडे..... क्योंकि संकेत था-सोरठ में ठहरने का !

१.११ सारंग के संत-स्वामी रामदासजी

धर्मदेव यानि की देवशर्मा जैसे हजारो शिष्यो का समुदाय

उद्धवावतार श्री रामानंद स्वामीने तैयार किया । फिर भी 'अब भी मेरे अवतरण का संकल्प सिद्ध नहीं हुआ' ऐसा मानकर विशाल त्यागी शिष्यों का मंडल तैयार करने का दृढ संकल्प रामानंद स्वामीने किया । बाद में पृथ्वी मे भ्रमण करते करते विषय खण्डन और जगत मिथ्या का उपदेश देकर कृष्ण भक्ति की महिमा गाने लगे । इस तरह सांख्य सिद्ध करके योग का उपदेश देते हुए सद्गुरू रामानंद स्वामी द्वारकानगरी का दिशानुसंधान रखकर तीर्थाटन करते करते गुजरात प्रदेश में आ गए । उसके बाद गुजरात राज्य की कानम भूमि में आनेवाले सारंग नामक गॉव में आ पहुँचे । यह सारंग गॉव में पूर्व के अति संस्कारी और भोले हृदय के एक किसान को रामानंद स्वामी मिलते हैं । जिसका नाम है रामदास पटेल । यह निर्दोष और निश्वार्थ किसान के सामने रामानंद स्वामी प्रेमभाव से थोडी देर देखते रहे फिर स्वामी के मुख में से सहज शब्दों निकल पडते है कि; ''अरे..... भोले इंसान ! इस तरह किसानी का काम कब तक करते रहेंगे ? भगवान का नामस्मरण नहीं लेंगे तो ऐसा काम तो जन्मोजन्म करने का ही है न ! यह कहाँ खत्म होते हैं ?'' रामानंद स्वामी के यह शब्दों से रामदास पटेल का हृदय परिवर्तन हो जाता है । और यह पूर्व के मुमुक्षु रामदास पटेल तुरन्त ही बैलो की नाल को फैंक कर..... रामानंद स्वामी के साथ निकल पडते हैं ।

इसलिए रामानंद स्वामी हर्षसभर साहश्चर्य से कहते हैं; '' शाबाश .....भक्त ! शाबाश ! अब ! यह बैलोंको तो घर पर छोडकर आईए ।'' लेकिन जिन्होंने अब यह संसार को ही क्षणभर में असार जान लिया हो..... यह अब क्या घर जायेंगे ? रामदास पटेल घर पर न गये फिर न ही गये और रामानंद स्वामी को कहने लगे कि; ''स्वामी ! संसार व्यवहार ऐसा है कि किसी के बगैर (बिना) कोई काम रूकता नहीं । '' रामदास पटेल की ऐसी तर्कसभर बानी

सूनकर स्वामीजी अत्यंत खुश हो गए ।

रामानंद स्वामी अपने यह भाग्यशाली शिष्य को साथ लेकर द्वारका की ओर चल पडे ! आज स्वामी का हर्षोल्लास रूककर भी नही रूकता, क्योंकि रामानंद स्वामी को रामदास मिल गये ! राम के आनंद से आनंद में रहना रामानंद को राम का दास रामदास मिल गया । अब तो हर्षावधि सीमापार सर हो गई ! सहज भाव से प्राप्त हुए यह शिष्य की परिपकवदशा को देखकर रामानंद स्वामीने यह किसान के लिए रामदासको आज महादीक्षा देकर और नामाभिधान किया 'रामदासजी स्वामी' ।

उसके बाद 'समकोष्टाश्मकाश्चन': ऐसे सभी संत गुणों से संपन्न रामानंद स्वामी यह प्राणप्यारे शिष्य के साथ सिद्धपुर की यात्रा पर चल पडे ।

१.१२ दैवीपुत्रको दीक्षा

उद्धवावतार रामानंद स्वामी अपने शिष्य स्वामी रामदासजी के साथ देवालयों और देवताओं के दर्शन करते-करते सिद्धपुर आते हैं । रास्तें में मिले मुमुक्षुजनों को दीक्षा देकर रामानंद स्वामीने उनकी सहतुक यात्राको सार्थक कर ली ! उसका यह विचरण अनेक भक्तो को उद्धव, संम्प्रदाय के नीव की ईट बनने आह्वान करता है । केवल उदरपूर्ति के लिए ही यह लघु आहार करनेवाले श्री रामानंद स्वामी अब तो सिद्धपुर में भी मुमुक्षुजनों को उपदेश देकर, भागवती दीक्षा देते थे । इस तरह गुरू-शिष्य सम्प्रदाय की पृष्टि अर्थे -अविरतपूर्ण विचरते थे ।

इस समय के बीच में रामानंद स्वामी के योग में एक देवीपुत्र चारण युवान आता है । यह नवयुवान पुत्र के पिता रलिया गढवी थे । यह रलिया गढवी का पुत्र स्वामीश्री के समागम से संसार सुखसे

उदासिन हो गये थे । यह त्यागी बनने की ईच्छावाले युवानने सद् रामानंद स्वामी को प्रार्थना करते हुए कहा कि; ''स्वामी ! मुझे यह असार संसार में मुक्तकर आपका शिष्य बनाईये न !'' इस युवानने प्रार्थना ऐसी मर्मभेदी शब्दों से व्यक्त की कि रामानंद स्वामी पीघल गये । और प्रसन्न हुए गुरूदेवने यह देवीपुत्र को दीक्षा देकर 'रघुनाथदास' ऐसा नाम दिया ज्ञाति-धर्मके संस्कार की तरह बाणी में भी कौशल्यसभर यह रघुनाथदास को स्वामी उसके साथ रखकर दैवी जीवो को उपदेश देने की मार्गदर्शन भी करने लगे ।

इस प्रकार दोनों त्यागी शिष्यों के साथ रामानंद स्वामी विचरन करते करते शरण में आये हुए जीवात्माओं को संसार के बंधन से मुक्तकर मोक्षपथ का मार्गदर्शन देने लगे । अतः, अब रामानंद स्वामी का शिष्यमंडळ वृद्धि करने लगा ।

१.१३ मुकुंददास मुक्तानंद बने

अब हम 'सत्संग की माँ - ऐसे मुक्तानंद स्वामी के जीवन-कवन समझकर सद्भागी होंगे ।

सौराष्ट्र में एक अमरेली नामक गाँव है । यह अमरेली गाँव में मूलदास नामक एक त्यागी साधुका आश्रम है । यह आश्रममें संत मूलदास के पास अनेक भक्तों ज्ञानोपदेश प्राप्त करते हैं । एकदिन यह साधु शिष्योंको ज्ञानोपदेश दे रहे थे । तब इसी समय एक स्त्री आश्रम के कुऐं के पास आकर कुएमें गिरकर आत्महत्या करने के लिए तैयार हो गई । तब यह करूणामय संत मूलदास तुतरन्त ही दौडकर यह आत्महत्या करने को तैयार हुई स्त्री कुकर्मो से कलंकित है । और अब उसके यह कुकर्म प्रकट होने से पहले वह मरने के लिए तैयार हुई है । तब यह संत मूलदास उस स्त्रीको बचाने के लिए यह कलंक अपने सिर पर ले लेते हैं और वह स्त्री की रक्षा करते हैं । यह स्त्री यानि

'रतन' ! संत मूलदास अब यह रतन को उनकी पालक पुत्री(बेटी) की तरह उनका पालन-पोषण करते हैं । कुछ समय बाद यह रतन एक पुत्री को जन्म देती है । उसका नाम 'राधा' रखा जाता है । यही राधाकी शादी मूलदास ने अमरापर के आनंदराय नामक ब्राह्मण के साथ करवा दी । यह राधा और आनंदरायके वहाँ सन् १८१४ में एक पुत्ररत्न का जन्म होता है । इस बालक का नाम रखा है-मुकुंददास ।

यह पूर्वजन्म का भक्तराज मुकुंददास अब बडा हो गया है । इसलिए ब्रह्मचर्यव्रत सिद्ध करने के लिए कोई अच्छे गुरू की शोध कर ने लगे । हाल ही यह मुकुंददास १३ वर्ष की उम्र पहुँचे है और ऐसे शुभ संकल्पो शुरू हो गये है..... इतने मे उनके माता-पिताने मुकुंददास को शादी के बंधन से बाँध दिये ! अरे.... कहाँ यह पूर्व के भक्त का शुभ संकल्प ! और कहाँ यह शादी के बन्धन से प्राप्त हुई प्राप्ति !! अब तो यह मुकुंददासने संसारसे विरक्त रहने का दृढ निश्चय ही कर लिया । और फिर यह युवानने पागलपन शुरू किया । अरे..... पूरे गाँव के लोगों और स्वयं माता पिता भी उब जाए ऐसी क्रिया करने लगे । यह महामुक्त मुकुंददास ! अब यह मुकुंददास हाथ में रह सकते हैं कया ? अरे..... यह मुकुंद का दास अब क्या संसार का दास बन सकेगा ? अब तो यह मुकुंददास के मार्मिक तूफानो से समस्त ग्रामजनों या माता-पिता को भी तुरन्त अभाव आ जाता है ! तब ठीक यही समय मुकुंददास गृहत्याग कर सद्गुरू की शोधमें निकल पडे । मात-पिता या ग्रामजनों को तो ऐसा अभाव आ गया कि कोई उसको फिर से बुलाने के लिए भी नहीं आनेवाले थे । इसलिए ही ..... यह पल धन्य बन गए..... मुकुंददास के लिए !

फिर तो अमरापरसे निकले हुए यह अलौकिक युवान ध्रांगध्रा आ पहुँचे । यह ध्रांगध्रा में द्वारकादास नामक एक संत रहते थे । मुकुंददास ने यह संत को मिलकर अखंड ब्रह्मचर्य ब्रत के पालन के

बारे में उपदेश देने की बिनती की । तब संत द्वारकादासने कहा कि; ''ऐसे गुरू तो आपको वाकानेर में मिलेंगे । उसका नाम है कल्याणदास ।'' यह बात सूनकर मुकुंददास तो तुरन्त ही वाकानेर जाकर गुरू कल्याणदास को मिलते हैं । तालेवाली पितलकी कौपीन पहनेवाले कल्याणदास को मुकुंददासने काम को जीतनेका उपाय पूछा । तब यह कौपीनधारी वैरागीने कहा कि; ''मैं अब चालीस वर्ष बाद भी स्त्री के हाथ का इशारा भूल नहीं पाया..... मुकुंददास ! तुम मार्ग भूला है ..... कलयुगमें काम को जितना बहुत मुश्किल है । भगवान अथवा तो भगवान को मिले हुए संत आपको मिले तो ही काम को जीत सकते हो । '' कल्याणदास के ऐसे बचन सुनकर निराश हुए मुकुंददास गुरू शोध में आगे जाने को तैयार हुए तब कल्याणदासने सरधार जाने का संकेत दिया ।

अब मुकुंददास सरधार आते हैं । वहाँ रामजी मंदिर में पवित्र महंत थे तुलसीदास । मुकुंददासने तुलसीदास के पास आकर शिष्यभाव से नमस्कार करके शरण को स्वीकार किया । तब तुलसीदास भी ऐसे तेजस्वी शिष्य को पाकर अत्यंत खुश हो गये । शिष्य विहीन तुलसीदास ने यह शांत-स्वभावी शिष्य को पाकर धन्यता का अनुभव किया ! कुछ समय बाद यह कार्य कुशल शिष्यमें सर्वसंपन्न सद्‌गुण को देखकर गुरूने अपनी गादी यह मुकुंददास को सोंपकर कमरे और पिटारी की चाबीयाँ भी दे दी । सरधारमें चल रहे सदाव्रत का पूर्ण उत्तरदायित्व संतुष्ट हुए । मुकुंददासजी ने स्वस्थचित एवं दास्यभाव से स्वीकार लिया । प्रभु-भजन और कथा-बार्ता की भी शुरूआत कर दी । सुबह-शाम मुकुंददासके मुखसे पवित्र कथा-श्रवण करते दर्शानार्थी अति आनंद का अनुभव करने लगे..... और दिन-प्रतिदिन वह दर्शनार्थीओं की संख्या में वृद्धि होने लगी । परिणाम स्वरूप गुरूजी भी प्रसन्न हुए ।

ठीक इसी समय उद्धवावतार रामानंद स्वामी भी उसके

शिष्यमंडल के साथ गुजरात, कच्छ, काठियावाड, सोरठ, झालावड, हालार, वाळाक, नाघेर और भाल आदि विस्तारमें विचरण करते करते धर्मस्थापना का भी कार्य करते थे । अतः रामानंद स्वामी के शिष्योंकी वृद्धि सभी गाँवों में बढने लगी । आजानबाहु ऐसे सद्‌गुरू रामानंद स्वामीके दर्शन मात्र से सभी को शांति मिलती थी ! इसलिए स्वामी के दर्शन करके अनेक विषयानंदी जीवात्माओं रामके आनंद रामानंदी बन गये । इस तरह.... सभी को शांति प्रदान करते - करते रामानंद स्वामी भी सरधार पहुँच गए । सरधारमें रामानंद स्वामी के विश्वासपात्र भक्तोंने स्वामी को उतरने के लिए (निवास करने के लिए) छोटा सा कमरा बनाया था । वहाँ स्वामीजीने निवास किया । यह स्थान पर ही प्रतिदिन रात के समय देर तक कथा-बार्ता होती थी । इस तरह सरधार में अनेक मुमुक्षुओं रामानंद स्वामीकी अमृतवाणी का लाभ लेने जाने लगे । परिणाम स्वरूप रामजी मंदिर में आनेवाले दर्शनार्थीओं की संख्या कम होने लगी ।

इसलिए सरधार के रामजी मंदिर में सेवारत हुए मुकुंददासने एक सेवकको पूछा कि; ''आज कल यही मंदिर में आनेवाले दर्शानार्थीओं की संख्या क्यो कम होने लगी है ?'' तब यह सेवक ने कहा कि; '' रामानंद स्वामी के कुछ शिष्यों यहाँ रहते हैं । रामानंद स्वामी को सेवा-समागम अर्थे उन्होंने रामानंद स्वामी को यहाँ रोक रखा है । इसलिए रामानंद स्वामी भी यह मुमुक्षुजनों के हृदय को पकडकर जगत मिथ्या और विषय खण्डन की बात करके भगवान के महिमा की बाते करते हैं । उसकी यह बात सूनकर यहां के भकत अति प्रभावित हो गये है । इसलिए सभी भक्तों शामकी सभा में वहाँ जाते हैं । परिणामे यहाँ हमारी सभामें भक्तों दिखाई नहीं देते ।'' यह बात सूनकर मुकुंददासने शाम की सभा को तुरंत ही खत्म करके स्वयंभी चूपके से रामानंद स्वामी की सभामें गए । रामानंद स्वामी

के दर्शन करके और उसकी अमृतवाणी सूनकर मुकुंददास आनंद विभोर हो गए ।

मुकुंददासके जीवन में स्वामीश्रीकी यह पराबानी दिव्य स्वरूप दिप उंठी और अलौकिक शांति हो गई । कुछ देर रात को सभा पूरी होने के बाद मुकुंददासने शरणार्थी भाव से स्वामीश्री का चरण स्पर्श किया; वंदन करके दीनभाव से बोल उठे कि; ''स्वामी ! मुझे आपके शिष्य के रूप में स्वीकारने की कृपा किजीए । मैं आपका शरणागत हूँ ।'' उद्धवावतार रामानंद स्वामी यह शरणागत संत के दीन बचनों को सूनकर अत्यंत ही प्रसन्न होते है और कहते हैं कि; मुकुंददास ! हम आपकी दीनतासभर शरणागतता की स्वीकार करते हैं । हमारे शिष्य के रूप में हम आपको हर्षसम आवकार्य करते हैं..... परंतु उसके पहले आपको आपके गुरू-महंतका लिखा हुआ पत्र लाना आवश्यक है ।''

गुरूदेवका यह कथन सूनकर मुकुंददास के मुख पर प्रसन्नता और गमगीनता की रेखाएँ छा गई । प्रसन्नता इसलिए थी कि समर्थ स्वामीने शिष्य के रूप में स्वीकारने की 'हा' कही और उदासीन इसके लिए कि गुरू तुलसीदास के पास लिखा अनुमति का पत्र लिखाने का था । मुकुंददास जानते थे कि गुरू के पास से अनुमति लेने के लिए संकट तो आनेवाला ही है । इसलिए मुकुंददासने युक्ति करके उसका व्यवहार बदलकर महंत गुरूदेव को नापसंद ऐसा आचरण और व्यवहारिक अनभिज्ञता व्यक्त करने के कारण गुरूदेवने पूछा कि-'' मुकुंददास ऐसा व्यवहार कयों हो गया ? '' तब तर्कपूर्वक उत्तर देते हुए मुकुंददासने कहा किं; ''गुरूदेव ! मेरा कोई ठिकाना नहीं । छह मास अच्छा होता और छह मास पागल रहता हूँ । जब पागल -सा होता हूँ तब मै तो न करने का काम कर देता हूँ ।

मुकुंददास के यह शब्द सूनकर तुलसीदासने निश्चय कर

लिया है कि; ..... अब इस संत को यहाँ रखना न चाहिए इसलिए पागल व्यवहार करते रहेंगे तो भंडार खत्म हो जायेंगे । इसलिए उसने मुकुंददास को आश्रममे से छुट्ठी देकर अनुमति का पत्र दिया । मुकुंददास भी खुश हो गयेा यह इजाजत का पत्र लेकर रामानंद स्वामी कें पास जाने के लिए मुकुंददास अधिरा हो गया । किन्तु यह परवानगी पत्र प्राप्त किया तब तो रामानंद स्वामी सरधार से बंधिया जाने के लिए बिदा हो गये थे । इसलिए मकुंददास भी बंधिया आ गए । बंधिया आकर वह गुरूदेव के चरण में ढल पडे । और अनुमति का पत्र व्यक्त किया । तब गुरूदेव रामानंद स्वामी अत्यंत ही प्रसन्न हो गए । लेकिन यह सयाने शिष्य की परीक्षा करने के लिए गुरूदेव रामानंद स्वामीने आज्ञा की कि; ''मुकुंददास अब बंधिया दरबार मूळुभाई के खेत में हल चलाना । '' कैसी परीक्षा हुई ! और गुरूदेव भी कैसे है ! जिस गुरूदेवने रामदास को हल छोडने को कहा और त्यागी भी बनाया उसी ही गुरूदेवने मुकुंददास त्यागी को हल के साथ जोड दिया ! मुकुंददास ने भी गुरूवाक्यको वेद वाक्य है ऐसा मानकर मूलुभाई दरबार के खेत में हल चलाने लगे । गुरूवचन सिद्ध करके सच्चे शिष्य बनने का हुलास था । यह मुकुंददासने ! अपनी सभी क्रियाओंमें से नया भाव प्रकट होता था -- गुरू के हाथों बिकने से ! उनकी शुद्ध मुमुक्षुतामें शक्ति झर रही थी-सत्य की शोध में । उनकी सेवा भक्तिमें से दर्शन होते थे - गुरूदेवकी प्रसन्नता प्राप्त करने से !

इस तरह गुरूवचन से अथाग सेवा करते हुए मुकुंददास को देखकर खेत के मालिक दरबार मूलुभाई को लगा कि; ''यह त्यागी मुकुंददास तो अनेक जीवों के उद्धारार्थे उपदेशरूपी हल चलानेवाले ही है । उसको अब यह काम नहीं करने देना ।'' इसलिए दरबार मूलुभाईने तुरन्त ही रामानंद स्वामी के पास जाकर अपना संकल्प

व्यक्त किया । इसलिए उद्धवावतार रामानंद स्वामी भी प्रसन्न होकर यह आज्ञांकिंत मुकुंददास को अपने पास बुलाकर कहा कि; '' शाबाश ! मुकुंददास ! अब आपकी कौन सी इच्छा है? तब मुकुंददासने नम्रतासे झुकी हुई दृष्टि से कहा कि; '' दीक्षा लेने की !'' रामानंद स्वामी मुकुंददास के पूर्वाश्रमसे परिचित थे । इससे कहा कि; '' आपको त्यागी-दीक्षा लेनी हो तो अब आपकी पत्नी की अनुमति लेकर आइए ।''

गुरूदेव की आज्ञा के साथ ही मुकुंददास अब अमरापर आते हैं । अपनी पत्नी के पास हंमेशा से दूर हो जाने की अनुमति लेने का काम कठिन था । फिर भी हिम्मत रखकर, गुरूदर्शन के अलौकिक आनंद को आगे रखकर घर वापस चले । तब माता-पिता तथा धर्मपत्नी भी खुश हो गई । मुकुंददासने भी पहले दिन तो मौन रहकर सभी परिस्थितिको जान लिया । फिर दूसरे दिन को शोधकर पुराना पागलपन शुरू कर दिया । ऐसा पागलपन शुरू किया कि पूरे अमरापुर में चिंता की रेखा फैल गई । जैसे-तैसे और ज्यों-त्यों टूटे हुए कपडे पहनकर, एक के घर की चीजों को दूसरे के वहाँ रखकर-पूरे गाँवमें पागल की तरह इधर उधर घूमते हुए बोलने लगे कि; '' राम कटकट महुए तोडा, राम कटकट महुए तोडा ।'' ऐसा पागल सा व्यवहार करके पूरे गाँव को अशांत कर दिया । इस तरह परेशान हुए गाँव के लोग कहने लगे कि;'अब तो उब गए है । यह मुकुंददास को संसारमें रहना ही नहीं तो फिर जाने दो न ! तब मुकुंददासका मित्र मुकुंदकी यह सभी लीलाके पीछे का रहस्य पहचान जाता है । उसने एकांत में मुकुंददास के पास उसकी अपेक्षा के बारे में पूछ लिया । तब मुकुंददास ने भी अपने त्यागी होने की अपेक्षा बताकर अपनी पत्नी के पास से अनुमति की चिट्ठी प्राप्त करने की बात की । यह संकट समय में मुकुंददास का मित्र उसे सहायक बनने के लिए तैयार

होता है..... और अनुमति की चिट्ठी लिखाकर मुकुंददास को दे दी । तब मुकुंददासने तो मानो कोई सम्पति का दस्तावेज मिल गया हो उस तरह यह अनुमति पत्र को प्राप्तकर हर्षान्वित हो गये ।

इस तरह हर्षित हुए मुकुंददास गुरूदेव रामानंद के पास आए गुरूदेव को प्रणाम करके अनुमतिपत्र पेश करके, प्रार्थना करने लगे कि; '' गुरूदेव ! कुपयाँ कर मुझे भागवती दीक्षा देकर आपका शिष्य बनाईए !'' उद्धवावतार रामानंद स्वामी ने भी आज अत्यंत ही आनंद के साथ मुकुंददासको आलिंगनकर भागवती दीक्षा प्रदान की । यह सुनहरा दिन सन् १८४२ की माह सुद पंचमका था । यह वसंतपंचमी के दिन मुकुंददास के लिए बसंत खील उठी । इस तरह अठाईस साल के मुकुंददासने आज भागवती दीक्षा प्राप्त कर मुकुंददासमे से मुक्तानंद बन गये । आज उद्धवावतार रामानंद स्वामीने मुकुंददास को मुक्तानंद के नाम दीक्षा जन्म देकर सत्संगकी 'माँ' की कमी को पूर्ण किया ।

समयांतरे रामानंद स्वामीने मुक्तानंद स्वामी को दूसरे संतो के साथ भूज में पढाई करने भेजे । सत्संगकी संपूर्ण नीति-मर्यादा को पहचानकर मुक्तानंद स्वामी सर्वगुन संपन्न संतो में रहकर संस्कृत भाषाके अभ्यास में लीन हो गए । दूसरे अनेक संतो भी पढाईमें साथ थे..... लेकिन इन सब संतो में मुक्तानंद स्वामी तो सर्वोच्च स्थान पहुँच गए थे । विधाभ्यास बाद उसने संस्कृत भाषामें ब्रह्मसूत्र भाष्य जैसे पाँच ग्रंथो लिखे और प्राकृत भाषा में 'सतीगीता' जैसे अठारह ग्रंथो की रचना कर सम्प्रदाय में साहित्य सर्जनकी शुरूआत कर दी । इसके अतिरिक्त धर्म, ज्ञान, वैराग्य और भक्तिका बोध देकर एक हजार कीर्तन को रचकर साम्प्रदायिक साहित्य सृष्टि को सुदृढ कीया ।

इस तरह साम्प्रदायिक साहित्य सृष्टि का प्रथम रचयिता

स्वामी मुक्तानंदजीने अब गुरूदेव रामानंद स्वामी की सेवा भी उसकी अनुवृत्तिमें रहकर करने लगे। अब तो रातदिन स्वामीश्री की सेवा समागम का (फायदा) लाभ लेने लगे। साथ ही, पूरे मंडलका सभी प्रकारका सेवाकार्य मुक्तानंद स्वामीने अब उठा लिया है। इसलिए प्रसन्न हुए उद्धवावतार गुरूदेव रामानंद स्वामीने सभी शिष्यो में मुक्तानंद स्वामी को मुख्य रखा। मुक्तानंद स्वामी भी गुरू की इच्छानुसार प्रत्येक कार्य उसकी प्रसन्नतार्थे ही करने लगे। अतः गुरूदेवने भी प्रसन्नता दिखाकर आशीर्वाद देते हुए कहा कि; '' मुक्तमुनिवर! आप सत्संग की सेवा ज्यादा ही कर सकेंगे। सदाचारीओं में आप सिरमौर (ताज) रहेंगे। तुम्हारी बातें सभी के हृदय में चैतन्य पूरा करेंगे। हम आपकी सेवा-भक्ति से बहुत प्रसन्न हुए है।''

गुरूदेव की कृपासे मुक्तानंद स्वामी गुरूदेव के चरन कमल छुकर धन्य बन गए। अब तो मुक्तानंद स्वामी गुरूदेव रामानंद स्वामी को ही ईश्वर का अवतार मानकर उसके महिमाँ(महात्मकी) की बाते करने लगे । ईस तरह उद्धवावतार रामानंद स्वामी के महात्म्य का प्रचार और प्रसार करके मुक्तानंद स्वामी सत्संगमें कुछ निराला सुख प्राप्तकर प्रथम सत्संग सेवक बनकर..... धन्यता का अनुभव करने लगे। ऐसे मुकुंददास में से मुक्तानंद बने हुए मुक्तानंद स्वामी मुक्त मन से दिव्य सुखानुभूति का अनुभव करने लगे. ।

१.१४ स्वामीश्री का शिष्यमंडळ

उद्धवावतार श्री रामानंद स्वामी का शिष्यमंडळ का अब विकास होने लगा था। मुमक्षु - दैवी जिवात्माएँ तो सिर्फ स्वामीश्री के वचनो को सुनकर ही, जिस प्रकार लोहा चुंबक से आकर्षित होता है उस तरह सब आकर्षित हुए। अरे! कितने तो स्वामीजी के शरण मे अपना पुरा जीवन समर्पीत करके, सदा के लिए सुख पाकर

त्यागी जीवन को ग्रहण कर लिया। ऐसे रामानंद स्वामी के शिष्यो का नामवली इस तरह है।

रामदास स्वामी, स्वामी रघुनाथदास, मुक्तानंद स्वामी, भायात्मानंद स्वामी, सन्यासी देवानंद, सेवानंद स्वामी, श्रीधरानंद स्वामी, मुकुंदवर्णी, आनंद मुनि, स्वयंप्रकासानंद स्वामी, चिद्गुपानंद स्वामी, व्रजवासी भजनानंद स्वामी, निवृतानंद स्वामी, सांख्यानंद स्वामी, व्रजानंद स्वामी, अष्टवक्रानंद स्वामी, सुखानंद स्वामी, निरंजनानंद स्वामी, गोविंदानंद स्वामी, स्वरूपानंद स्वामी, सज्जनानंद स्वामी, सत्यानंद स्वामी, उजासानंद स्वामी, कल्याणानंद स्वामी, भार्गेश्वरानंद स्वामी, श्रीगुरूचरणरतानंद स्वामी, आदि पचास जितने त्यागी शिष्य स्वामी के शिष्य मंडल में थे। इसके अलावा हजारो गृहस्थ भक्तो भी स्वामी श्री का शिष्यत्व स्वीकार करके सेवारत बने हुए थे। ऐसा प्रभाव पडा था। उद्धवावतार रामानंद स्वामी का समस्त सत्संग समाज पर।

१.१५ सत्संग के रंग में रंगे हुए गाँवो

सद्गुरू रामानंद स्वामीने ऐसे समर्थ शिष्यों के साथ विचरण करते करते समग्र गुजरात राज्य के अनेको गाँवो में सत्संग स्थापित कर दिया। इस गाँव के नाम इस तरह है।

गुजरात के वडनगर, विसनगर, प्रांतिज, मेउ, उंजा, नारदीपुर, कडी, श्रीनगर, वहेलाल, कणभा, गामडी, जेतलपुर, चलोडा, वींछीया, मछियाव, ददुका और देवालिया आदि गाँव मे रामानंद स्वामीने सत्संग का पोषण करके मुमुक्षुजनो को मोक्षपथ दिया है।

कच्छ, काठियावाड और सोरठ के फरेणी, धोराजी, सांकली, भाडेर, मेघपुर, आखा, पीपलाणा, अगतराय, जेतलसर, जेतपुर, गोंडल, बंधिया, सरधार, कोटडा, कारियाणी, कालवाणी, मांगरोल,

लोज, माणावदर, राजकोट, अलैया, मोडा, शेखपाट, भादरा, जोडीया, मांडवी, भूज, तेरा, अंजार, धमडका, आधोई, आदि गाँवो मे सत्संग कराते कराते उद्धवावतार रामानंद स्वामीने झालावाड प्रदेश में मेथाण और मेमका मे भी सत्संग कराकर बहुत सत्संग प्रचार और प्रसार करके मुमुक्षु शरणागत जीवों को प्रभुपथ का पाथेय पुरा किया ।

१.१६ स्वामी स्थापित सदाव्रत

उद्धवावतार रामानंद स्वामी की साधुता एवं ऐश्वर्य प्रभाव से हजारो मुमुक्षुजन आकर्षित हुए थे । जिसमे सद्गुरू रामानंद स्वामी का शिष्यमंडळ अधिक कार्यरत बनकर भक्तजन के लिए मोक्षपथ बताते थे । उसमें भी सद्गुरू मुक्तानंद स्वामी तो स्वामीश्री की आज्ञा में पुरी तरह सेवारत हुए थे । इस तरह शिष्यमंडळ की ऐसी भक्तिभावना से भव्य स्थान पाकर रामानंद स्वामी अद्वितीय सद्गुरू मनाने लगे ।

रामानंद स्वामीने जीवो के कल्याण के लिए और अेक नया संकल्प किया । वो संकल्प था – जगह–जगह सदाव्रत बनाकर संतो के जरिए अन्नदान के साथ संस्कार दान देकर जीवो का श्रेय करना । इस संकल्प निश्चय को साकार करने के लिए कई गाँवो में सदाव्रतो का प्रारंभ किया । यह शुरू हुए सदाव्रत अपने अनन्य शिष्यों के घर चलते थे या तो दुसरे स्थान पर चलते थे । वह सदाव्रत संतो के द्वारा या गृहस्थ शिष्यों के द्वारा अन्नार्थीओ को अन्नदान दिया जाता था । ऐसे यह अलौकिक सदाव्रत जहाँ चलते थे वो पवित्र गाँवो के नाम इस तरह है ।

फरेणी, धोराजी, सांकळी, भाडेर, जामवाली, पीपलाणा, माणावदर, अगतराय, लोज, मांगरोळ, जेतपुर, सरधार, नवानगर, कोटडा, गढडा, कारियाणी, माणेकवाला, मेथाण, जेतलपुर, अमदावाद, आदि स्थानो में सदाव्रत शुरू हुए । फरेणी मे वेलाभाई

सोनी के घर ही सदाव्रत शुरू हुआ था । जो स्थल पर अभी व्रजानंद स्वामी के पास गुणातीतानंद स्वामी के द्वारा बनाया हुआ पुराना मंदिर है ।

इस वेलाभाई सोनी भी सद्गुरू रामानंद स्वामी के अनन्य शिष्य थे । यह सदाव्रत स्थापित करने के पीछे सद्गुरू रामानंद स्वामी का हेतु था कि शरणागत जीवों का कल्याण हो । ऐसे परमार्थी संतो के परमादर्श को कौन जान सकता है ?

१.१७ फरेणी में कष्टभंजन देव की प्रतिष्ठा

सत्पुरूष का अंतःकरण मखखन की तरह कोमल होता है । जिससे वो दुसरे की पीडा (दुःख) को सह नहीं सकता जिस तरह अग्नि के योग से घी पीघल जाता है उस तरह सत्पुरूष भी दुसरो के दुःख से नित्य पीघल जाते है । सरसव पुष्प और कमल से भी सत्पुरूष कोमल होते है । सद् उद्धवावतार रामानंद स्वामी भी ऐसे ही कोमल थे । वृंदावनविहारी के आशीर्वाद से स्वामी सोरठ आये । रामानंद स्वामी ने कच्छ, काठियावाड, गुजरात और सोरठ को अपनी कर्मभूमि बनायी । सद्. रामानंद स्वामी के सत्संग विचरण के गाँव और उसने स्थापित किए हुए सदाव्रतो के बारेमें हमने जाना । सोरठ प्रदेश के भक्त सद्. रामानंद स्वामी के कृपापात्र थे । ....अरे ! कितने भक्त निरावरण स्थिति में प्रभु सुख लेते थे । कुछ भक्त तो सिद्धदशावाले भी थे । और दुसरे कितने भक्त अभी साधनदशा में थे । जो संसार के कष्ट से पिडा रहे थे । दुःखी हो रहे थे जब ऐसे भक्त सद्. स्वामी के शरणागत बनकर कष्टो से मुक्ति पाते थे । लेकीन उद्धवावतार सद्. रामानंद स्वामी ज्यादातर देश-विदेश में घुमकर सत्संग विचरण करते थे । अब यह सब आश्रित सद्. स्वामीश्री के पास अपनी कष्ट कथनी को कह सकते नही । पू. स्वामीश्री भी यह

सबकुछ जानते थे । अत एव उसने सोचा कि; ''अब मेरा शरीर वृद्ध हुआ है । अब इस शरीर का कोई भरोषा नही है मेरे अंतर्धान होने के बाद मेरे आश्रीतो के कष्ट मिटाने के लिए यहाँ फरेणी में कष्टभंजन देव की स्थापना करुं ।'' ऐसे शुभ संकल्प से पू.स्वामीश्रीने सुंदर शिला में एक शिल्पि के द्वारा कष्टभंजनदेव हनुमानजी महाराज की मूर्ति बनवाई । वेदज्ञ ब्राह्मणो के पास मूतिप्रतिष्ठा का शुभ मुहूर्त निकलवाया । शुभ मुहुर्त आया चैत्र सुदि पूनम का । स्वामीश्रीने मूर्तिप्रतिष्ठा की निमंत्रण पत्रिकाए देश-देशांतरो में भेज दी । वेदज्ञ ब्राह्मणोने वेदोक्त विधि से प्रतिष्ठा कार्य कराया । इस प्रतिष्ठा महोत्सव में हजारो भक्त तन, मन एवम धन से सेवा करने के लिए तैयार हुए । कितने भक्त यज्ञ में यजमान बनने के लिए तत्पर हुए । यह मूर्ति प्रतिष्ठा महोत्सव में हजारों भक्त दर्शन - सेवा और कथा सुनने के लिए उपस्थित हो गये । और यह महा महोत्सव धाम धुम से शुरू हुआ । पुरा फरेणी गाँव आज आसोपालव और आम के बंदनवार से शुसोभित से फरेणी गाँव की फोरम (खुश्बु) कुछ अलग ही थी । आज चैत्र सुदि पूर्णिमा के संगवकाल के शुभ मुहुर्त मे उद्धवावतार सद्‌गुरू रामानंद स्वामी के पवित्र कर कमलो से प्राण प्रतिष्ठा की गयी । तब जय घोष से आसमान गुंज उठा-और सद्‌गुरू रामानंद स्वामीने कष्ट भंजन देव की, आरती उतार करके मेषोन्मेषे रहीत बनके कष्टभंजन देव की सन्मुख देखते रहे । तब सभी भक्त दिव्य प्रकाश की दिव्यता का अनुभव करने लगे और सब धन्य हो गये । भक्तो को महेसुस हुआ कि कष्ट भंजन देव साक्षात् बिराजित हो चूके है । - और सभी को अलौकिक सुख देते हैं । आनंदित होकर सभी भक्तजन नाचने लगे । इस तरह यह महोत्सव बहुत ही अलौकिक हर्ष के साथ पूर्ण हुआ ।

उसके बाद रामानंद स्वामीने विशाळ सभा में सुंदर सिहासन

में राधा-कृष्ण की मूर्ति प्रस्थापित की और स्वयं सभामें बिराजीत हुए तब मुक्तानंद स्वामी एवं स्वामी रामदासजी आदि संतोने सभा को प्रसंगोचित उपदेशामृत से सभी को हर्षित कर दिया । उद्धवावतार सद्‌गुरू रामानंद स्वामीने सभी को आशीर्वाद देते हुए कहा कि; ''यह कष्टभंजन देव के जो भी दर्शन करेंगे उनके कष्टो नष्ट होंगे और सभी तरह के सुखों की प्राप्ती होगी । यह कष्टभंजन देव की सेवा करनेवाले को अनेक गुना फल मिलेगा । यह देव के दर्शन करनेवाले भक्तो पैदल चलकर आयेंगे उनको अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होगा । धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चतुर्थ फल की प्राप्ती होगी । विधार्थी दर्शन करके विधा की प्राप्ती करेंगे । धनार्थी धन की प्राप्ती करेंगे । पुत्रार्थी पुत्र की प्राप्ती करेंगे । ऐसे दिव्य आशीर्वाद के द्वारा रामानंद स्वामीने भक्तो को आनंदित कर दिया ।

ऐसे कृपा वर्षा से भक्तजनो के पाप को नाश करके रामानंद स्वामी ने सभी को) कर दिया । सभी को सनाथ करके निर्भय कर दिया । इस तरह निस्पाप प्राणप्रतिष्ठा महोत्सव संपन्न हुआ । अन्नार्थीओ को अन्न से तृप्त किया । पुरे गाँव को महाप्रसाद खिलाकर फरेणी गाँव को महेकता हुआ बना दिया । देशदेशांतरो से आये हुए हजारो भक्तजनो कष्टभंजन देव के दर्शन करने का व्रत लेकर अपने अपने गाँव पहुंचे । इस तरह यह कष्टभंजन देव का प्रतिष्ठा महोत्सव अति धाम धूम के साथ संपन्न कराते सद्‌गुरू रामानंद स्वामीने सभी को तृप्त कर दिया ।

२

प्रकरण

नीलकंठ–स्मृति

२.१ धर्म – भक्ति

भगवान श्री राम की जन्मभूमि अयोध्या के समीप प्रदेश को सरवार देश के नामसे सब जानते हैं । इस प्रदेश की देवसरिता नाम की नदी के तट के पास इटार नाम का अच्छा गाँव हैं । इस सरवार देश के इटार नाम के गाँव में सरवरिया ब्राह्मण रहते हैं । सरवार देश के है इसलिए सखरिया ब्राह्मण; इस गाँव में सरवरिया ब्राह्मण के तेरह घर थे । इस कुटूंबो–परिवार मे इटार के पाण्ड कन्हैयाराम नाम के अति पवित्र और धर्मनिष्ठ ब्राह्मण रहते थे । इस कन्हैयाराम को बालशर्मा नाम का एक पुत्र था । इस बालशर्मा को भाग्यवती नामकी पतिव्रता पत्नी थी । इस पवित्र दंपत्ति को संवत १७९६ की कारतक सुदि–एकादशी के पवित्र दिन को एक पुत्र का जन्म हुआ । ज्योतिषीओं ने इस पवित्र पुत्र के सर्वे सुलक्षणो को देखकर उसका नाम हरिप्रसाद – देवशर्मा रखने को कहा । और कहा कि; ए तो साक्षात् धर्म ही मूर्तिमान प्रगट हुए हो ऐसा प्रकाश फैल गया । इसलिए वह धर्मदेव के नाम से विख्यात होंगे । इस बालक को देवशर्मा सब नर–नारियाँ धर्मदेव के नाम से ही जानने लगे । शुकल पक्ष का चन्द्र जिस तरह वृद्धि होता हैं वेसे ही यह बालक देवशर्मा के माता–पिता और परिवार के लोगो के

लाड–प्यार से वृध्धि होने लगे । धर्म के जन्म से दैवी जीव खुश हुए और आसुरी जीव भयभीत हुए । धर्मदेव ने आठवे वर्षमें उपवीत संस्कार पाकर वेदाभ्यास पूर्ण किया । पिताजीने गृहस्थाश्रम स्वीकार ने की आज्ञा की और इस आज्ञा का धर्मदेव ने स्वीकार किया ।

उत्तरप्रदेश में अयोध्या के पास छपैया नाम का गाँव है । इस गाँव में कृष्णशर्मा तिवारी का पवित्र परिवार रहता था । पवित्र ब्राह्मण कृष्णशर्मा के वहाँ संवत १७९८ की कारतक सुद पूनम के पवित्र दिन एक लडकी का जन्म हुआ । इस पुत्री की जन्म कुण्डली देखकर ज्योतिषीयोंने कहा कि यह बाला भगवानकी भक्ति में अति प्रीतिवाली होगी, इससे उसका नाम 'भक्तिबाला' रखना । इससे छपैया के लोग इस बाला को 'भक्ति' नाम से जानने लगे । धीरेधीरे यह भक्तिबाला बडी होने लगी । इससे पिता कृष्णशर्माने इस लडकी की मंगनी और ब्याह करने का विचार किया । कुछ दिनो के बाद इटार गाँव में रहे बालशर्मा के पुत्र धर्मदेव के साथ भक्तिबाला के साथ ब्याह करने का शुभ संकल्प कृष्णशर्मा को हुआ । इस संकल्प के साथ कृष्णशर्मा एक ब्राह्मण को इटार गाँव भेजते है । और इटार गाँव के बालशर्मा इस संकल्प को स्वीकार करते हैं । ब्राह्मण के हाथों शुभ घडी निकाली जाती है और इस मुहूर्त के अनुसार बालशर्मा के सभी रिश्तेदारों के साथ पुत्र धर्मदेव को सजाधजा के छपैया ले आये । तब आनंदविभोर होकर कृष्णशर्मा ने बारात का स्वागत किया ।

धर्मयुक्त धर्मदेव को देखकर छपैया के लोग भक्ति के भाग्य की प्रसंशा करने लगे । इस दिव्य प्रसंग को सब देवी–देवता भी द्विजरूप को धारण करके वह आ गये ।

भक्ति के पिता कृष्णशर्माने धर्मदेव का हाथ ग्रहण किया । पत्नी भाग्यवती भवानी ने भी पुत्री भक्ति का हाथ धर्मदेव के हाथ में देकर

दोनो माता और पिताने कन्यादान किया और कृष्णशर्माने शादी में आए सभी बाराती को दो दिन तक ठहराकर भोजन कराया खिलाया और खुश किया । तीसरे दिन जानने बिदाय माँगी तब कृष्णशर्मा ने बालशर्मा को अति दीन शब्दमें कहा कि, आप उच्चकूल के पवित्र विद्वान हो इसलिए आपके पुत्रको हमारे यहाँ रहने दो तो हमारे कूल में भी विधा आयेगी । ऐसी दरिद्रता से भरी बोली को सुनते ही बालशर्मा आनंदित होकर बोल उठे कि ''आपने जो कहा है उसका स्वीकार करना बहुत कठीन है लेकीन में उसका मना करुं तो मेरी कूल की इज्जत जाऐगी । इसलिए मैंने खुश होकर कहा कि ठिक है मेरे प्राण से भी प्यारे पुत्र धर्म को यहाँ रखो ।'' यह कहकर अपने पुत्र धर्मदेव को आशीर्वाद दिया । एवं पुत्रवधु भक्तिदेवी को पतिव्रता धर्म का सद्उपदेश दिया । तब धर्मदेवने वर्णाश्रम संबंधी धर्म के बारेमें पुछा और आशीर्वाद देते हुए कहा की ''आपकी इस सती पत्नी का तिरस्कार मत करना; वर्णाश्रम धर्म का कभी भी त्याग मत करना आपके जो भी शिष्य होंगे उसको भी धर्म का उपदेश देना । अधर्म का आचरण करने से दुःख और दरिद्रता को बढावा मिलता है इसलिए नित्य धर्मपरायण ही रहना और धर्म को रखोंगे तो ही प्रभू का सुख पाओंगे । धर्म को रखते हुए भी कठीनाई का सामना करना पडे तो हनुमानजी का स्मरण-ओर उसकी पूजा करना''।

पिताजी के ऐसे प्रेमाळ वचनों को धर्म-भक्ति ने शिरोमान्य रखे । इस तरह आर्शीवचन देकर बालशर्मा रिस्तेदार के साथ इटार जाने के लिए चल पडे । माता-पिता का ऐसा शुभ आशीर्वाद पाकर धर्म-भक्तिने गृहस्थाश्रम की शुभ शरूआत की । धर्ममें रहकर जीवन जीनेवाले इस दैवी दंपत्ति के यहाँ संवत १८१८ को श्रावण सुदि अष्टमी के दिन एक पुत्र का जनम हुआ । यह पुत्र यानिके राम

प्रतापजी । ऐसे ही समर्थ के शुभाशिर्वाद पाकर धर्म-भक्ति का गृहसंसार प्रभु परायण चल रहा था ।

२.२ गुरू शरणागति

प्रभुभक्तिमें धर्मदेव और भक्तिदेवी जिंदगी बिता रहे थे । लेकिन आसुरी और अधर्मी लोग उसे परेशान करने लगे । अधिक परेशानी से बचने के लिए धर्मदेव और भक्तिदेवी छपैया गाँव छोडकर अयोध्या आए । वहा भी दुष्ट लोगों उसे परेशान कर रहे थे । इस दुःख से छुटकारा पाने के लिए दोनो पति-पत्नी काशी तीर्थ जा कर महारुद्र करके ब्राह्मणों को भोजन खिलाया ।.... फिरभी कुछ सुख शांती नही मिली । इसलिए दोनों पति-पत्नी अधर्मी की परेशानी से बचने के लिए गुप्त तरीके से प्रयागतीर्थ में आ गये । वहाँ इस पवित्र तीर्थ में त्रिवेणी स्नान और संध्यातर्पण करके भगवत भक्ति में जुड गये । इस तीर्थ में कुछ शांति थी । और यहाँ ठहरकर धर्म भक्ति धर्मानुष्ठान के साथ रहकर भगवद् भक्ति करने लगे । इस समय उद्धवावतार सद् रामानंद स्वामी भी इस प्रयागक्षेत्र में आ पहुँचे । तब इस दैवी दंपत्ति को रामानंद स्वामी के सिर्फ दर्शन पाकर ही परम शांती हो गई । कुछ दिनो के बाद आई दिव्यशांति का अनुभव धर्म-भक्ति को हुआ दोनोंने रामानंद स्वामी के प्रति सहज गुरूभाव प्रगट उठा ! ईससे दोनों भक्त रामानंद स्वामी के शरण में गये और उसके पास से भागवती दीक्षा लेकर कृतार्थ बन गये । दयालु गुरूदेव रामानंद स्वामीने भी सामान्य मंत्र और महामंत्र और धर्मोपदेश देकर कहा कि; '' आपके शरण में कोई मुमुक्षु जीव आये तो आप भी इस महामंत्र का उपदेश देना । तब शांति और सुख की अनुभूति में सांगोपांग धर्मभक्ति आनंदित हो गए और गुरूजी की आज्ञा लेकर अयोध्या आये । गुरू की आज्ञा में रहकर

दोनों पति-पत्नी प्रभु भक्ति में लग गए। इस ओर असुरो का जुल्म भी बढने लगा था। एवं धर्मदेव की आर्थिक दरिद्रता भी बढने लगी थी। सिर्फ एक ही बार खाना खाकर पुरा दिन बिताते थे। घर में आहार के लिए अन्न भी नही था। इससे निराश होकर भक्तिदेवी ज्यादा अशांति का अनुभव करने लगे। तब धर्मदेवने उसको सांत्वना देकर सचेत किया। बादमें धर्मदेव भी पिताजीने दि हुई आज्ञा को याद करके कुलदेव हनुमानजी की प्रार्थना अर्चना करने लगे। तब कष्टभंजन देव हनुमानजीने स्वप्न में दर्शन देकर कहा कि; '' धर्मदेव ! अब आपको कष्ट सहन करना नही पडेगा। फिरभी दुःख आये तो मुझे याद करना। मैं आपके दुःखो का नाश करूंगा। तुम अब यहाँ से वृंदावन जाओं वहाँ आपको दूर्वासा के साप से पृथ्वीलोक मे आये हुए महापुरूष मिलेंगे और आपको दुःख से निवृत होकर शांति का अनुभव होगा।'' गुरूदेव रामानंद स्वामी की शरणागति से शांति लेकर यह दैवी दंपत्ति कष्टभंजन देवकी कृपा से कष्ट रहित बनकर वृंदावन की ओर चल पडे।

२.३ प्रभू-दर्शन

वृंदावन जाते वक्त धर्मदेव अटौर भक्तिदेवी रास्ते में गुरूदेव रामानंद और कष्टभंजन देव के दर्शन की स्मृति के साथ शांति का अनुभव कर रहे है। वृंदावन पहुँच कर फूलदोल के जुले में जुल रहे भगवान श्रीकृष्ण के दर्शन किए। इस तिर्थधाम मे उपवास (व्रत) करके गोवर्धन की परिक्रमा करते ही सब दुःख दूर हो गये। बादमें शांति से बेठे थे तभी मरीच आदिक मुनि मिले। एक दूसरे की जान पहचाँन कि, शुभ समाचार पूछे, असूरो ने दिए हुए कष्टो को याद करके एक दुसरे को आश्वासन दिया। सभी मुनि के साथ धर्मभक्ति ने प्रभू को प्रार्थना करके कहा कि; ''हे प्रभु! अभी इस

पृथ्वी पर असुरो का बल बढ रहा है, और दैवी जिवात्माएँ उसके त्रास से त्राहिमाम हो गये है। इस असुरों के उपद्रव से पृथ्वी पर पाप का बोझ बढ गया है। इस बोझ को हटाने के लिए आप ही एक बलवान हो। हे प्रभु ! अब आप ही कोई तरीके से यह बोझ को उतारो।

धर्मभक्ति के साथ मुनिओं की भी हृदयस्पर्शी प्रार्थना को सुनकर साक्षात् श्रीकृष्ण वृंदावन विहारी दर्शन देकर एवं प्रसन्न होकर बोल उठे कि; ''हे धर्म-भक्ति और सभी मुनिगण ! आप सभी पर मैं प्रसन्न हुआ हुँ। आप सब इच्छीत वर माँगो'' तब धर्मदेव और मूनिगण ने कहा कि; '' हे प्रभू ! पृथ्वी पर असुरजनों का पाप बढ रहा है और सब भक्तजनों बहुत दुःखी हो रहे है। आप इसके लिए कृपा करके इस दुःखीयो को मुक्त करिये''।

ऐसी नम्र प्रार्थना से प्रसन्न होकर प्रभूभी बोल उठे कि; ''जाओ आप आज से निर्भय बन जाओंगे ! असुरो का नाश ऐसे ही हो जाएगा।'' इस तरीके प्रभूदर्शन एवं आशीर्वाद पाकर धर्मभक्ति और सब मुनिगण अत्यंत आनंदित बन गये। तभी वही प्रभुजीने धर्मदेव से कहा कि; ''हे धर्म ! आप पर मैं बहुत प्रसन्न हुँ। आप भी कुछ वर मांगों।'' तब धर्मदेव भी प्रभू प्रेरणा से सहज ही बोल पडे कि; ''हे प्रभु ! मुझे आप जैसे पुत्र की प्राप्ती हो, ऐसा आशीर्वाद दिजीए।'' तब परमात्माने हर्षित होकर तथास्तु कहकर अपना संकल्प धर्मदेव के द्वारा साकार किया। ''वह ही है प्रभू की लीला ! ऐसे भगवान और भक्त के वार्तालाप को सुनकर सब भक्तजन एक दुसरे को गले मिलकर सब अपने अपने स्थान पर जाने के लिए निकल गये। प्रभूदर्शन का यह प्रसंग धर्म-भक्ति और सब मुनिगण के हृदय में अंकित हो गया है। उसकी स्मृति में सब भक्त समाधि सुख को भोगने लगे।

२.४ संकट हरे हनुमानजीने

धर्मदेव और भक्तिदेवी इच्छित वर को प्राप्त करके अयोध्या जाने के लिए निकल गये । तब अनजाने रास्ते चलने पर गाढ जंगल मे रास्ता भूल गये । रास्ता न मिलने पर घबराहट पाके खडे रहे । तब एक भयावह वेश को धारण करते हुए तपस्वी सामने मिले । सिर पे बडी जटा और सपाट टाल एवं लाल आँखे वाले यह तपस्वी कठीन हृदय के थे । इस तपस्वीने धर्मदेव के सामने देखकर पूछा कि; '' आप कौन हो ?'' तब धर्मदेवने कहा कि; '' मैं इटार गाँव का ब्राह्मण हुँ । मेरा नाम धर्म है । असुरो के त्रास एवं दुःख से हम वृंदावन गये थे । वृंदावन मे भगवान से पार्थना करते समय भगवान श्री कृष्णनारायण ने हम पर प्रसन्न होकर..... दर्शन दिया और कहा कि;..... जाओ मैं आपके वहां पुत्ररूप प्रकट होकर असूरो का नाश करूंगा ।''

भोले धर्मदेवकी इस निर्दोष वचनो को सुनकर वह क्रोधी तपस्वी नाराज होकर बोल उठे कि; '' इस कृष्ण की दृष्टता को मैं जानता हुं । उसने मेरे प्यारे दोस्त दुर्योधन को मारा है । आप मुझे जानते हो ? मैं अश्वत्थामां हुँ । मै आपको शाप देता हु कि; आपका पुत्र हाथ में शस्त्र धारण नही करेगा और करेगा फिरभी शत्रुओ का नाश नही कर पायेगा ।''इस कोपायमान तपस्वी इतना बोल कर अदृश्य हो गये । तब अश्वत्थामा की ऐसे शापित वचनो को सुनकर धर्म-भक्ति बहुत शोक में डुब गये । धर्मदेव पर ज्यादा उदासी छा गई । तब कुलदेव कष्टभंजन हनुमानजी विप्र वेश प्रगट करके धर्मदेव को कहने लगे कि; '' हे धर्म ! कृष्ण परमात्मा तो सबसे समर्थ है । उसका कोई नही कर शकता । जिस तरह अग्नि में सबकुछ जल जाता है, उस तरह प्रभु भी बहुत ही प्रतापी है । इसलिए

आप परेशानी मे मत रहो । हम भी आपके साथ है । भगवान श्रीकृष्ण आपके यहाँ जन्म लेंगे तब पृथ्वी का बोज उठा लेंगे । तब आपके यहाँ अष्टसिद्धि और नवनिधि सदैव के लिए वहाँ निवास करके रहेंगे । कृष्ण प्रभु को कभी भी कोई शस्त्र की आवश्यकता ही नही पडती; वे तो संकल्प मात्र से ही असुरो का नाश कर देंगे । अब आप चिंता मुक्त रहो'' इस तरह सांत्वना देकर कुलदेव कष्टभंजन देव अदृश्य हो गये । अब तो धर्मभक्ति को भी शांति का अनुभव हुआ । कुलदेव की कृपा से इस देवी दंपत्ति को इस रोज सच्ची सुखानुभूति हुई । और आनंद में आ गये । इस आनंद के पूर में घर पहुंचे तब यह दैवी दंपत्ति का सब रिस्तेदार लोगोंने उसका स्वागत किया । देशकाल भी बहुत अच्छा हो गया । सब संकट हरे हनुमानजीने ।

२.५ श्रीहरि प्रागटय

सर्वावतारी श्रीहरिने पृथ्वी परके अनंत जीवो के उद्धार ती के लीए अवतार लेने का संकल्प करके धर्मदेव के हृदय में प्रवेश किया । तब से धर्मदेव का रूप ही बदल गया । श्रीहरि की कृपा से यानि के हरि की कृपा पाकर दिव्य तेज प्रापत करके इस धर्मदेव को सब ''हरिप्रसाद'' कह कर बुलाने लगे । श्री धर्मदेव के द्वारा श्रीहरि ने अब भक्तिमाता मे प्रवेश किया । इससे 'माँ' भक्तिदेवी देवहुति की समान शोभायमान हो गये । अब तो मां भक्ति दवीके उदर में के उर में अनंत कोटि ब्रह्मांड के पति शोभने लगे है । और 'माँ' भक्तिदेवी भी इस प्राण प्यारे को उदर में धारण करके प्रेममूर्ति बन गये । इससे सब उसको 'प्रेमवती' कहकर बुलाने लगे ।

इस गर्भणती माँ प्रेमवती अब दस महिना पूर्ण कर रही हैं । तब सर्वावतारी श्रीहरिने पुत्र के रूप में जन्म लेकर पृथ्वी को पावन कर दिया । यह श्रेष्ठ समय था संवत-१८३७ की चैत्र सुदि नवमी सोमवार की दशघडी रात्रीका । प्रभू के प्रागटय से धर्मभक्ति को पुत्र

के रूप में जन्म लेकर प्रभू के सुख की अनुभूति होने लगी । परिवार के सब लोग भी अत्यधिक आनंदीत होकर श्रीहरि जन्मोत्सव के पद गाने लगे । बाद में धर्मदेवने स्नान करके शास्त्र के अनुसार जातकर्म संस्कार करके विप्र को दान-दक्षिणा देकर तृप्त किया ।

प्रभू के जन्म के बाद माता स्नेहभाव से उसका लालन-पालन करने लगी । तेज से बादल की तरह श्याम है ऐसे घनश्याम नाम से लीला करते ये बालप्रभु धर्म-भक्ति को दिव्यभाव भूला देते है । उससे माता-पिता पुत्र भाव से प्यार करते है । अब तो यह घनश्याम प्रभु के प्रादुर्भाव प्रताप के कारण धर्मदेव की आर्थिक स्थिति भी अच्छी हो गई है । और इस तरह नास्तिक असुर लोग अब दुःखी हो गये है और उसको अपशुकन भी होने लगा है । इस अपशुकन का अनुभव होने से असुरो के गुरू कालिदत्त क्रोधित होकर बोल उठे कि;'' अब हम पर देवी क्रोधित हो गयी है और श्रीहरि का जन्म हो गया है ..... इसलिए चलो हम उसका शिशु अवस्था में ही नाश कर दें । ऐसा सोचकर मंत्रशक्ति से कृत्याओं को उजागर किया और उसको आज्ञाकिंत किया कि; ''छपैया में जन्मे छोटे बालक को शोधकर उसका नाश करो ।'' तब कृत्याओं उडकर हरिप्रसाद के घर आती है । और माँ के कोख में खेल रहे घनश्याम को पकडकर कह रही है मार डालो, मार डालो । ऐसा कहकर बच्चे को नगर के बाहर ले लयी । माँ प्रेमवती अत्यधिक रोने लगी तब एकादशी की रात्री को जागरण कर रहे धर्मदेव इस करूण आक्रंद को सुनकर भक्तिदेवी के पास आते है । तब पुत्र वियोग में माता की यह दशा देखकर धर्मदेव भी वही मूर्छित होकर गीर जाते है । इस वक्त कुलदेव हनुमानजीने दर्शन देकर इस दंपत्ति को सांत्वना देकर कहते है कि; ''मैं आपकी रक्षा करने आया हूँ । चिंता मत करो फिर भी में वहाँ जा रहा हूँ । ऐसा कहकर हनुमानजी नगर

के बाहर निकले । तब वहा कृत्याओ का झुंड बालप्रभु घनश्याम को गोद मे रखकर खडी थी । तब तो वहाँ बाल घनश्याम की वक्रद्रष्टि से सब कृत्याएँ जलने लगी थी वहाँ हनुमानजी भी आ पहुंचे । और उच्चे सुर मे बोले कि; ''खडी रहो..... अभी आपको छोडेंगे नही । ऐसा कहकर सभी कृत्याओं के बाल पकड कर पैर की ताकात से पृथ्वी पर जकड दिए । कृत्याएँ अब त्रास पाकर हाथ जोडकर बोल उठी कि; ''अब हम इस बालक का नाम भी नही लेंगे हम पर कृपा कीजिए । और हमे यहाँ से जिंदा जाने दीजिए । '' तब पापी कृत्याओं को सबक सिखाकर जाने दिया । और बाल घनश्याम को गोद में लेकर हरिप्रसादके घर ले आये । माँ प्रेमवती भी अपने पुत्र को देखकर हर्षित हो गई । और हर्ष के कारण कष्टभंजन देव को कहने लगे कि; ''हे देव ! आपने हमे बडे कष्ट से मूक्त किया है ।'' तब हनुमानजी कहते है कि; '' माँ आपका पुत्र तो बहुत शक्तिशाली है । वह स्वयं भगवान है । वह सामान्य मनुष्य नही है । यह तो सब उसकी लीलाएँ है ..... माँ'' ऐसा कहकर धर्म-भक्ति को आनंदित करके हनुमानजी अदृश्य हो गये ।

प्रभुदर्शन की इच्छा से युक्त मार्कण्डेय मुनि एक दिन धर्मदेव के घर आते हैं । यह मार्कण्डेय मुनि त्रिकाळज्ञानी और ज्योतिषी थे । इससे धर्मदेवने भी उसके पुत्र का शास्त्रो के अनुरूप नाम हो ऐसा कहाँ । तब इस प्रकांड पंडितने जन्म कुण्डली तैयार की और बडे सोच-विचार के साथ कहा कि; ''हे धर्मदेव ! आपका यह लडका कुछ अलग ही प्रतिभा रखता है । आपके पुत्र के पैर मे सोलह चिन्ह है ..... इस सब चिन्ह से ऐसा जानने को मिलता है कि आपका पुत्र सर्वगुन संपन्न महान ऐश्वर्यवान होगा । एवं कर्क राशीमें जन्म होने से दुसरो के दुःखों हरने की सहज स्वभाव होने से उसका नाम 'हरि' रखना । ऐसे ही चैत्र मास में उसका जन्म होने से

सब को आकर्षित करने की क्षमता रखने के कारण उसका नाम 'कृष्ण' भी सार्थक होगा । और दोनो नाम मिलाकर 'हरिकृष्ण' ऐसे नाम से भी विख्यात होंगे । वेसे भी तप और त्याग में शिवजी जैसे है । इससे 'नीलकण्ठ' नाम भी अच्छा रहेगां । इस तरह त्रिकालज्ञानी मार्कण्डेय मुनिकी भविष्यवाणी को सुनकर धर्म-भक्ति एवं परिवार के लोग बहुत आनंद विभोर होकर इस नामकरण महोत्सव बडे धामधूम से मनाया ।

इस तरीके से ऐसे अवतारी पुरूष की भविष्यवाणी व्यक्त कर के मार्कण्डेय मुनि वहाँ से विदा हो गये । वहाँ बाललीला करते हुए बालप्रभु घनश्याम के पांच माह पुरे हुए । तब पिता धर्मदेव भूमि पर बिठाकर **''भूम्पुपवेशन''** संस्कार किया । सातवे मास के पुनम के दिन **'कर्णवेध'** संस्कार संपन्न करके कान में आभूषण पहॅनाएँ; आसो वदी बीज के दिन **'अन्नप्राशन'** संस्कार करके प्रभु को अन्न जिमाया । इस प्रकार प्रभू की भावनाओ को जानने के लिए धर्मदेवने घनश्याम के आगे शास्त्र, महोर और तलवार रखे । तब बाललीला करते इस प्रभुने शास्त्र पे हाथ रखकर उसकी रूचि दिखाई । इससे माता-पिता अति प्रसन्न हुए । अब तो बालप्रभु तीन साल के हो गये । इसलिए पिता धर्मदेव घनश्याम के **'चौल'** संस्कार की विधि की । माता आये हुए महेमानों की खातीरदारी में व्यस्त थी । तब बालसखा के साथ खेलते खेलते घनश्याम आम के बगीचे में गये । बालसखाओंने इस नन्हें से घनश्याम को आम के पेड के नीचे बिठाया । तब संध्या हो गई । उस वक्त कपटी असुर कालीदत्त वहाँ आकर बालक के वेश धारण करके घनश्याम के साथ खेलने लगा । कुछ वक्त के बाद इस असुरने बडा रूप धारण करके आँधी फैलाकर घनश्याम को मारने के लिए मायाजाल रची । मायाजाल ऐसी रची कि वह खुद विकराळ विशाळकाय बडा रूप धारण करके,

जिस आम के नीचे घनश्याम बैठे थे उस आम के पेड पर उडकर गीरे । और कालीदत्त ने ऐसा सोचा था कि आम के उपर महाकाय रूप धारण करके उस पर मैं गीरूंगा तो घनश्याम उस पेड के नीचे दब जाएगा । लेकिन बाद मे जो इच्छा रखी थी वह पूर्ण न हुई और खुद असुर उस आम के वृक्ष नीचे दब गया । अपनी कब्र आप खोदना ।

इस तरह कालीदत्त खुदकी बनायी हुई मायाजाल मे खुद ही मर गया । इस ओर सब बालसखा घनश्याम को ढूंढते है कही न मिलने से घर आकर उसके माता-पिता को संदेश दिया । तब चिंता करते विरही माता-पिता भी घनश्याम को ढुंढने निकल पडे । लेकिन घनश्याम का कही भी पता न चलने पर भक्तिदेवी मूर्छित हो जाते है । उस वक्त बालप्रभू घनश्याम की मामी की नजर बालप्रभु पर पडते ही जल्दी से जाकर बालप्रभु को गोदमें लेकर उसको चुमने लगे । वह देखकर माँ भक्तिदेवी भी अपनी भाभी को आलिंगन मे भर लिया । और अपने गले में पहेनी हुई मोतीयों कि माला भाभी को सोगात मे दे दी । ऐसी कई बाललीलाएँ करते हुए यह घनश्याम महाराज सब को बहुत अच्छे दिव्यानंद दे रहे है । ईस तरह बारबार बालप्रभु पर असुरों का उपद्रव होता रहता है । किन्तु ऐसे कई उपद्रवों में भगवान की रक्षा होती है । ऐसी बाल लीला का ही जय होता है ए जानकर धर्म-भक्ति हर्षित हो जाते है ।

२.६ धर्मोपदेश

बालप्रभु घनश्याम महाराज का **'उपवीत'** संस्कार पूर्ण होने के बाद पिता धर्मदेव बानप्रस्थाश्रम में पहोंचने से वह सांख्ययोग साकार करने के लिए तैयार हो गए है । धर्मदेवने पचास

वर्ष पुरे करके एकावन में प्रवेश किया । अब वह संसार से विरक्त होकर वानप्रस्थाश्रम बिताना चाहते है । इससे धर्मदेव बडे पुत्र रामप्रसाद को बुलाकर कहने लगे कि; '' इस घनश्याम का तुम ध्यान रखना । घनश्याम के तन मे त्याग और मन में वैराग्य है । वह आशक्ति रहित है इसकी पहचा न दिखाई दे रही है । इससे उस पर व्यावहारिक भार मत रखना और अब व्यवहार आप ही रखना....और घनश्याम की तरह छोटे इच्छाराम का भी पुरा ख्याल रखना । आप दोनों भाई बडे है । इसलिए वात्सल्य भाव से उसका लालन-पालन करना, पुत्र अब मैं बुढा हो चूका हूँ । अब मैं सब स्थान से इच्छा को छोडकर अब मुझे सांख्ययोग पाकर प्रभू भजन करना हैं । इससे यह बात ज्यादा सोच समझकर तुमको कही है अब आप वह बात समझ लेना ।

यह बात रामप्रसादजी को कहकर धर्मदेव अब घनश्यामको बुलाकर कहते हैं कि; ''मेरे पुत्र घनश्याम, तुम्हारे भले के लिए कह रहा हूँ कि; तुम कभी भी स्वधर्म, भक्ति और वैराग्य का त्याग मत करना । शायद ही घर से उदासी महसूस हो तो गुरू रामानंद के पास चले जाना । हमने उसका समागम करके महेसूस किया है कि वे एक अद्वितिय सद्‌गुरू है । उसकी यथार्थ महिमा हम कह नही शकते । अब वे कई जीवो के उद्धार के लिए परिभ्रमण कर रहे है । फिरभी उसका मुख्य स्थान तो सोरठ में है । तब तुम उसके पास सोरठ में जाना । वहाँ तुम्हारी सभी मनोकामनाएँ पुरी होगी ।''

पिता धर्मदेव के ऐसे कल्याणकारी वचनों को सुनकर बालप्रभु घनश्याम महाराज भी खुश खुशाल हो गये । पिता के ऐसे प्यारभरे वचनो को हृदयमें रखकर अपने अवतार का कारण सिद्ध करने की तैयारी करने लगे ।

२.७ माता को दिव्यगति

बालप्रभु घनश्याम अब अपने अवतार को सिद्ध करने के लिए भक्तिमाता को दिव्यगति देने के लिए शुभ संकल्प कर रहे हे । जिस से भक्तिमाता को अचानक ही बुखार आ गया और शरीर मे पीडा भी होने लगी । थोडे ही दिनो में यह असह्य दर्द को सहन करके माँ अब थक गई है । जिस से, अपने पुत्र को साक्षात् प्रभु मानकर उसके शरण में आकर दोनों हाथ जोडकर कहने लगे कि; ''हैं घनश्याम ! आप तो साक्षात् भगवान हो अब में इस शरीर की असह्य पीडा से थक गई हूँ । अब मुझ पर कृपा करके मुझे ज्ञानोपदेश देकर; आपके स्वरूप में लीन होने दो और आपके धाम की प्राप्ती करने दो । तब शरणागत माँ की मन की चिंता जानकर घनश्यामने कृपा करके माता को ज्ञानोपदेश देकर कहा कि ; माँ ! धर्म, ज्ञान, वैराग्य, साथ भगवान की भक्ति से ही यह जीव आत्यंतिक कल्याण पाता है । ऐसे लक्षणो से युक्त सत्पुरूषो के लक्षणो को माता को बहुत अच्छी तरह से घनश्यामने कहा और अप्रत्यक्ष तरीके से अपने स्वरूप का ज्ञान देकर कहा कि; ''हे माँ ! मेने आपको इस अध्यात्मज्ञान की रहस्यात्मक कथा सुनाई है । यह कथा जो सुनेंगे या कहेंगे; वे सब भगवान के धाम को जरूर पाएंगे ।'' माता प्रेमवती इस रहस्यवाणी को सुनकर बडी प्रसन्नता के साथ बोली उठी कि; मेरे पुत्र के रूप में प्रकट होनेवाले तुम ही स्वयं श्रीकृष्ण हो । अब मैं निर्भय हो गई हुं और आपके अलौकिक धाम मे जा रही हूँ । बस ऐसा बोलकर माताने घनश्याम में मनकी वृत्ति को जोड दि । अब देह की विस्मृति हो गई और आखरी वक्त बोले कि आप सब धर्म मे ही रहना, जहाँ धर्म रहता है वहाँ मै रहती हुं । इसलिए सब धर्म रखना । ऐसा बोलकर माता भक्तिदेवीने घनश्याम मे अपनी वृत्ति जोड दि । तब बालप्रभु घनश्याम भी प्रसन्न होकर बोल उठे कि; '' हे माता!

अब मायिक शरीर को छोकर दिव्य शरीर को धारण करके मेरे धाममे रहो'' तब माताने अपने भौतिक देह को छोडकर प्रभु के धाम में गये और दुर्वासा के शाप से मुक्त होकर दिव्यगति को हांसिल किया । यह दिन था संवत १८४८ की कारतक सुदी दसम का ।

इस प्रकार अपने प्राण से भी प्यारे पुत्र की कृपा से माता भक्तिदेवी भगवान के स्वरूप का अलौकिक सुख को आनंद लेते लेते इस भौतिक देह को त्यागकर भगवान के धाम में दिव्यमान हो गये ।

२.८ पिताजी को दिव्यगति

भक्तिमाता धाम में जाने के बाद अब धर्मदेव भी पारिवारीक सुख से उदास होने लगे । उसने सांख्यविचार का अनुसरण करके अपने पुत्ररूप प्रभु में प्यार से मिलाकर मन की शुद्धि की । बालप्रभु घनश्याम भी पिता की सेवामें तत्पर थे । ऐसे ही पिता धर्मदेव की सेवा कर रहे बालप्रभु घनश्याम को धर्मदेवने कहा कि; आप ही स्वयं मेरे इष्टदेव श्रीकृष्ण हो । हमारे यहाँ प्रकट होकर आपने आपका सत्य वचन निभाया है । तुम्ही मेरा सबकुछ हो । इससे मैं निर्भय हूँ । लेकिन मैं आपका यह विरह नही सह सकुँगा । मेरा जन्म फिर हो लेकीन आपकी जुदाई का गम मुझको न हो ऐसा वरदान मुझे दीजिए । तब घनश्याम कहने लगे कि; हे पिताजी ! अब आपको कुछ जानना बाकी नहीं रहा; इसलिए आप पूर्ण ही हो । आप इसी भौतिक देह का त्याग करके मेरे पास ही रहोंगे उसमें कोई संशय नही । आप और हम सदा साथ ही रहेंगे । आपसे बढकर कोई भाग्यशाली नहीं है । तुम्हारे सब परिवार के लोग मेरा साथ पाकर निष्पाप हो गये है । मेरा जन्म इस कुल में होने के कारण यह कुल अत्यधिक मोक्ष

भागी बन गया है । ऐसा मोक्ष धर्मकुल के विना कही नही मिलेगा । यह कहकर घनश्याम ने पिता धर्मदेव को आशीर्वाद देकर आनंदीत कर दिया ।

तब पिता धर्मदेव भी अपनी अंतिम इच्छा को बताते हुए कहा कि; ''हें घनश्याम ! आप मुझे भागवत कथा सुनाओं ऐसी मेरी अंतिम इच्छा है ।'' इससे बालप्रभु घनश्यामने पवित्र विप्र के पास कथा करवाई और पिताजी की अंतिम इच्छा पुरी की । अलौकिक सुख दिया । इसलिए पिता धर्मदेव की वृत्ति बालप्रभु में लीन हो गई । बालप्रभुने विप्रो को दान देकर खुश कर दिया । धर्मदेवने नाई के पास क्षौर कर्म (मुंडन) कराया । भूमि को गोबर से छीलक उपर घास बिच्छा दिया है, पिता धर्मदेव को सरयुगंगा के जल से स्नान कराया पूजा कराके दर्भ - शय्या में सिद्धासन में बिठाकर श्रीहरि के नाम की धुन शुरू की तब पिता धर्मदेव के हृदय में अधिक तेजदर्शन हुआ । यह दिव्य तेज का दर्शन सामने बेठे हुए सभी को हुआ । तब भी तुरंत ही धर्मदेव भौतिक देह मे से निकलकर प्रभु-धाम की प्राप्ती कर ली । यह दिन था १८४८ की जेठ वदि चतुर्थी का । इस तरह अब दिव्य देह पाकर धर्म देव दुर्वासा के शाप से मुक्त होकर श्रीहरि की सेवा में अखंड रह गये ।

२.९ चले उत्तर दिशामें खुद अकेले

बालप्रभु घनश्याम महाराजने माता-पिता को दिव्यगति दी । अपना पृथ्वी पर प्रकट होने का हेतु सिद्ध करने के लिए निश्चय किया । पृथ्वी पर भागवत् धर्म की स्थापना, योगभ्रष्ट जिवात्माओं को उर्ध्वगति देना, धर्म-भक्ति का पालन और पाखंड धर्म का नाश करने के लिए महाप्रस्थान का प्रारंभ किया । यह पवित्र दिन था संवत १८४९ की अषाढ सुदि दशम का । घनश्यामजी ने सरयु स्नान

करनेके निमित्त से और केवल कोपिन उस पर आच्छादन, जलकुंड, तुंबीपात्र गले में तुलशी की कंठी (माला) साथ में शालीग्राम, पलाश का दंड और सत्शास्त्र का गुटका ही साथ लिया । वन गमन करते वक्त मुमुक्षुओ से त्वरित मिलने की इच्छा के साथ सब रिस्तेदार को छोडकर अयोध्या का सदाके लिए त्याग किया ।

सरयु नदी को अपने चरणस्पर्श का अंतिम सुख देकर कृतार्थ किया और इस वक्त एक अजनबी महाकाय पुरूषने वहाँ आकर घनश्याम को कहा कि; ''आपको सरयु नदी को पार करना है ? चलो मैं आपकी मदद करूँ । ऐसा कहकर सरयुगंगा में इस आदमीने घनश्याम को फेंक दिया । लेकीन असुरो की घनश्याम को जल में डुबोने की मलिन इच्छा को वरूणदेवने निष्फल बनाई । घनश्याम अयोध्यासे १२ कोष दूर सरयु किनारे निकलकर उत्तर दिशा की ओर हिमालय चल पडे । तिर्थाटन में मिलते मुमुक्षजनोने घनश्यामजी के वेश को देकर 'नीलकंठ' नाम दिया । नीलकंठ तीर्थधामो को पावन करते करते लोधेश्वर, जेतपुर, पथेपुर और सेहजापुर होकर बरेलीपुर पहोंचे । इस गाँव के मुमुक्षजनों को उपदेश दिया कि;.....''जब तक सत्पुरूष नहीं मिलेंगे तब तक जीव में रही अशुद्धि नही निकलेगी ।'' वहाँ से बहादुरपुर होकर नीलकंठ हरिद्वार पहुँचे । यह पवित्र दिन था संवत १८४९ की श्रावण सुदि एकादशी का । हरिद्वार से ऋषिकेश, लक्ष्मणझुला, श्रीपुर, धनुष्यतीर्थ, गुप्तकाशी, गुप्तप्रयाग, गौरीकुण्ड आदि तिर्थो को पवित्र करके केदारनाथ पहुँचे । केदारनाथजी के दर्शन करके नवमे दिन बदरीनाथ पहोंचे । नीलकंठजीने यहाँ इस तीर्थस्थान पर दिपोत्सव, अन्नकुटोत्सव मनाया । वहाँ के पुजारीजीने नीलकंठजी को गज पर बिठाकर ज्योतिर्मठ में पधराये । वर्णीराज नरनारायण के आश्रम बदरीकाश्रम में पधारे । नरनारायण ऋषि प्रकट होकर

निलकंठवर्णी को आलींगन में भर लिया । अब बदरीकाश्रम से निलकंठवर्णी मानसरोवर के हंसो को दर्शन देने पधारे । निलकंठजी मानसरोवर में पाँच दिन तक ठहरकर फिरसे बदरीनाथ पधारे । वहाँ पंजाब के मुमुक्षु राजा रणजितसिंहने दंडवत् प्रणाम करके दर्शन पाकर आनंद विभोर हो गये । गंगोत्री होकर निलकंठवर्णी हरिद्वार के ''हर की पैंरी'' पहुँचे फिरसे पंजाब के राजा रणजीतसिंहने निलकंठवर्णी के दर्शन करके उसको भोजन कराया । राजाने अपना राज्य अर्पण करने की इच्छा व्यक्त की वर्णीराजने उनकी बीनती का अस्विकार किया आशीर्वाद देकर 'हरैया' गाँव मे एक हलवाई के घर रात्री को ठहरे । वहाँ से वर्णीराजने पूर्व दिशा की ओर प्रयाण किया ।

२.१० पूर्व और दक्षिण दिशे कृपालु

नीलकंठवर्णी प्रभु अब पूर्व दिशा की और चले सुबह होते ही वर्णी वंशीपुर शहर पहुँचे । वंशीपुर के राजा-रानी और उसकी दोनों लडकीयों को वर्णीजीने दर्शन दिया । सबने वर्णीजी के दर्शन पाकर उसकी पूजा करके संतोष का अनुभव किया । वर्णीन्द्र की दिव्यता और शितलता को देखकर वर्णीजी को वंशीपुर में ठहरने के एवम् दोनों लडकियों की वर्णीजी के साथ शादी करने की बात रानीने कहीं । वर्णीजीने यह बात सुनकर हँसते हँसते कहाँ कि; ''माता ! मैं तो कुछ भिन्न प्रयोजन के लिए इस पृथ्वी पर आया हूँ । यहाँ आपके तप के फलस्वरूप सिर्फ दर्शन देने के लिए ही आया हूँ । '' ऐसा कहकर वर्णीराजने वंशीपुर से काले पर्वत की ओर चल पडे ।

आगे जाकर नीलकंठवर्णी को कालीदत् भैरव का मिलाप हुआ । वो वर्णीजी को मारने को आया था । तब वर्णीजीने निश्चय करके हनुमानजी के द्वारा काम करके पुलहाश्रम पहुँचे ।

रास्ते में गंडकी नदी आयी वहाँ पर्वताधिराज हिमालय भी मनुष्य के रूप में वर्णीजी के दर्शन करने आये । पुलहाश्रम में मुक्तनाथ के दर्शन करके भरतकुण्ड में वर्णीजीने स्नान किया । तप करके सूर्यनारायण को प्रसन्न किया । तप के दौरान पुरंजन की कथा और भरतजी के आख्यान का अनुसंधान रखा तप के दौरान धर्मदेव भक्तिमाताने वर्णी की सेवा की । और वहाँ से वर्णीराज बुटोलनगर पधारे ।

बुटोलनगर के राजा महादत्त और मयारानी मुमुक्षु जिवात्मा थे । उसकी विनंती को स्विकार कर प्रभुजीने सांख्ययोग का उपदेश दिया । कृपा उपदेश को ग्रहण करके राजा के द्वारा प्रभु को ठहरने का आग्रह किया । आग्रह को स्वीकार कर वर्णी बुटोलनगर में पाँच मास तक ठहरे । बुटोलनगर से पोखरा शहर की ओर प्रयाण किया रास्ते में विकट वन से घिरे हुए रास्ते में एक वट वृक्ष के नीचे आये । वट वृक्ष के नीचे एक तपस्वी योगी को बैठे हुए देखा । योगी वर्णीके भाव से दर्शन करके आलिंगन के भर लिया । दोनों की आंखोँ में हर्षाश्रु बहने लगे । हर्ष में लिन होकर दोनो विभूति एक दूसरे को देखने लगे । हसते हसते नीलकंठ वर्णीने कहाँ कि; '' आपके जैसे योगी की शोध में बन और पर्वत घुमते घुमते यहाँ आया हूँ ।'' यह बात सुनकर प्रसन्न हुए योगीने आश्रम में रहने के लिए विनंती की । वर्णीजी आनंदीत होकर वहाँ आश्रममें ठहरे । वह योगी जिसका नाम 'गोपालयोगी' था । योगीने वर्णीजी को अष्टांगयोग शिखाकर अपनी विधा को सार्थक किया । वर्णीजी की आज्ञा से गोपाळयोगीने शंखनाद करके हिंसक प्राणियों की हिंसकवृत्ति का नाश किया । वर्णीराजने गोपालयोगी को दिव्य दर्शन देकर दिव्यगति दी । वहाँ से वर्णीराज उत्तरकाशी के नामसे जाने वाले पोखरा शहर पधारे ।

वहाँ बहती हुई सेतीगंगा में स्नान करके उस स्थान को पवित्र किया । पोखरा में रहते असुरो का संकल्प से नाश करके पूर्व दिशा की और चल पडे । वहाँ रास्तेमें नारायण गंगा, भूरी गंगा और त्रिशुल गंगा में स्नान करके उसको पवित्र किया ।

वर्णीराज साधुओ के जूंड के साथ नेपाल की राजधानी काठमंडु पहुँचे । वहाँ के राजा रणबहादुर असाध्य रोग से पिडित थे । इस पीडा से मुक्ति पाने के लिए साधु-संतो के पास चिकित्सा (इलाज) कराते थे । फिर भी रोग न मिटने के कारण उसको बंदी कर देते थे । यह बात वर्णीराजने सुनकर राजा के असाध्य रोग से मुक्त किया और साधु-संतो को भी मुक्त किया । काठमंडु में नीलकंठवर्णी एक मास ठहरे । वहाँ उत्तर दिशा की ओर तिबेट में बोद्ध लामाओं के मठ (विहार) में पहुँचकर चीन की ओर दृष्टिपात करके नेपाल में से विदा हुए । वर्णीराज आदिवाराह पहुँचे । वहाँ दर्शन करके बंगाल के शिरपुर के राजा सिद्धवल्लभ के पास आये । यहाँ ढोंगी साधुओ के उपद्रव का नाश करके सिद्धवल्लभ राजा का कल्याण किया । वर्णीराज पूर्व दिशा में कामाक्षीदेवी के स्थान पर पहुँचे वहाँ महाकाली उपासक पिबैक रहता था । उसने निलकंठवर्णी पर मंत्रसार किया पर कुछ हुआ नहीं अंत मे नीलकंठवर्णी के शरण में आकर शरणागति का स्वीकार कीया । वर्णीराज ने प्रसन्न होकर मोक्ष मार्ग का सच्चा रास्ता दिखाया ।

कामाक्षीदेवी के स्थान में एक मास ठहरकर वर्णीराज दक्षिण में नवलखा पर्वत पर पहुँचे । नव लाख योगीओं को एक साथ अलग अलग रूप में दर्शन देकर आलिंगन करके मोक्षगति प्रदान की । कामाक्षी से बालवाकुण्ड पहुँचे वहाँ स्नान करके उस कुंडको पवित्र किया । वर्णीजीने वहाँ से गौड देश में नदिया, शांतिपुर होकर गंगा और समुद्र के मिलन स्थल गंगासागर को

पवित्र किया । वहाँ से नाँव के जरिए कपिलमुनि के आश्रम पहुँचे । कपिलमुनि का तप समय को पुरा करा कर प्रभुजी पुरूषोतम पुरी पहुँचे । वर्णीजी को पश्चिम जाने की जल्दी होने के बजाय भी वह अघर्म का नाश करके ओर धर्म को स्थापन करते करते आगे बढे । रास्ते में जयरामदास नाम का एक सेवक मिला । उसको साथ में रखकर समुद्र खाडी पार करके भगवान भूवनेश्वर तीर्थ में पहुँचे । इन्द्रधुम्न झील में बसेरा करके जगन्नाथपुरी पहुँचे ।

जगन्नाथपुरी में रथयात्रा का बहुत महत्व है । वहाँ के राजा को दिव्य स्वरूप में दर्शन दिया । इस तरह बर्णीराज को सजाएं हुए रथ में बिठाकर राजाने सारे शहर में घुमाया । वर्णीराज का यह बहुमान देखकर वैरागी घबराने लगे । परस्पर के द्वेष से एक दुसरे के साथ मुठभेड में उसका विनाश हो गया । जगन्नाथपुरी में दस मास ठहरकर, आदिकुर्म पहुँचे । वहाँ से वर्णी जयरामदास के साथ मानसपुर पहुँचे । एक बाग में जयरामदास के साथ ठहरे । मानसपुर के राजा को यह समाचार मिलने पर वहाँ दर्शन के लिए आये । उसको धर्म-अधर्म, सत्य-असत्य, विवेक-अविवेक की बात को समझाया । इससे अन्य ढोंगी साधुओं के ढोंग खुले पडे और उसने नीलकंठवर्णी पर पथ्थर बरसाएँ । वह समाचार वर्णीजीने जयरामदासजी के द्वारा राजा को पहुँचाया । इस से राजाने ढोंगी साधुओं का लश्कर के द्वारा राज्य में से नाश किया ।

मानसपुर से नीलकंठवर्णी और जयरामदासने वेकंटाद्रिको चले मुलाकात ली । रास्तेमें चलते जयरामदास को परिवार के लोगों की याद आयी । नीलकंठवर्णी ने जयरामदासको कहा कि; '' आपको घर जाना होतो जाओ, जब फिर से वैराग्य का अनुभव हो तब भारत के पश्चिम सोरठ देश में आना, वहाँ हम फिरसे मिलेंगे ।'' यह

कहकर आशिर्वाद देकर बिदाय किया । वर्णीराज वेंकटाद्रि पर्वत चडकर बालाजी वेंकटेश्वर के दर्शन करके कांचीपुर पधारते है । रास्ते में सेवकराम नाम का एक साधु मिलता हैं । उसकी सेवा करने के लिए कोई नहीं था । उसको लोहीकी टट्टी का रोग था । वर्णीजीने उस पर कृपा करके और सेवा करके उसकी पिडा का नाश किया । सेवकराम अपने पास हुए पैसे से सबकुछ मंगाकर वर्णी के पास खाना बनवाकर खुद खाता था । और वर्णी गाँव में जाकर भिक्षांकन करके आहार लेते फिरभी वर्णी को खाने का विवेक नही दिखाया । इससे उसने कृतघनी जानकर त्याग किया । नीलकंठवर्णी शिवकांची और विष्णुकांची पहुँचे । वहाँ के मठाधिपति को जीव, ईश्वर, माया, ब्रह्म और परब्रह्म के क्या लक्षण है वह पूछा । उससे यथार्थ उत्तर न होने पर मठाधिपतिने गुस्सा दिखाया और वर्णी का तिरस्कार किया । वर्णीजी वहाँ से निकलकर श्रीरंगक्षेत्र पधारे । श्रीरंगक्षेत्र यानि के श्री रामानुजाचार्य की तीर्थभूमि इस तीर्थभूमि के दर्शन करके कावेरी में स्नान करके शेषशैय्या पर लेटे हुए श्रीरंगनाथजी का दर्शन किया । यहाँ दो महिने तक ठहरकर वैष्णव मत का रहस्य को जाना । यहाँ से वर्णीराज सेतुबंध रामेश्वर जाने के लिए तैयार हुए । नीलकंठवर्णीके वनगमन को पाँच साल पुरे होने के थे । वर्णीराज सेतुबंध रामेश्वर के दर्शन करके तीर्थक्षेत्र को पवित्र किया । सेतुबंध रामेश्वर से धनुष्यतीर्थ, दर्भशयन दर्शन करके सुंदरराज क्षेत्रमें पधारे । वहाँ विष्णु भगवान के दर्शन कर के देवपत्तन होकर भूतपुरी की ओर चल पडे ।

भूतपुरी के विकट वनमें चार दिन तक चलते अन्न-जल न मिलने से वर्णी बेहोश हो गये । होश में आये तो पासमें ही पानी का कूआँ दिखाई दिया । वहाँ पहुंचकर स्नान करके शालिग्राम को स्नान कराया । शालिग्राम की तृषा को तृप्त करके उसकी पूजा की

। इतने में शंकर ओर सती ब्राह्मण वेश में आकर वर्णीराज को साथवा का भोजन कराया और दर्शन करके कृतार्थ हुए। वहाँ से रामानुजाचार्य के मुख्यस्थल तोताद्री पहुँचे । वहाँ के आचार्य जियर स्वामी को मिलकर उपासना का शुद्धस्वरूप जान लिया । उसकी शुद्ध उपासना से नीलकंठवर्णी बहुत आनंदीत हुए । वहाँ के निःर्व्यसनी और निःस्पृही त्यागीयों को देखकर आनंदीत हुए। लेकिन वह औरतों के साथ संबंध होने से बर्णीराज को अच्छा नही लगा। वहाँ से भारत के दक्षिण के कुमारिका क्षेत्र पहुँचे । कुमारिका क्षेत्र के दर्शन करके और वहाँ से लंबेनारायण का दर्शन किया। फिर वह पद्मनाभ पहुँचे । पद्मनाभ से केशवतीर्थ पधारे। वहाँ पर कितने असुरो का नाश किया और उत्तर में मेलुकोट मलयाचल पर्वत पर आ पहुंचे । यहाँ चंदन के वृक्षो के विशाल वन को पार करके प्रभु साक्षी गोपाल आये । वहाँ तुंगभद्रा नदी धनुष्य के आकार से बहती है । इससे उस नदी को चक्रतीर्थ भी कहते है । चक्रतीर्थ से क्रिष्कींधानगरी आकर चंद्रभागा नदी के किनारे बसे हुए पंढरपुर के विठोबा के दर्शन करके वर्णीजी पूना पहुँचे पूना मे बापु गोखले की मुमुक्षुता से प्रभावित होकर उसको दर्शन देकर कृतार्थ किया। गोखलेजी के आग्रह से पेश्वा सरकार के वहाँ जा पधारे । पूना से जनाबाद जाकर तापी में स्नान किया। तापी को पावन करके मध्यप्रदेश के बुरानपुर में वर्णीराज आ पधारे । इस तरह पुरे भारत में पावन करते करते नीलकंठवर्णी पश्चिम की ओर चले कयुंकि वहाँ मुमुक्षुजनों को मिलने की तीव्र इच्छा कई दिनो से थी।

२.११ प्रभुजी पश्चिम में

निलकंठवर्णी मध्यप्रदेश के बुरानपुर से निकलकर महाराष्ट्र की ओर आगे बढे । तापी नदी और मौना नदी के संगम स्थल में

स्नान करके एक पैड के नीचे नीलकंठवर्णी बेठ गये । वहाँ एक मुमुक्षु गोविंद शेठ वर्णीजी के दर्शन पाकर कृतार्थ हुए। वह शेठजी ने एक पवित्र ब्राह्मण के पास रसोइ बनवाकर वर्णीजी को जिमाया। शेठ की मुमुक्षुता को देखकर वर्णीजीने उपदेशात्मक बाते करते हुए कहाँ कि; ''शेठ ! ज्यादा जन्म के अंत मे ही ज्ञान प्राप्त होता है । यह ज्ञान होने पर ही प्रभूकी प्राप्ती होती है।'' दण्डकारण्य होकर नासिकपुर आ पहुँचे। वही पर गोदावरी नदी में स्नान करके वर्णीराजने त्रंबकेश्वर महादेव के दर्शन किए।

नीलकंठवर्णीने इस तरह उत्तर प्रदेशल हिमाचल प्रदेश, नेपाल, आसाम और ओरिस्सा का उद्धार करके कर्णाटक, तमिलनाडुं, महाराष्ट्र और मध्यप्रदेश के मुमुक्षुजनों को मोक्षपथ के दर्शन करा के कितने तीर्थो को तीर्थत्व दिया। इस तरह सब लोगो के कल्याण हेतु बनगमन करके..... अब नीलकंठवर्णी पश्चिममे जाकर गुजरात को पवित्र करने के लिए निकल ते है । त्र्यंबकेश्वर से निकलकर नीलकंठवर्णीने सिधे ही सुरत शहर मे आये। तापी नदी के किनारे अश्विनीकुमार के तट पर आये। तापी नदी में स्नान करके तापी के ताप हरि भगवान भरूंच पहुँचे । वहाँ से पीपली, तवरा होकर नर्मदा-रेवा नदीमें स्नान करके नीलकंठवर्णी अनसूया आये। वर्णीन्द्र व्यासतीर्थ मे निवास करके चाणोद आ पहुँचे। वहाँ से नीलकंठवर्णी नावली गाँव आकर लालदास पटेल के सदाव्रत में भोजन लिया । और शरणागत लालदास पटेल को पुत्रप्राप्ति का आशीर्वाद देकर बामणगाँव पधारे। बामणगाम मे खोडा पंडया के वहाँ स्नान करके वर्णीन्द्र आणंद होकर डाकोर पधारे। वहाँ रणछोडजी के दर्शन किए और इस स्थान को पवित्र करके वर्णीन्द्रजी आगे चल पडे।

संवत १८५५ के फागुन सुदि एकादशी के दिन वर्णीजी उमरेठ पहुँचे। वहाँ पर जागनाथ महादेव के मंदिर पे नीलकंठवर्णी को दर्शन

करते हुए देखकर नरभेराम दवे और रूपराम ठाकर प्रभावित हुए । उसने पूछा कि; ''ब्रह्मचारी ! आप कहाँ से आते हो !'' ब्रह्मचारी ने कहाँ कि; '' अनिर्देश से'' वर्णी के ऐसे उत्तर से दोनों भक्त सोच में पड गये । कुछ ख्याल न पडा । उमरेठ से नीलकंठ भालेज होकर वरताल आये । वहाँ तालाब के तट पर प्रभु बेठे थे तब वहाँ पर जोबनपगी दर्शन के लिए आये । वर्णीन्द्रजी के दर्शन करके कृतार्थ होकर अपने घर ले आये । खाना बनाकर ठाकोरजी को नैवेर्ध देकर नीलकंठ ने भोजन किया । जोबनपगी को निलकंठ के प्रति कुछ अलग ही आकर्षण हुआ । उसने बिनंती स्वरूप से प्रार्थना करते हुए कहाँ कि; ''हे प्रभु ! आप यहाँ पर रहो में आपको यहाँ पर अच्छा स्थान बना दुंगा । '' तब वर्णीजीने कहा कि; '' अभी तो नही ठहर सकते लेकीन फिर कभी आएंगे तब अवश्य ठहरेंगे ।'' ऐसा भावी संकेत कहकर वर्णी वरताल से बोचासण, देवाण, खंभात होकर बुधेल आ पहुँचे । बुधेल से आगे चलकर वर्णी गोराड, रूणी, वडगाम होकर घनकातीर्थ आ गये । घनकातीर्थ से धोलेरा रास्ते पर चले रास्ते में पीपली, गाँफ होकर भडियाद आये । भडियाद के विप्र गोविंदराम के घर दुध और थुली जीमे । वहाँ से घोलेरा होकर वागड में राणा कुंभार के घर रात्री को ठहरे वागड से निकल कर खरड, जिंजर, जाकर लीलका नदी में स्नान किया । स्नान करके प्रभुजी पोलारपुर के जेठाभाई कनबी का पकवान ठाकोरजी को धराकर उसने भी भोजन किया । और पानी पीया । प्रसाद के पानी को कुए मे डालकर कुए को भी तीर्थत्व दिया । वर्णीराज वल्लभीपुर बरवाला औार शिहोर पधारे । शिहोर के गोमती कुंड में स्नान करके कुंड को पवित्र किया । वहाँ से वर्णीजी भावनगर आये और देवजी भगत की धर्मशाला में निवास किया । वहाँ समुद्रके किनारे आये हुए नकलंक महादेव के मंदिर मे दर्शन करके

विश्राम किया । वर्णीन्द्र कुकड, दिहोर, होकर लाकडिया के प्रेमजी भगत को कहाँ कि ''प्रेमजी ! हमारे जैसे जोगी आपको पुरे ब्रह्मांडमे कही नही मिलेंगे ।'' प्रेमजी को अपने स्वरूप का सुख देकर नाना गोपनाथ, पीपरला, तलाजा पहुँचे । शेत्रुंजी में स्नान करके बडे गोपनाथ पाँच रात्रि तक ठहरकर झांझमेर भक्तो की इच्छा को पुरी की और वहाँ से कलसार पहुँचकर पाखंडी भक्तो के पाखंडो का पर्दाफाश किया । यहाँ पर वर्णीजी को किसीने भी निवास और अन्न न देने से वर्णीजीने खेतोमें रात बिताई । दुसरे दिन कालसार से महुआ के लक्ष्मीनारायण के मंदिर में वर्णीराज तीनदिन तक ठहरे । महुआ की मालण नदिमें स्नान किया और मालण नदी को पवित्र किया । नदी के तट पर आये हुए तलगाजरडा के पास दो दिन ठहरे । डोलिया आकर मुमुक्षु ब्राह्मण विठ्ठलभाई के वहाँ भोजन किया । फिर भी प्रभुजी पीपाभगत की पीपावाव दो दिन तक ठहरे ओर राजुला आये । राजुला से वर्णीराज वड्गाम, धातरवाडी नदी में स्नान करके कोवाया पधारे । वहाँ आदिवराह के दर्शन करके एक रात ठहरकर सीमर, गांगडा, साम्तेर जा पहुँचे । सामतेर श्यामकुंडमें स्नान करके धर्मशाला में रात को ठहरे । तब एक कंजुस बनिएने नीलकंठवर्णी को दूधपाक की रसोई बनाकर भोजन कराया । और कंजुस बनियेने नीलकंठवर्णी के सामने द्रव्य याचना की नीलकंठवर्णीने कहा की जरूरत के अनुसार द्रव्य मिलेगा एसे आशीर्वाद देकर गरवे गिरनार की ओर जानेकी दृष्टि की ।

सामतेर से वर्णी गुप्तप्रयाग आये गुप्तप्रयाग में पुजारी को कुंड में हंमेश के लिए पानी बना रहे ऐसे आशीर्वाद दिया । देलवाडा में भना पाठक के वहाँ एकमास तक थाल जीमकर कृतार्थ किया । गुप्तप्रयाग से उना मछुन्द्री नदी के नाले में तीन दिन तक ठहरे । वहाँ से नीलकंठ वर्णी डोलासा आये वहाँ कुंभार

भक्त को कृतार्थ किया । डोलासा से भालकातीर्थ पहुँचे । वहाँ से प्रभु भंडुरी आये । वहा सवजीभाई लुहार के घर रात्री को ठहरे और सेवा अंगीकार करके लुहार को धन्य भागी कर दिया । भंडुरी से सीमासी होकर अणखेल रात को ठहरे । वहाँ से वर्णीजी जुनागढ पधारे; गिरनार पर्वत चडकर दतात्रेय के चरणो को पावन किया । नीचे उत्तर कर तलेटी के कुअेंमें स्नान किया । दामोदर मंदिर में रात्री को ठहरे । -- सुबह दामोदर कुंड में स्नान करके उस कुंड को तीर्थत्व दिया । दामोदरजीके पुजारी को दामोदर के रूप में दर्शन दिया ! वहां से नीलकंठवर्णी खेंगार वाव होकर वंथली पधारे । वंथली सूर्यकुंडमे स्नान करके रात्री को ठहरे और दूसरे दिन प्रभु पीपलाणा पहुँचे ।

२.१२ प्रभुजी पीपलाणा गाँव

नीलकंठवर्णीजी की दृष्टि गरवे गिरनार की गोद में पडी इस गरवे गिरनार की गोद में 'पीपलाणा' नाम का एक पवित्र गाँव है । वहाँ ओजत और उबेण नदी का संगम होता है; इससे इस गाँव की प्राकृतिक शोभा बहुत आकर्षित है । वहाँ पर चारों वर्ण के लोग रहते है । लेकीन ब्राह्मण ज्ञाति के लोगो की संख्या अधिक है । उसमें भी उनेवाल ब्राह्मणो मे भक्तराज नरसिंह महेता प्रमुख ब्राह्मण है । उद्धवावतार रामानंद स्वामी की कृपादृष्टि से उसको भगवद साक्षात्कार हुआ ।

नीलकंठवर्णी गिरनार उतरकर पवित्र पीपलाणा गाँव आये । वह शुभ दिन था संवत १८पह की श्रावण वदी चोथ का । अभी तो सूर्योदय भी नहीं हुआ तभी प्रभुजी पीपलाणा गांव में पहुँच के नरसिंह महेता के आंगन मे चलते सदाव्रत में आकर बोल उठे कि; ''नारायण हरे ! सच्चिदानंद प्रभु !'' वर्णीजी के ऐसे मधुर स्वर

सुनकर नरसिंह महेता का पुत्र कल्याणजी घरसे बाहर निकलकर नीलकंठजी को एकी टस से देखने लगे । नरसिंह महेता घर में प्रभु की पूजा करते थे । इसलिए नीलकंठजी को सबसे पहले देखने का मौका कल्याणजी को मिला इस अलौकिक कांतिधर ब्रह्मचारी को देखकर कल्याणजी ने कहाँ कि; ब्रह्मचारी ! क्या लोंगे भिक्षामें ? तब ब्रह्मचारी बोले कि; ''जो भी तैयार हो दे दो'' यह सुनकर नरसिंह महेता की लडकियोंने कहाँ की; '' ब्रह्मचारीजी थोडी देर तक बेठीये गरमा गरम टिक्कड तैयार कर देंगे । तैयार भोजन कुछ नहीं है । तब नीलकंठवर्णीने कहाँ की; ''हमे स्वादिष्ट भोजन में कोई रूचि नही; इसलिए जो तैयार हो वो दे दिजीए ।'' तब पूजा कर रहे नरसिंह महेताने यह शब्द सुनकर बाहर देखा इस से नीलकंठवर्णी के दर्शन हुए । महेताजी पूजामें लीन थे तब पूजा के शालिग्राम में से एका एक दिव्य तेज प्रकट हुआ । महेताजी तो आश्चर्यचकित हो गये । महेताजीने तुरंत ही घर में से बाहर आकर पूछा कि; यहाँ अभी छोटेसे ब्रह्मचारी आये थे । उसको तुमने कुछ खिलाया ? तब महेताजी की लडकियाँ बोली कि; ''पिताजी ! ब्रह्मचारी बहुत जल्दीमें थे । हमने कहाँ कि थोडीदेर ठहेरो तो अभी खाना बनाकर दे दे । तब वह ब्रह्मचारी वहाँ से चल दिए ।'' तब महेताजीने अपनी बेटियों से कहाँ कि; ''रात को बनाये हुई **'जुवार का ठुमरा देना'** था । सुबह मे ही एसे पवित्र ब्रह्मचारी को बिना खाना खिलाये नही जाने देना चाहिए । ऐसा कहकर तुरंत ही नीलकंठजी को बुलाने के लिए पुत्र कल्याणजी को पीछे भेजा । तब तो वर्णी ओजत नदी के किनारे पहुँच गये थे । कल्याणजीने जोर से आजाव करके कहाँ कि; ''ओ ब्रह्मचारी खडे रहो , खडे रहो ।'' नीलकंठ वह सुनकर खडे रहे । कल्याणजीने पास आकर कहाँ कि; ''ब्रह्मचारी ! घर चलो खाना तैयार है ! चलो ! तब ब्रह्मचारीने कहाँ ''अब हम फिर वापस

नही आ सकते । कल्याजीने कहाँ आप नही आयेंगे तो मेरे पिताजी मुझे डाटेंगे । वो मुझ से सहा नही जायेगा । इसलिए मैं आपके पैर पकडकर प्रार्थना करता हुँ कि घर चलो मेरे प्रिय वर्णी । ऐसा आग्रह और बिनती को सुनकर ब्रह्मचारी घर को लोटे महेताजी के घर आकर चौतरे पे बेठे । ब्रह्मचारी को देखकर नरसिंह महेता आनंदित हो गये और कहाँ कि ''इस ब्रह्मचारी को खाना दो ।'' तब महेताजी की लडकीयोंने ब्रह्मचारीजी को पीतल की वडी थालीमें **दूध और जुवार का ठुमरा** खाने को दिया । इस वक्त पीपलाणा गाँव की स्त्री और पुरूष इस नन्हे से तपस्वी वर्णी के दर्शन पाकर आश्चर्य में पड गये । सब को यह हुआ कि यह छोटे से ब्रह्मचारी घरसे केसे निकल गये होंगे ? नरसिंह महेताने भी पुछा कि ''ब्रह्मचारी ! शरीर की सब नसे दिखाई दे रही है ऐसा उग्र तप क्युं करते हो ?'' तब वर्णीजी ने कहा कि; ''भगवान को पाने के लिए तप करते है ।'' तब महेताजी बोल उठे कि; ''तप करके सूक जाओंगे फिरभी रामानंद स्वामी के मिले बिना कल्याण नही होगा ।'' तब वर्णीजीने कहाँ यह रामानंद स्वामी कौन है ? महेताजीने कहा; ''रामानंद स्वामी हमारे गुरू है । यह अन्नक्षेत्र उसकी आज्ञा से चलाते है । '' वो बडे समर्थ गुरू है ।'' तब ब्रह्मचारी को उसके पिता के द्वारा कही हुई आज्ञा की याद आयी । इस प्रकार उसने तुरंत हि कहाँ कि हम उससे जरूर मिलेंगे ।'' ऐसी बाते करते बर्णिन्द्र दूध और ठुमरा मसलते जाते है और उसमें से निकलने वाली कचर को भी निकालते है । थाळीमें बाकी बचे रवे को पी जाते है । यह देखकर पीपलाणा गाँव की औरते बोली कि; ब्रह्मचारी दिखने मे तो भगवान जैसा दिखाई देते है । लेकीन स्वादप्रिय बहुत लगते है ।

नीलकंठवर्णीने जुवार का अन्न खाकर महेताजी को भाव से भीगो दिये और महेताजी से बिदाई लेकर नीलकंठवर्णी आखा गाँव

जानेको निकले । विदा करने आये विप्र नरसिंह महेता को समाधि में स्व स्वरूप का दर्शन कराया । इस तरह महेताजी को निश्चय हुआ की यह तो साक्षात् पुरुषोतम नारायण है । समाधि में लीन होकर महेताजी बोल उठे कि;''हे प्रभु! आपतो साक्षात् पुरूषोत्तम नारायण हो । हे प्रभु ! रामानंद स्वामी मिलने से पहले गिरनार चढकर मैंने मेरा देह छोडने का निर्णय किया था । तब आकाशवाणी हुई और कहाँ कि; ''तुम घर जाओ तुम्हारे घर अपने आप ही श्री भगवान आयेंगे । वो बात प्रभु ! अब साक्षात् हुई । मेरा भाग्य अभी से खुल गये । महाराज !'' इतना बोलकर प्रभु चरण की धुल को शिर पे चडाकर महेताजी घर आये । और नीलकंठवर्णी ओजत में स्नान करके नदी को ओजस्वति बनाकर आखा पहुँचे । आखा से मढडा जेठा मेर को दर्शन देकर मांगरोळ आये । मांगरोळ में वणिक गोरधनभाई के सुखडी और गाठिए जीम कर जमपुरी में गई उनकी फुफीका उद्धार किया । और मांगरोळ से वर्णीराज लोज आये ।

२.१३ लोजकी बावली

नीलकंठवर्णी लोज पहुँचकर गाईडामें शोभ रहे बावली के पास आये । उस बावली पर की श्यामशीला पर बेठकर नासिकाग्र दृष्टि करके ध्यानस्थ बन गये । लोजपुर की पनिहरियाँ पनघट पर पानी भरने आयी । क्रांतिमान वर्णीजी के दर्शन से आनंदीत हुई । लोजपुर के रामानंद स्वामी के आश्रम में पचास जितने वर्तमानधारी संत रहते है । उसमें से सुखानंद नाम का संत कुअे पर पानी भरने आया । कुअे पर अलौकिक वर्णीराज के दर्शन करके आनंदित हो गये । उसने वर्णीराज को प्रणाम करके पूछा कि; ''ब्रह्मचारी ! आप कहाँ से पधारे हो ? आपका नाम क्या है ? तुम्हारे माता-पिता कौन है ?

यह सुनकर तीव्र वैराग्यमान वर्णीजीने कहाँ कि; ''त्यागी को माता-पिता और गाँव के बारेमे कभी नही पूछना चाहिए। सच्चे माता-पिता तो यही गीने जाते है जो जन्म और मृत्यु मे से बचाए''। नीलकंठवर्णी के ऐसे प्रत्युत्तर को सुनकर सुखानंद स्वामी बडी नम्रतासे बोले कि; हे ब्रह्मचारी महाराज ! हमारे आश्रम मे पधारोगे ? ब्रह्मचारी बोले कि; '' हमे आश्रम या गाँव में जाने की इच्छा नहीं है। लेकीन जो आप विद्वान हो तो जीव, इश्वर, माया, ब्रह्म और परब्रह्म के लक्षण बताओं''। प्रश्न को सुनकर सुखानंद स्वामी ने कहा कि;..... हे ब्रह्मचारी महाराज ! हमारे गुरू रामानंद स्वामी अभी भूज में है। हम पचास जितने संत उसके आश्रममे रहते है। इस संतो में मुक्तानंद स्वामी बडे है। वो इस आश्रम के महंत है। जो आप कृपा करके हमारे आश्रममें पधारे तो आपके द्वारा पूछे गये प्रश्न का जवाब मुक्तानंद स्वामी देंगे। इसलिए आप कृपा करके हमारे आश्रममे पधारें।

सुखानंद स्वामी के विनम्रताभरे वचनो से वर्णीन्द्र आनंदीत होकर आश्रममे पधारे। आश्रम की संत सभा में कथा-वार्ता चल रही थी। सुखानंद स्वामी के साथ आये हुए ब्रह्मचारी को देखकर मुक्तानंद स्वामीने पूछा कि; ''यह ब्रह्मचारी कौन है ?'' तब शांत चित्ते सुखानंद बोले कि ; ''यह बह्मचारी बावली के पास बेठे थे। उसको तत्वज्ञान से संबंधीत ज्ञान की चर्चा करनी है। इसलिए वो यहाँ पर आये है। '' उसके दर्शन से प्रभावित होकर मुक्तानंद स्वामी बोले कि...''यह वर्णीराज भी कोई अलौकिक विभूति लगते है। उसको जो भी ज्ञान चर्चा करने वह आनंद से करे'' यह सुनकर वर्णीराज प्रसन्न हुए। उसको यह अनुभव हुआ कि; यह संतो तो कुछ जाने पहेचाने लगते है। इसलिए वर्णीजीने पूछा कि; ''मुझे जीव, इश्वर, माया, ब्रह्म और परब्रह्म स्वरूप के लक्षण को जानने की इच्छा

है। क्याँ आप मुझे इस लक्षणों के बारेमें बताए। दुसरी कोई अपेक्षा मुझे नही है।

वर्णीराज की ऐसी विवेकयुक्त वचनो को सुनकर मुक्तानंद स्वामी मोहित हो गये। मुक्तानंद स्वामीने भी इस पांचो तत्वों के स्वरूप के लक्षणो को यथार्थ को सुनाकर वर्णीन्द्र को प्रसन्न कर दिया। आगे बोलते हुए मुक्तानंद स्वामीने कहा कि; '' यह तो मैनें अपनी बुद्धि के अनुसार से लक्षणो को कहा है। लेकिन यथार्थ लक्षण हमारे गुरूदेव रामानंद स्वामी ही कह सकते है।'' नीलकंठवर्णी मुक्तानंद स्वामी की ऐसी निर्मळ निर्मानी वाणी से अतिशय प्रसन्न हुए और बोल उठे कि स्वामी ! धन्य हे आपकी बुद्धि को। हम सात सात साल से वनगमन कर रहे है फिरभी आपके जैसे ज्ञानी, विवेकी और निर्मानी संत कहीं नही मिले। यहाँ हमें धर्म, ज्ञान, वैराग्य और सभी भक्तिवान संतो के दर्शन हुए। फिर तो रामानंद स्वामी बडे प्रौढ प्रतापी ही होंगे।

मुक्तानंद स्वामी यह बात सुनकर विनम्रतासे बोले कि; ''हे ब्रह्मचारी ! मुझे भी आप जैसे प्रश्न पूछने बाले मिले नहीं है। हमारे गुरू रामानंद स्वामी तो ईश्वर ही है। उसको मिलोंगे तब बडा अलौकिक आनंद होगा। ऐसा भाव देखकर वर्णीराज बोल उठे कि; मेरे पिता धर्मदेव भी रामानंद स्वामी के शिष्य थे। मुझे मेरे पिताने कहा था कि; रामानंद स्वामी उद्धव का अवतार है। इसलिए मुझे भी रामानंद स्वामी के दर्शन की इच्छा है। यह सुनकर मुक्तानंद स्वामी तुरंत ही बोल उठे कि; तब तो आप हमारे ही हो और हम आपके ही है। फिर यह आश्रम भी आपका ही है। इसलिए आप राजी हो के यहाँ रहोगे ? मुक्तानंद स्वामी के ऐसे वात्सल्य वचनो को सुनकर वर्णीजीने कहा कि; ''मेरी इच्छा द्वारका जाने की थी..... लेकीन अब यह इच्छा को छोडकर गुरूदेव को मिलने के वास्ते में यही ही ठहर जाता हुँ।

इस तरह मुक्तानंद स्वामी के मिलने पर वर्णीजी सोचने लगे कि; अवतार धरने का प्रयोजन अब सिद्ध होगा । रामानंद स्वामी के लोज के आश्रम में पंचवर्तमानसे युक्त भागवत धर्म का प्रारंभ और दुर्लभ ऐसी सेवा भक्ति का सूर्योदय हो चूका है ।

२.१४ गुरू–झंखना

नीलकंठवर्णी यहाँ पर लोज में रहते हुए सेवाभक्ति के साकार स्वरूप से दर्शन करा रहे है । लेकीन मन तो गुरूदर्शन की तृषा तृप्त करने के लिए आतुर बन गया है । इस तरह विरही वर्णीन्द्र मुक्तानंद स्वामी को पूछते है कि; ''मुझे स्वामी के दर्शन कब होगे ? जब तक मुझे स्वामी नहीं मिलेंगे तब तक मुझे इस वियोग के दुःखमें ही रहना पडेगा । यह वियोग मुझसे सहन नही होगा'' । इस तरह वियोग की पराकाष्ठा तक पहुँचकर नीलकंठवर्णीने कहा कि; '' मुक्तानंद स्वामी ! आप स्वामीजी की मूर्ति का ध्यान करे .....ओर आपकी वृत्ति मे मेरी वृत्ति जोडकर मैं स्वामीजी की मूर्तिका दर्शन करलु ।'' इस प्रकार मुक्तानंद स्वामीने तुरंत ही स्वामीजी की मूर्ति का ध्यान किया । और नीलकंठवर्णीने यह ध्यान में अपनी मन की वृति जोडकर रामानंद स्वामी के दर्शन करके स्वामीजी की मूर्ति का पुरा वर्णन करके सबको आश्चर्य चकित कर दिया । अब नीलकंठवर्णी को कुछ शांति महसूस हुई फिर भी गुरूदर्शन की प्रत्यक्ष इच्छा तो हे ही । नीलकंठवर्णी नौ नौ महिने से गुरू विरह की वेदना को सहन कर रहे है । फिर भी अभी तक स्वामीजी के दर्शन न होने से मन ही मन कह रहे है कि; '' हे स्वामीन ! हे गुरूदेव ! आपके दर्शन के बिना अब तो एक पल भी एक युग की तरह लगता है । आपको मिलने के लिए ही मैने जन्म लिया है । आप चन्द्र तो मैं चकोर हूँ । आप मेघल तो मे मोर हूँ । आप मोती

तो मैं धागा हुँ । आप काया हो तो में छाया हूँ । आपके विरह में मेरी गति नाँव के काग जैसी हो गई है । मैं आपके वियोग में डुब गया हूँ । हे स्वामिन ! मुझे आपके विरह से बाहर निकाल कर आपकी सेवा देकर कृतार्थ करे । प्रभु ! मेरी इस अंतर की प्रार्थना का स्वीकार करो । स्वामी ! स्वामी !! स्वामी !!! नीलकंठवर्णी की इस गुरू झंखना से गुरू शिष्य का प्रथम मिलन का सर्जन हुआ ।

२.१५ प्रथम मिलन

निलकंठवर्णी की यह प्रार्थना रामानंद स्वामी के हृदय तक पहुँची । ओर फिर तो गुरूदेव अब अधिक उतावले हो गये ।

''हुअे उतावळे तत्काल, भूजनगरमे से दयाल
सुवर्ण सरिखा लाया हे रथ उस पर बैठे समरथ''

सद्. रामानंद स्वामी रास्ते में मिलते भक्तजनो को आनंद देते हुए भूज से पिपलाणा पधारे । पीपलाणा में नरसिंह महेता के घर निवास किया । भक्तजन स्वामी की सेवा में कार्यरत हुए । स्वामीजीने लोज संदेश भेजा कि; हम पिपलाणा आ गये है । आप सब वहाँ पे आइये । संदेश मिलते ही नीलकंठवर्णी को जिस तरह रांक को रतन मिलता है ऐसा आनंद हुआ । वो तो शाम को ही निकलने को तैयार हुए लेकीन मुक्तानंद स्वामीने सुबह निकलने का निर्णय किया । फिर सुबह होते ही मुक्तानंद स्वामी, नीलकंठवर्णी, जेठा मेर आदि पीपलाणा जाने के लिए निकले । और उसाकाल पे ओजत नदी के तट पर पहुँचे । दोनों तट पर चलती ओजत नदी को चरणस्पर्श से पवित्र करके नीलकंठ प्रभु संतो के साथ पीपलाणा पहुँचे । रामानंद स्वामीने बडे धामधूम से नीलकंठवर्णीजी का स्वागत किया । रामानंद स्वामी के दर्शन के लिए व्याकुल नीलकंठ और संतो स्वामी के पास आये । स्वामीजी के दर्शन पाकर नीलकंठवर्णी दंडवत् करने लगे । स्वामीजीने खडे होकर नीलकंठवर्णी को आलिंगन में भरके

भावविभोर बन गये । नीलकंठजी स्वामी में और स्वामी नीलकंठ में समा गये । इस अभूतपूर्व प्रथम मिलन का दिव्यदर्शन करके सब आनंदित हो गये । यह दिन था । १८५६ की जेठ वदी एकादशी का ।

२.१६ दीक्षा महोत्सव

स्वामी वर्षाऋतु के चार महिने निलकंठजी के साथ पीपलाणा मे ही ठहरे । चार्तुमास के सभी उत्सव पीपलाणा में नीलकंठवर्णी को सानिध्य में रखकर ही मनाये । नीलकंठवर्णी को अपनी सेवामें ही रखा । फिरभी बहुत सभी तरह से स्वामीजी की सेवा करके नीलकंठवर्णी दुसरी सेवाएँ भी भक्ति भावसे करते थे । नीलकंठवर्णी की इस तीव्र श्रध्धा से रामानंद स्वामी प्रसन्न हुए । और नीलकंठवर्णी को दीक्षा देकर अपने मंडल में रखने का संकल्प किया । बादमें मुक्तानंद स्वामी आदिक संत, पर्वतभाई आदि हरिभक्तो को पूछकर नीलकंठवर्णीको दीक्षा देने का संकल्प प्रकट कीया । सबने कहा कि; ''स्वामी ! आपकी जो इच्छा है वो हम करने के लिए तैयार है'' उसके बाद नीलकंठवर्णी को दीक्षा देने के लिए कारतक सुदी एकादशी के दिन शुभ **मुहूर्त** निकाला । **मुहूर्त** अनुसार वेदज्ञ ब्राह्मणो को बुलाकर होम-हवनादि द्वारा नीलकंठवर्णी को महादीक्षा दे दी गई । सद्. रामानंद स्वामीने अपने वरद हस्ते नीलकंठवर्णी को दीक्षित किया । और **सहजानंद** स्वामी एवम् **नारायणमुनि** ऐसे दो नाम रखे । इस दीक्षा महोत्सव का शुभ दिन था **संवत १८५७ की कारतक सुदि एकादशी** का ।

२.१७ आखरी सत्संग विचरण

रामानंद स्वामी और सहजानंद स्वामी पीपलाणा से आखा पधारे । और वहाँ आखा में गंगाधर ब्राह्मण के घर पीपल के पेड

के नीचे निवास किया । आखा की सत्संग सभा में मुस्लिम जासुर को समाधि हुई और अक्षरधाममें महाराज की मूर्ति का दर्शन किया और एसे ही प्रत्यक्ष दिखाई दिए ।

दुसरे दिन अगतराई से हरिभक्ते स्वामीजी को लेने के लिए आये । स्वामीजीने मुक्तानंद स्वामी को अगतराय जानेकी आज्ञा की और कहा कि;''आप आज जाओ हम कल आयेंगे फिर मुक्तानंद स्वामी श्रीहरि को साथ में लेकर अगतराय जाने के लिए निकले । आखा के भक्त बिदा करने आये । श्रीहरि को देखकर सब विस्मय हो गये । अकल अद्भूत तेज देखा । और वह तेज श्रीहरि की मूर्ति में समा गया । इससे सब का चित मूर्तिमें चिपक गया । इसलिए कोई फिरसे नही लौटे । इससे मुक्तानंद स्वामीने कहा कि; आप उदास क्युं होते है ? रामानंद स्वामी इश्वरमूर्ति है । वहाँ जाकर उसकी मूर्ति में चित वृत्ति को जोड दो । इस तरह मुक्तानंद स्वामीने बहुत आग्रह करके हरिभक्तो को लौटने को कहाँ । श्रीहरि संतो के साथ अगतराय जाने के लिए निकले ।

हरिभक्त रामानंद स्वामी के पास आये श्रीहरि के दिव्यदर्शन की बात की । वह सूनकर स्वामी बोले कि;''वह महापुरूष तो अवतारी है ।'' फिर दूसरे दिन रामानंद स्वामी अगतराय गये । ओर वहाँ भीमभाई के घर निवास किया; श्रीहरि और मुक्तानंद स्वामी दोनों स्वामी को मिले । भीमभाई और पर्वतभाई को रामानंद स्वामीने कहा कि; ''यह वर्णी प्रगट पुरुषोतम भगवान है । यह बात को सुनकर पर्वतभाईने परिपकव निश्चय कर लिया अगतराय में श्वेत आम के पेड के नीचे रामानंद स्वामी सभा करके बेठते । रामानंद स्वामी गुरू थे फिर भी सब का मन सहजानंद स्वामीमें जुड जाते वहाँ से स्वामीने मढडे जाकर जेठा मेर के घर निवास किया

। वहाँ भी श्रीहरिने चमत्कार दिखायाँ। इस से जेठा मेर निःसंशय हो गये और श्रीहरि का पूर्ण निश्चय हुआ। रामानंद स्वामी और श्रीहरि वहाँ से कालवाणी पधारे। वहाँ रामानंद स्वामीने बनाई हुई धर्मशाला में निवास किया। कालवाणी में दो महिने तक ठहरकर वहाँ के भक्तो के संकल्पो को पुरा किया। श्रीहरि को प्रश्वेद लाने के लिए पट्टीयाँ बंधवाई। संवत १८५७ की वसंत पंचमी का उत्सव भी वहां ही किया। रामानंद स्वामी, मुक्तानंद स्वामी के रचे हुए पद ताल, मृदंग बजाकर गाते इससे सब भक्त आनंदित होते।

बसंत के पद स्वामीजी को गाना आता था। झाँझ बजाना तो स्वामी जैसे किसीको नही आता था। पूर्व समय के अष्ट कवि के पद एवं तुलशीदास के पद बडे मधुर स्वर में स्वामी गाते थे। साकार भगवान का वर्णन करते पद पे उसका भाव था। जिसमे भगवान के अवतार का खंडन हो और अधर्म आचरण का प्रतिपादन करते हो ऐसे शास्त्रो को शौच समान जानकर त्याग करते।

श्रीहरि के साथ रामानंद स्वामी कालवाणी में दो महिने तक ठहरे। श्रीहरि का शरीर तप कर करके दुबला हो गया था। इसलिए रामानंद स्वामी श्रीहरि के शरीर पर मीण का तेल लगाते थे। कस्तुरी भी लगाते थे। श्रीहरि के शरीर को पृष्ट करने के लिए रामानंद स्वामी कई सारे उपाय करते थे। कालवाणी से रामानंद स्वामी श्रीहरि के साथ मांगरोळ जाकर आनंदजी संघाडिया के घर निवास किया। वहाँ गोरधनभाई समाधिनिष्ठ भक्त थे। वे श्रीहरि को भगवान मानकर ध्यान करते थे। इससे आनंदजी संघाडीया को रामानंद स्वामी से कहा कि;'' स्वामी यह गोरधनभाई तो आप को छोडकर ये सहजानंद स्वामी का ध्यान करते है।'' तब सद्. रामानंद स्वामीने कहा कि; वह सहजानंद स्वामी ध्यान करने योग्य है। उसका प्रताप देखोंगे तब मालुम होगा। इस तरह श्रीहरि का

प्रताप कहकर रामानंद स्वामी पंदरह दिनो तक मांगरोल में रहे।

मांगरोल से सब लोज आये। आस पास के गाँव के भक्त दर्शन को आते थे। रामानंद स्वामी भी अधिक आनंदित होकर कथा करते। आवल के पते मंगवाकर नीलकंठजी के शरीर पर बंधवाते तब आसुरी बुद्धिवाले रघुनाथदास कहते है कि; ''स्वामी बुरा कर रहे है इस हरे पत्ते को तोडने पर पाप लगता है। अब स्वामी नीलकंठ को ही देखते है।'' यह बात सुनकर स्वामीजी को बडा दुःख हुआ। फिर हरिभक्तो को बुलाकर स्वामीजीने कहा कि; ''यह वर्णी तो अक्षरातीत है। उसकी महिमा अकल और अमाप है। कोटि ब्रह्मांड का प्राण नाश करके उसका मरहम इस वर्णी पर लगाए फिरभी पाप न लगे और उसके विपरीत अपार पूण्य होगा ऐसे वर्णीजी है। इस वर्णी का प्रभाव आपको आगे जाकर जानने को मिलेंगा। और यह रघुनाथदास तो दैत्य है। उसका अवगुण भी आगे जाके मालुम पडेगा। इस तरह सहजानंद स्वामी के अैश्वर्य और प्रताप की बात करते रामानंद स्वामी पंद्रह दिन तक लोज गाँव ठहरे।

लोज से श्रीहरि को साथ लेकर रामानंद स्वामी माणावदर आये। मयाराम भट्ट के घर निवास किया। माणावदर के राजा गजेफरखान बांटवा रहते थे। उसको किसी मनुष्यने कहा कि; ''एक महापुरूष माणावदर आये है और वह खुदा कहलाते है''। ऐसा सुनकर महिपतिने नवाबको रामानंद स्वामी के पास भेजा। उसने रामानंद स्वामी को कहा कि; ''आप खुदा कहलाते हो यह बात सही है ? '' तब रामानंद स्वामीने कहा कि;''हम तो फकीर है'' लेकीन हम तो अल्लाह की इच्छा से गादी पर बैंठे है। लेकीन अब अल्लाह आये है। उसकी इच्छा के जरिए उसको गादी फिरसे लौटा देंगे। ऐसा कहकर उसने चमत्कार दिखाया। यह चमत्कार देखकर महिनाथ नवाब आश्चर्य में पड गये। बांटवा जाकर महिपति को सब बातें बताई।

रामानंद स्वामी माणावदर से मेघपुर पहुँचे । वहाँ भक्त रामभाई के घर निवास किया । और अन्य भक्त भी श्रीहरि और स्वामी जी की सेवामें तत्पर हुए । वहाँ रामानंद स्वामीने रंगणंचमी का उत्सव किया । तब हजारों भक्तजन दर्शन के लिए आये थे । उसने रामानंद स्वामीने कहा कि; ''यह वर्णी बहुत बडे है उसके आगे सब छोटे है ।'' इस तरह श्रीहरि की प्रसंशा करके सब को आनंदित करके वहाँ से भाडेर आये । भाडेर से जमनावड होकर धोराजी पधारे । धोराजी में भी रामानंद स्वामीने श्रीहरि के प्रताप की बहुत बाते करके भक्तजनो को निःसंशय किया । गाँव गाँव से भक्तजनों आये थे ।

फरेणी से भी रामभाई सोनी आदि हरिभक्त आये थे । उसने रामानंद स्वामी को प्रार्थना करके कहाँ कि; ''श्रीहरि को साथ लेकर हमारे गाँव पधारना'' । स्वामीजीने कहा कि; ''कल जरूर आयेंगे ''। इस तरह रामानंद स्वामी के आशीर्वाद मिलते ही आनंद विभोर होकर सभी भक्त फरेणी आये । स्वामी एवं श्रीहरि के सामैया (अगवानी) की पूर्वतैयारी करने लगे । श्री हरि स्वामी और दुसरे भक्तो के निवास की सुविधा महिमापूर्वक की । दुसरे दिन श्रीहरि को साथ लेकर स्वामीने धोराजी से फरेणी आने का प्रयाण किया । संदेश मिलते ही फरेणी के भक्तजन अगवानी लेकर गोइडा तक आये । स्वामी और श्रीहरि को सुशोभित रथ में बिठाया । मुक्तानंद स्वामी आदिक संतो को भी योग्य वाहन में बिठाया । यह गाँव परापूर्व से गोंडल राज्य में आता था । इससे गोडल के राजाने भी वहाँ से ढोल-नगारें भिजवाए थे । बेन्ड बाजे के साथ ढोल, त्रांसा, शहनाई गुंज उठे ।

''मेरे आज प्रीतम घर आये''

आदि कीर्तनो के सुरों से वातावरण भक्तिमय बन गया कीर्तन मंडली के कीर्तन करने वाले **''व्हाला रमझम करते कान''** ऐसे कीर्तनो के साथ नृत्य करने लगते । स्त्री भक्त भी ।

''अक्षरके वासी व्हालो आये अवनी पर''

इस तरह फरेणी के भक्तोने गाते बजाते भावपूर्वक रामभाई सोनी के घर पधारे । जहाँ अभी गुणातीतानंद स्वामी की आज्ञा से ब्रजानंद स्वामी के द्वारा कराया हुआ पुराना मंदिर है । वहाँ ही स्वामीने अपना निवास किया । सब भक्त स्वामी की सेवामें सेवारत थे । शाम की सभा वेलाभाई सोनी के आंगन में पीपल के पेड के नीचे हुई । सभा में फरेणी के वेलाभाई, गोबरभाई , कानजीभाई, दोरामभाई, करशनभाई , विरजीभाई और वैरागी हरिदास आदि भक्तजनों और अमुलाबाई, जीवीबाई और केशरबाई आदि स्त्रीभक्तों थे । रामानंद स्वामी फरेणी आये है यह जानकर गुंदाला से करमशीभाई, आनंदजीभाई, लाखाभाई, भीखाभाई एवम् केशराबाई आदि स्त्री भक्त भी फरेणी आये । कथा वार्ता और आशीर्वादो से रामानंद स्वामीने सब को आनंदित किया । आनंदविभोर होकर रामभाईने स्वामीजी को पूछा कि ''स्वामी ! अब फिर कब पधारोंगे । और कब अपनी दर्शन सेवा का लाभ देंगे ? स्वामीजीने कहा कि; ''यह सहजानंद स्वामी को हमारी गादी देकर यहाँ से हम आखरीबार आयेंगे । आप तो हमारे ही हो । इससे यहाँ पर हम अवश्य आयेंगे ।'' इस तरह आश्वासन एवं आशीर्वाद के साथ रामानंद स्वामीने यहाँ के भक्तो को आनंदित किया । फरेणी से स्वामी दुधीवदर और कंडोरणा गये ।

कंडोरणा से गोंडल, बंधिया, खोखली, सांकली, होकर जेतपुर आये । भीम एकादशी, ज्येठ पूनम और जलयात्रा का उत्सव भी वहाँ ही कीया । इस तरह संवत १८५७ का साल पुरा हुआ । संवत १८५८ की सालमें भी रामानंद स्वामी के साथ श्रीहरि भी गाँव गाँव घुमे । जेतपुर से स्वामी श्रीहरि के साथ भाडेर पधारे । वहाँ आषढ सुदी ११ व्रत करके धोरजी पधारे । धोराजी से फरेणी पधारे । वहाँ रामजी सोनी के घर एक दिन और एक रात्री को ठहरे । सामको बहुत बडी सभा का आयोजन हुआ । सभामें रामानंद स्वामीने यह शरीर क्षणभंगुर है कह कर कहा कि; ''हमारे देह का भी कोइ निर्धार नही है ।'' अब तो भगवान की इच्छा होगी तब तक जीयेंगे । भगवान की दि हुई गदी पर बेठे है । अब प्रकट भगवान हमको मिल गये है । उसकी जब इच्छा होगी तब उसको गदी सोंप देंगे । ऐसे मार्मिक वचनो से रामानंद स्वामी ने भक्तजनो को आशीर्वाद दिया । दुसरे दिन फरेणी से जेतपुर, सांकळी होकर भाडेर आये । भाडेर से पीपलाणा, आखा होकर अगतराय आये । अगतराय से कालवाणी होकर मांगरोल आये । मांगरोल में जन्माष्टमी का उत्सव किया । गणपति उत्सव भी वहाँ ही कीया । गाँव गाँव और देशोदेश से कई भक्तजन दर्शन के लिए आये थे । वहाँ से श्रीहरि को साथ लेकर स्वामी लोज पधारे । श्राद्धपक्ष तक वहाँ ठहरे । रामानंद स्वामी कहते है कि; ''हे भक्तों ! यह आखरी मिलन है ।'' इसका मर्म पर्वतभाई ही समझते थे । और कोई इस मर्म को नही समझ सकते । इस प्रकार स्वामी सभी भक्तजनों कों आनंद देते हुए पंचाला आये ।

पंचाला के राजा मनुभा उसका पुत्र झीणाभाई और गगाभाई आदि भक्तजनोने भी स्वामीजी का बडा सन्मान करके गाँव में ही

निवास कराया । वहाँ सद्. रामानंद स्वामी और श्रीहरि की भाव से पूजा करके तरह तरह का भोजन कराया । फिर रामानंद स्वामीने राजा मनुभा को कहा कि; '' यह आपके दोनों लडके बहुत पूण्यशाली है । और वो बहुत अच्छा काम करेंगें ।'' ऐसा कहकर दोनो पुत्रो को रामानंद स्वामीने आशिर्वाद दिया । श्रीहरिने भी झीणाभाई की बहुत प्रसन्नसा की । और कहा कि; ''उसके हाथ से सत्संग का बडे अच्छे कार्य होंगे ।'' फिर रामानंद स्वामीने राजा को कहा कि; ''मैंने आपको कहा था कि सर्वोपरी भगवान आपके यहाँ आयेंगे; यह यही वर्णीजी है । इस तरह श्रीहरि की सबको जान पहचान करा के रामानंद स्वामी दो दिन तक ठहरने के बाद माणावदर गये । वहाँ मयाराम भट्ट के वहाँ ठहरे । माणावदर से निकले तब माणावदर के भक्तोने कहा कि; ''स्वामी फिर जल्दी आना'' तब रामानंद स्वामीने कहा कि;''अब तो हरि की इच्छा की बात है । कयुंकि अब इस देह का कोई भरोसा नही हैं । यह देह तो नश्वर है । यह देह चिरंजीव नहीं है । इसलिए कल भी किसी को मालुम नहीं । इसलिए दर्शन करलो ।'' यह कहकर माणावदर से निकलकर पीपलाणा, नावडा, मेघपुर होकर स्वामी भाडेर पधारे । वहाँ दशहरा का उत्सव करके रामानंद स्वामी श्रीहरि के साथ धोराजी, कंडोरणा, बंधिया होकर जेतपुर पधारे ।

२.१८ पट्टाभिषेक

जेतपुर में भी रामानंद स्वामी ने स्थापित किया हुआ सदाव्रत चलता था । स्वामी का मुख्य शिष्य उन्नड खाचर अधिक भावूक थे । भाणाभाई कापडिया भी स्वामीजी का अनन्य शिष्य थे । उसके वहाँ स्वामीने निवास किया । यहाँ के

भक्तजनों स्वामी और श्रीहरि की सेवामे रत थे । मुक्तानंद स्वामी आदि संत और पर्वतभाई एवं अग्रगण्य हरिभक्त को स्वामीजीने अपने पास बुलाया । स्वामी की आज्ञा से सब संत-भक्त स्वामी के पास आये । स्वामीजी ने सबको कहा कि; ''हमे यह देह धारकर जो कार्य करना था वह पूर्ण हुआ है । हम जिसकी प्रतिक्षा करते थे वो अवतारी पुरूष आ गये है । अब यह सहजानंद स्वामी को गद्दी सोंपने का हमारा संकल्प है । यह अवसर को ध्यान मे रखते हुए सर्व सत्संग समाज को आमंत्रित करके महोत्सव करने की हमारी आकांक्षा है ।'' यह आज्ञा सब भक्तजनों ने सिर पे धारण की और कहा कि; ''हे स्वामी ! आपकी इच्छा वही हमारा प्रारब्ध है और वही हमारा सुख है । यही हमारा कर्तव्य'' भक्तों की ऐसी भक्ति को देखकर स्वामी अति प्रसन्न हुए । और वेदज्ञ ब्राह्मणो को बुलाकर पट्टाभिषेक का शुभ सुकन निश्चित किया । कारतक शुदि एकदशी का ।

स्वामी की आज्ञा के अनुसार सब संत हरिभक्त महोत्सव की पूर्व तैयारी करने में लग गये । सभी सेवाओं की समिति नियुक्त करने में आयी । आमंत्रण पत्रिकाएँ तैयार हो गई । देश-देशांतर मे भेजी गई । हजारों भक्तजन इस उत्सव का लाभ लेंगे । इस से घी, गुड, आटा, अन्न, चावल, दाल और सूकामेवा के भंडार भरे गये है । देशदेशांतर मे से हजारों भक्तजन आये है । साधुएँ, ब्राह्मण, विद्वाने, राजाएँ, वेपारी, धनपतिओं को योग्य निवास दिया गया । होम हवन आदि के लिए विशाल यज्ञ मंडप तैयार हुआ । विशाल सभामंडप की सुंदर रचना की गई । इस तरीके से पट्टाभिषेक महोत्सव का प्रारंभ हुआ । सहजानंद स्वामी को यज्ञ के पास परधारकर रामानंद स्वामीने तिलक करके सहजानंद स्वामी का पट्टाभिषेक किया । **''शतं जीव शरदः''** शुभाशीर्वाद दिया । ब्राह्मणोने वेदमंत्रो से चिरायु

आशीर्वाद दिए । संगीत कलाकारने भी सहजानंद स्वामीजी को सुरीले कंठ से नवाजे ।

इस तरह सहजानंद स्वामी का पट्टाभिषेक पुरा होने के बाद विशाल सभा का आयोजन हुआ । राजाएँ, ब्राह्मण, सदगृहस्थ, देवो, ईश्वरोने अलग अलग तरह की भेट सोगादे सहजानंद स्वामी को अर्पण की गई । अंतमें रामानंद स्वामी के पास से सहजानंद स्वामीने दो वर माँगे । रामानंद स्वामीने भी भेट सोगाद के प्रतिक के रूपमें दो वरदान दिए । और आशीर्वादो की वर्षा बरसा कर आखीरमें कहा कि; ''यह सहजानंद स्वामी को मेरे स्थान पर मानना पूजना एवं उपासना करना'' यह शुभदिन था संवत १८५८ की कारतक सुदि एकादशी का ।

३ प्रकरण

फरेणी स्मृति

३.१ रामनंद स्वामी की तीरोधान लीला

पट्टाभिषेक महोत्सव पूर्ण हुआ । स्वामीने शांति का साँस लीया और सोचा कि, पुरुषोत्तम नारायण की इच्छा से दुर्वासा के शापसे जो कार्य करने के लिए मैने नरतन धारण किया वे सब कार्य पूर्ण हुए । प्रगट पुरुषोतम को मैने मेरी गद्दी पर बिठाये । दुर्वासा के शाप से जो भी ऋषिओंने जन्म लिया है, उनके संकट यहां श्री हरि नाश करेंगे..... और दुर्वासा के शाप से मुक्त करेंगे । अंतर मे ऐसा विचार करके, अपने को कृतार्थ मानकर शरीर को त्याग ने का विचार किया इसलिए उन्होंने बुखार अंगीकार किया, और ऐसा निर्णय किया कि यहाँ जेतपुर में एकांत स्थान नही है । इसलिए फरेणी जाना और वहाँ पर शरीर त्याग कर दिव्य होना । यह बात सर्व सत्संगीओं को स्वामीने कहीं, इसलिए सर्व उदास हुअे । सब को शांत्वना देकर स्वामीने फरेणी की ओर प्रस्थान किया । एक रथ में स्वामी श्रीहरि के साथ बिराजे, मुक्तानंद स्वामी आदि मुनि यथा योग्य रथ में बिराजें । कई पार्षद हरिभक्तों को साथ लेकर परम विरक्त स्वामी फरेणी की ओर चलें । फरेणी में संदेश मिला तो भक्त सामने आ गये । जिसमें गोवाभाई, वेलाभाई, कानजीभाई और रामजीभाई लुणाभाई आहिर भी साथ में थे । बढई मिस्त्रीयों में

कृष्णजी, वीरजी और रामभाई थे । उनके साथ वैरागी हरिदास भी थे । सभी अनेक ढोल, नगारे संगीत के साथ सामने आये । अमूलाबाई, केशरबाई और जीवीबाई जैसी अनेक स्त्रियाँ भी मंगल गीतों के साथ अगवाई में जूडी । इसी प्रकार गुंदाला के हरिभक्त आणंदजीभाई, करमशीभाई वणिक, लाखाभाई कुम्हार, मीठाभाई सोनी, केसरबाई आदि भी अगवाई में जूडे हुए । सर्व भक्तजन आनंदित होकर जय जयकार करने लगे कइ भक्त हर्ष के साथ साष्ट्रांग प्रणाम करते हैं । इसी प्रकार भक्तो कें भाव ग्रहण करते करते सद्.रामानंद स्वामी फरेणी गाँव में प्रवेश किया और वेलाभाई सोनी के घर आ पहुँचे ओर वहाँ आश्रय किया । ब्राह्मणो के पास भोजन तैयार करवा के ठाकोरजी को नैवेर्धं का थाळ धराया । रामानंद स्वामी और श्रीहरिने भोजन लिया । संत पार्षदोंने भी प्रेम से प्रसाद लिया ।

सद्. रामानंद स्वामीने मागसर सुद ११ का पर्व बडे धामधूम से मनाया कयोंकि अपने परम भक्तों को प्यार देने का यह अंतिम पर्व था । यह पर्व के दर्शन और स्मरण भक्तों की अंतिम प्राप्ति बन सके एसी उनकी करुणा थी । इसलिए इस पर्व के दर्शन और सेवा का लाभ लेकर भक्तोने अंतर में उतार लिया । मागसुर-सुदी -१२ के दिन संत-बाह्मणों और सत्संगीओं को प्रिय (इच्छित) भोजन करवाया । ब्राह्मणों को मनोवांच्छित दान-दक्षिणा देकर खुश किया ।

जेतपुर से निकले उस समय से ही स्वामी उदासी का ताव ग्रहण करके आये थे । खाते-पीते, बोलते-चालते सभी क्रिया में स्वामी के चहेरे पर उदासी का भाव नजर आता था । यह उदासी को सिर्फ श्रीहरि, मुक्तानंद स्वामी और पर्वतभाई ही जानते थे । भोजन के बाद स्वामीने निद्रादेवी की सेवा का अंगीकार किया । हररोज से

ज्यादा आज स्वामीने विशेष आराम लिया । क्योंकि स्वामी उदास तो थे ही यह मर्म (रहस्य) को श्रीहरि और मुक्तानंद स्वामी यथार्थ जान सक्ते । उस दिन शाम को रामानंद स्वामीने एक सभा का आयोजन करवाया । इस सभा में सद्. रामानंद स्वामी उच्च आसन पर बिराजे । श्री हरि और मुक्तानंद स्वामी यथा स्थान पर विराजे । स्वामीने नासिकाग्र दृष्टि करके अपनी उदासीनता प्रकट करके करूणा से कहने लगे कि; ''इस लोक में युधिष्ठिर, अर्जुन, वसुदेव और अक्रुर आदि ने देह धारण किया वे सब देह त्यागकर गये है इसलिए ये देह नाशवंत है । उसका हर्ष शौक नही करना । हमने भी यह देह धारण किया है । जिससे जो कार्य करना था वह सब पूर्ण हुआ है । इस नीलकंठ ब्रह्मचारी को हमने हमारी धर्मधुरा सौंप दी है ..... वह आपकी रक्षा करेंगे और सर्व प्रकार के कष्ट को दूर करेंगे । यह हमारे से भी विशेष समर्थ है । इसलिए चिंता मत करो मेरे पीछे दुःख या आत्महत्या मत करना । सर्व धीरज रख के मेरी आज्ञा का पालन करें । इस प्रकार अनेक कथन के द्वारा स्वामीने अपने अवतार कार्य का मर्म बताया । सर्व भक्तजनोंने टूटे हुअे हृदय से यह मर्म वचन सूना । अब प्रतिदिन स्वामी का बुखार बढता ही जाता है । स्वामी बिमार है यह संदेश गाँवो और देश-विदेश में पहुँच गया । माणावदर से मयाराम भट्ट, मांगरोल से गोवर्धनभाई, पीपलाणा के नरसिंह महेता, मेघपुर के लाडकीमाई आदि भक्त आ गये । इस प्रकार कच्छ, काठियावाड, गुजरात और झालावाड के हजारों भक्त स्वामी के दर्शन करने के लिए आए । और इसी तरह यहाँ फरेणी गाँव में स्वामी के अनन्य शिष्यें हजारों की संख्यामें एकत्रीत होने लगे ।

सभी भक्तजनों साष्टांग प्रणाम करके स्वामी सन्मुख बैठ गये स्वामी के उदासी चेहरे का दर्शन करके सौ भक्तजनों शून्य मनस्क भावरहित मनमें चिंतित बन गये ।

संवत १८५८ के मागशर सुद १३ ता. १७-१२-१८०१ गुरूवार के दिन सुबह स्वामीने दैनिक क्रिया खुद कि । फिर पवित्र आसन उपर ध्यान मुद्रा में बैठ गये । अब स्वामी की अंत अवस्था है । ऐसा जानकर संतो-भक्तों कीर्तन-भजन करने लगे । उसी समय स्वामीने भौतिक देह त्याग कर दिव्य स्वरूप धारण किया । स्वामी अब ऋषि शाप से मुक्त हो गये । और बदरीकाश्रम पधारे । स्वामी रामानंद के हजारो शिष्य, संतो तथा हरिभक्त दुःख रूपी समुद्र में डूब गये । पालकी को अलंकृत करके स्वामी के नश्वर देह को पालखीमें बिराजीत किये , अबील, गुलाल, चंदन, पुष्पहार से पूजन किया रामदास स्वामी, श्रीहरि, मुक्तानंद स्वामी और मयाराम भट्टने पालखी उठायी । संत हरिभक्तों कीर्तन-धून करते आगे चले । भद्रावती वाव के किनारे जाकर शास्त्र विधिनुसार संस्कार किया । और संस्कार विधि पूरी करके अपने स्थान पर गये । श्रीहरिने सभी को धीरज रखने को कहा और सब भक्त अपने -अपने घर चले गये ।

३.२ संप्रदाय की प्रथम धर्मसभा

रामानंद स्वामी अंतर्धान हुए बाद में श्रीहरिने दश दिन तक गीता की कथा करवाई और इस प्रसंग पर देश-विदेश के भक्तजनों को आमंत्रित किया । श्रीहरिने भद्रावती वाव तट पर दशाहादि और एकादशा विधि के अनुसार किया । द्वादशा और श्रावणी श्राध्य भी शास्त्र के अनुसार किया । ब्राह्मणों को प्रिय भोजन करवाया..... और दान भी किये । नरतनु-धारी श्रीहरि ने धर्म की स्थापना के लिए सर्व को संदेश देने सर्व क्रिया वेदविहीत करके ओर तेरहवाँ दिन भी पूर्ण हुआ । चौदहवें दिन भगवान श्रीहरिने प्रातःकाल में पूजादिक नित्य कर्म किया । इसके बाद विशाल सभा का आयोजन किया सभा स्थान में रमणीय सिंहासन पर स्वयं श्रीहरि बिराजमान हुए । भगवान

श्रीहरि के आगे के भाग में मुकुंदानंद आदिक नैष्टिक ब्रह्मचारी बैठे, उनके पीछे मुक्तानंद आदि संतो बैंठें । उनके पीछे मयारामभट्ट आदि ब्राह्मणों उपस्थित रहें । उनके पीछे मुलजी आदि क्षत्रिय भक्तों और उनके पीछे पर्वतभाई आदि वेश्य भक्त उपस्थित रहे और उनके पीछे कृष्णदास शुद्र भक्त बैठे । इस सभा में क्षत्रिय राजवी राजाभाईने श्रीहरि के सिर पर छत्र धारण किया । कुंवरजीने चामर पकडा और गोविंदरामने दूसरा चामर पकडा । बडे संत रामदासजी हाथ में रूमाल रखकर सेवा में रहे । वेराभाईने हाथपंखा (विंझणो) लिया । और कई हरिभक्तोंने वस्त्र और आभूषणों से श्रीहरि की पूजा की । फिर सभी एक मन से सभामें बैठे ।

प्रथम आश्चर्य की घटना यह है कि प्रगट पुरूषोत्तम भगवान श्री स्वामिनारायण के गुरू पद पर प्रथम धर्मसभा लेने का अलभ्य लाभ भारत के कोई भी शहर को मिला नहीं किन्तु फरेणी जैसे एक छोटे से गाँव को मिला है । यह गाँव और प्रदेश भाग्यवान है । संवत १८५८ के मागसर वद ११ दिनांक ३१-१२-१८०१ गुरूवार के शुभ दिन सौराष्ट्र प्रदेश के फरेणी नामके छोटे से गाँव में संप्रदाय की प्रथम धर्मसभा मिली । शतानंदमुनिने 'सत्संगिजीवन' में इस सभा का अति मनोहर मूर्तिमंत वर्णन किया है । यह सभा अनेकविध कारणो से अजोड थी । मोक्ष पाने की इच्छावाले को सच्चा भागवत धर्म का मार्ग दिखाने और धर्म का आचरण करने के मंगल आशय से पूर्ण पुरूषोतमने खूद प्रगट होने की महद् कृपा की थी । वह भागवत धर्म के सिद्धांत की सहजानंद स्वामीने अपने सभामें समझ दि थी । इसलिए इस सभा का महत्व और जितनी प्रसंशा कि जाय उतनी ही कम है । जिसने एक वर्ष पूर्व ही भागवती महादीक्षा ग्रहण किया था । उनकी उम्र २१ (इक्कीस) वर्ष की भी पूर्ण नही हुई ऐसे सहजानंद स्वामी को रामानंद स्वामीने अपने पद प्रतिष्ठित किया ।

नये और बिना अनुभव वाले और सर्व गुरू के गुरू भगवान श्री स्वामिनारायण के अध्यक्ष पद पर यह सभा हुई थी । यह सभामें गुरूपद पर बैठने की जिसकी योग्यताएँ है ऐसे शिष्यों शांत और स्वस्थ बैठे थे । वे समाधिनिष्ठ जितेन्द्रीय और महाविद्वान थे । ऐसे कई पुरूषों और स्त्रियाँ यह सभा में बैठे थे । रामानंद स्वामी ने अनुगामी की जो पसंदगी की थी, उस निर्णय की स्वीकृति नही हुई थी ऐसे भी आश्रित सभामें बैठे थे । रामानंद स्वामी की कीर्ति सूनकर उनके दर्शन-समागम से कृतार्थ होने की इच्छा से भी कई भक्त यह सभा में उपस्थित थे । किन्तु स्वामी अंतर्धान हुए यह संदेश से सर्व उदास होकर बैठे थे । कई विदेशी विद्वानों और यात्रियों भी यह सभामें बैठे थे ..... और अब आगे क्या किया जाए ? उसके बारेमें मनोमंथन हो रहा था । कई लोगो के मनमें शंका थी । तो कई लोग तटस्थ रहने का प्रयास कर रहे थे । परंतु यह सभामें क्या होगा यह देखने और जानने की तीव्रइच्छा सभी में थी । फिर भी कई लोगों के अंतर में नये गुरू प्रत्ये आदर और अलौकिक भाव स्वाभाविक से छलकता था ।

सभामें कुछ नया होगा । ऐसा तो सभी को लगता था । सभा की बैठक व्यवस्था और शिस्त-शिष्टाचार भी अलग प्रकारका और आकर्षक था । पहेले तो सभा में कोइ भी किसी भी जगह पर बैठ जाते थे । पर आज तो सर्व भक्त वर्णानुक्रममें योग्यता से बैठे थे । सभा में परम शांति थी । किसी को ऐसा लगता था कि सभा में रामानंद स्वामी के शोक के निराकरण के लिए आत्मा-अनात्मा और सांख्य-योग की बाते होंगी । किसी की मान्यताएँ ऐसी थी कि सभामें रामानंद स्वामी के महत्व की लीला प्रसंग याद की जायेगी, तो कई ऐसा मानते थे कि सामान्य नीति विषयक की बात होगी । जैसे की कोई ऐसा मानते थे कि रामानंद स्वामी की उत्तरक्रिया का

खर्च माँगा जाएगा । नये गुरू क्या करते है और क्या कहते है ये देखने और सूनने के लिए कई लोग बैंठे थे । ऐसी अलौकिक सभा की गरीमा को संपूर्णतः जाँचकर मुकुंदानंद ब्रह्मचारी श्रीहरि को नमस्कार करके कहने लगे कि; ''हे नारायण मुनि! आप हमारे गुरू स्वरूप है । सहज, आनंद देनेवाले 'सहजानंद' है और अनेक गुणों के भंडार हो । हे ! महाराज ! आज से स्वामी के स्थान पर आप ही है । ताकी आप हमारे सबके स्वामी है और हम सब आपके शिष्य है । हम आदरपूर्वक आपकी आज्ञा का पालन करेंगे । इसलिए हमें क्या करना है , क्या न करना है इस विषय में आप यथार्थ जानते है तो हमें यथा-योग्य उपदेश दिजिएँ ।

उसी प्रकार सर्व भक्तोंने निष्कपट भाव से कहा इसलिए श्रीहरि धर्मशास्त्र के अनुसार धर्म मर्यादा को दृढ करने कहने लगे ''हे भक्तों ! आप सौ सूनिए आप सब मेरे है यह मैं जानता हूँ । इस में थोडा सा संदेह नही । आप सर्व मुमुक्षु है । इसलिए देव दुर्लभ यह मानव देह प्राप्त करके आत्मकल्याण का साधन करते हैं । ताकि हे भक्तों ! रामानंद स्वामीने जिसे जो आज्ञा दी होगी, जिसे जो कार्य करने कि प्रेरणा दी होगी , वह कार्य निष्ठापूर्वक करना ..... तथा स्वामी के उपदेश दिये स्वधर्म का योग्य पालन करना ।

धर्मादपेतं यत्कर्म यर्धपि स्यन्महाफलम् ।
न तत्सेवेत मेधावी शूचिः कुसलिलं यथा ॥

कोई कर्म महाफल देनेवाले हो, पर धर्म रहित हो, ऐसे कर्म का आचरण बुद्धिशाली लोगों को करना नहीं । गंदे पानी की तरह उसका सेवन नही करना चाहिए । शास्त्रज्ञ आर्य पुरूषों जिस कार्य की प्रसंशा करे ! उसका नाम 'धर्म' और शास्त्रज्ञ आर्यपुरूषों जिस कार्य की निंदा करे उसका नाम 'अधर्म' । धर्म से संसार के संकट में रक्षा होती है । विर्धा, धन, शरीर, धर्म से ही प्राप्त होते है

। शूरवीरता और निरोगीता धर्म से ही मिलते है । धर्म से अच्छे कुल में जन्म मिलता है । शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध यह पंच विषय संकल्प मात्र से ही मिलते है । धर्म से अच्छे कुल में जन्म लेकर शांतिप्रद जीवन जी शकते है । यह धर्म का फल है । 'मुझे धर्म का आचरण करना है ' ऐसे शुभ विचार के साथ जो कोई प्राण त्याग करता है तो भी उसे स्वर्ग सुख प्राप्ति होती है । तो धर्म का आचरण करने से स्वर्ग का सुख मिले इस से क्या कहेना ? धर्म से मिली संपत्ति सुख देनेवाली होती है । अधर्म से प्राप्य संपत्ति दुःख का कारक है । धर्म ही शाश्वत सुख का कारन है । इस प्रकार धन प्राप्ति की इच्छा रखनेवाले भी धर्म का त्याग न करें । धर्म के आचरण से धार्मिक संतति की वृद्धि होती है । धर्म से धन मिलता है, धर्म से विषय भोग सुख और ज्ञान मिलता है । धर्म के पालन से जगत में कोई भी वस्तु दुर्लभ नहीं है । ऐसा मैं मानता हुं । जिस प्रकार पंखी पानी से भरे सरोवर की तरफ उड चलते है इसी प्रकार सर्व प्रकार का सुख धर्मवाले पुरूष तरफ गति करता है धर्म के अनुष्ठान से राज्य और आरोग्य मिलता है । और अणिमादिक अष्टसिद्धियें भी मिलती है । आलोक-परलोक में जो भी कुछ सुख मिलता है वह धर्म से मिलते है मानवमात्र समृद्ध बनते है और अधर्म से मानवमात्र का क्षय होता है । इसलिए धर्म का ही आचरण करना पर अधर्म का आचरण करना ही नहीं । श्रृति और स्मृति में बताये गये धर्म का आचरण करनेवाले मनुष्य आलोक तथा परलोक में महान कीर्ति को प्राप्त करते है । और उत्तम सुख के अधिकारी बनते है ।

धर्म का स्वरूप क्या है ? 'धर्म' शब्द में अर्थ का सागर सामेल है । मूल 'धृ' धातुने 'मन' प्रत्यय जोडने से 'धर्म' शब्द बनता है । **'धरति इति धर्म '** अथवा **'ध्रियते इति धर्म '** यह उसकी उत्पत्ति है अतः' धर्म शब्द में दो बाबत का समावेश होता

है । धारण करते वे' और दूसरा जिसे जिस के द्वारा धारण करते है वे । जो धारण करते है और जिसे धारण किया जाता है उसको निश्चय धर्म कहाँ जाता है । जैसे कि **' धर्म एव हतो हन्ति, धर्मो रक्षति रक्षितः** । जो धर्म का नाश करता है उसीका नाश धर्म करता है और जो, धर्म की रक्षा करता है उसीकी रक्षा धर्म करता है । तथा **धर्मे सर्व प्रतिष्ठितम्** ।' धर्म मे ही सब सम्मिलित है ।

एक एव सुहृद्धर्मो निधनेडप्यनुयाति यः ।
शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यद्धि गच्छति ॥

एक धर्म ही जीवन का सच्चा मित्र है । शरीर नाश होने पर धर्म ही उनके साथ अनुसरण करता है । दूसरा सब शरीर के नाश होने से नाश होता है । जो मनुष्य धर्म को हिनता है उसे धर्म हिनता है । जो मनुष्य धर्मकी रक्षा करता है उसकी रक्षा धर्म करता है । अतः मन, कर्म, वचन से धर्म का आचरण करें ।

काम, क्रोध का वेग, उद्वेग, भय, लालच या अपने प्राण की रक्षा के लिए कभी भी धर्म का त्याग नही करे । अधर्म का आचरण करनेवाले मनुष्यों को अवश्य दुःख मिलता है । ऐसा विचार करके धर्म का आचरण करें । इसमें जैसा भी कष्ट सहना पडे फिरभी अपने मन को अधर्म में सम्मलित नही करना । मनुष्य का जीवन और मन घास के अग्र भाग में रहे पानी के बुंद जैसा चंचल है । ताकी धर्म का पालन तत्काल करना । अपने आपको अजर , अमर मानकर विधा तथा अर्थ का उपार्जन करना, तथा मेरे केश पकड कर काल मेरे पीछे भाग रहा है । यह मानकर धर्म का पालन करना । जिसका एक दिन भी धर्माचरण बिना बितता है वे मनुष्य धौंस की तरह व्यर्थ साँस लेता है । ऐसा सयाने पुरूष कहते है । भिक्षा पात्र लेके माँग कर जीने से भी धर्म का आचरण करने वाले धनवान है । भिक्षा पात्र लेके भीख माँग कर जीकर भी धर्मका आचरण कर पाता हूँ तो मैं

महान धनवान हूँ। क्योंकि धर्म ही सत्पुरूषों का सही धन है। स्वर्ग के अमृत की तरह धर्म का त्याग करके समृद्धि नष्ट नहीं होती। धर्म की ऐसी महिमा है कि कोई साधन के द्वारा अज्ञानरूप अंधकार नष्ट नही होता। परंतु धर्म से ही नाश होता है।

धर्म छः प्रकार के है। ..... वर्णधर्म, आश्रम धर्म, वर्णाश्रमधर्म, गौणधर्म , नैमित्तिक धर्म और साधारण धर्म। इस प्रकार छ प्रकार के धर्म धर्मज्ञ आर्य पुरूषोनें कहा है। इसमें साधारणःधर्म की बात मैं आपको कहता हूँ।

क्षमाः– कोई भी मनुष्य शारीरिक अथवा मानसिक पीडा दे तो भी पीडा देने वाले के प्रति थोडा कुछ भी क्रोध न करे। तथा उसे पीटे भी नही ऐसे गुणों को 'क्षमा' कहाँ जाता है।

दया :–अपने संबंधी हो या अन्य वर्ग हो, मित्र हो या, फिर शत्रु हो तो भी आपत्काल में अपनी शक्ति अनुसार उनकी रक्षा करना वह 'दया' नामका गुण कहा जाता है।

अनसूया : किसी के गुणों में दोष का आरोपण नही करना तथा दूसरे के अल्प (तुच्छ) जैसे गुणों की प्रसंशा करना जिसको 'अनसूया' गुण कहा जाता है।

शौच : अभक्ष्य पदार्थ का त्याग लोक और शास्त्र में आनंदित सत्पुरूषों का समागम और अपने आप धर्ममें आचरण उसको 'शौच' नाम का गुण कहा जाता है।

अनायास : चांद्रायाणादि व्रत शुभ कर्मो होने से भी जो इससे शरीर को पीडा होती है तो ऐसा कर्म अतिशय नहीं करना। इसको 'अनायास' नामका गुण कहाँ जाता है।

मंगल : मन, कर्म, वचन से कोइ भी प्राणी का द्रोह नही करना। असत्य पदार्थो को त्यागना। और शास्त्रोक्त कर्म का अनुष्ठान करना इसे 'मंगल' नामका गुण कहा जाता है।

अकार्पण्य : अल्प (तुच्छ) पदार्थो में से भी सत्पात्र में उदारता से निरंतर दान करना उसे 'अकार्पण्य' नामका गुण कहा जाता है।

निःस्पृहता : अपने प्रारब्ध कर्म के आधार पर जो कुछ प्राप्त हुआ है इसमें संतोष मानना। मन से भी दुसरे के द्रव्य का मनन नही करना और शरीर वगेरे पदार्थो में आशकित मत रखना उसीको 'निःस्पृहता' नामका गुण कहा जाता है।

अन्नादिक का दान देना, भगवान की कथा सूनना, भगवान के कीर्तन करना, भगवान श्रीहरि का ध्यान करना, पाद सेवन करना, पुजन और वंदन करना, दास भाव से वर्तन करना। सखा/मित्र भाव से वर्तन करना और आत्मसमर्पण करना यह साधारण धर्म कहा जाता है। मधं–मांस का त्याग करना, आत्मघात नही करना, चोरी नही करना, कोई /किसी पर कलंक न चढाना, किसी देव की निंदा नहीं करना, अभक्ष्य खाना और पीना नहीं और हरि विमुख के मुख से कथा नही सूनना यह धर्म सर्व जाति और सर्व मनुष्यों के साधारण धर्म है।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र – यह चार वर्णो है तथा ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास – यह चार आश्रम है। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य यह तीन वर्णो को यज्ञोपवित नामका दूसरा जन्म है इसलिए तीनो को 'द्विज'कहा जाता है और शुद्र एक जाति कहा जाता है। यह चार वर्णो के अलावा दुसरे वर्णसंकर जाति के कहा जाता है। एक मुनि का कहना है कि ''ब्राह्मण को चार आश्रम की स्वीकृति करनी चाहिए। वैश्य, क्षत्रिय को तीन आश्रम की स्वीकृति करनी चाहिए परंतु सन्यासाश्रम की स्वीकृति नहीं करना। एक मुनिने ऐसा कहा है कि ''वैश्य और क्षत्रिय भी सन्यासाश्रम स्वीकार करें। और शुद्र सिर्फ गृहस्थाश्रम ही स्वीकार करे और

संकर वर्णवाले भी गृहस्थाश्रम ही स्वीकार करे, सधवा, विधवा, स्त्रियाँ रात-दिन भगवान की भक्ति करे, वैराग्यवाले जो संसार त्याग कर के प्रभु भजन करते है उसे साधु कहा जाता है ।

चार वर्णो और चार आश्रम के विशेष धर्म, पृथक पृथक कहता हूँ । यह धर्म वेद शास्त्रों संमत है यह बात ध्यान से सूनो ।

ब्राह्मणों के विशेष धर्म :

दम , तप , शौच , संतोष , शांति, (सरलता) आर्जव , अहिंसामय यज्ञ, मत्सर का त्याग, मित्रता, इर्षा का त्याग , अन्नादिक का दान, श्री कृष्ण की पूजा, निर्मल अंतःकरण, लाज , ज्ञान, विज्ञान, आस्तिकता, स्वाध्याय, सर्व मे समदृष्टि यह ब्राह्मणो का विशेष धर्म है ।

क्षत्रियों का विशेष धर्म :

वीर्य, तेज , शोर्य, धैर्य , उधंम, उदारता, स्थिरता, आत्मजय, उत्साह, अैश्वर्य, हिंमत, शस्त्र-वाहन परायण, दानेश्वरी, यज्ञ करने की रूचि ब्रह्मणपना, ब्राह्मण की पूजा, प्रभु की पूजा, प्रजा का पुत्र जैसे पालन करना । शरणागत का पालन करना यह क्षत्रियोंका विशेष धर्म है ।

वैश्यों के विशेष धर्म :

आस्तिकता, उधंम, निखालसता, ब्राह्मणो की सेवा, आदरपूर्वक गुरू-भक्ति, कृषि कर्म में रूचि, गोपालन में रूचि, दान न्ष्ठिा, बुध्धि यह वैश्य के विशेष धर्म है ।

शूद्रो के विशेष धर्म :

द्विजाती की सेवा, साधु की सेवा, गायो की सेवा तथा सदा निष्कामपूर्ण जैसे कार्यो करके धन प्राप्त करके और जीवन व्यतीत करे और इससे संतोष प्राप्त करे यह शूद्रो के विशेष धर्म है ।

इस प्रकार -चारें वर्ण के विशेष धर्म है ।

अब गर्भाधानादिक सोलह संस्कार शास्त्रों के आधार पर कहता हूँ । वह सूनो ।

(१) गर्भधान (२) पुंसवन-पुत्र प्राप्ति आशीर्वाद (३) सीमंत- सेंथा (बालो के बीच की लाइन) साफ रखना ताकी गर्भवती आन्नदित हो और गर्भ भी प्रफूल्लित हो । (४) जातकर्म- बालक के जन्म समय बालककी शुद्धि करना और दान देना । (५) नामकरण - बालक का नाम रखना (६) निष्क्रमण करना - चंद्रदर्शन (७) अन्नप्राशन -भोजन कराना (८) चौलकर्म - प्रथम बाल कटवाना/ मुंडन करवाना (९) कर्णवेध - बालकके कान बीधंना (१०) यज्ञोपवित (११) वेदारंभ - पढाई का आरंभ करना (१२) समावर्तन (१३) उद्वस्नान (१४) विवाहाग्नि का परिग्रह (१५) त्रेताग्नि संग्रह (१६) अग्नि संस्कार ऐसे सोलह संस्कार तीनो वर्णो के करने को कहा है । कन्या को कर्णवेव तब नव संस्कार करवाना है । तीन वर्ण- ब्राह्मण, क्षत्रिय और वेश्य को वेद मंत्र बोल कर विवाह कराया जाता है । शूद्र के नव संस्कार है और दश्वाँ संस्कार विवाह है । वह वेद मंत्र बिना करना ऐसा श्रृति-स्मृति का आदेश है । हे भक्तों ! श्रृति और शास्त्र के अनुसरण वर्णधर्म मैनें आपको कहाँ अब आश्रम के विशेष धर्म कहता हुँ वह सूनो ।

बह्मचर्याश्रम के विशेष धर्म

त्रिकाल संध्या प्रणाम करना, नित्य कृष्ण की पूजा करना, गुरू की सेवा करना, अल्प आहार करना, नाखुँन और बाल बढ ाना, कंगी से बाल मत सँवारना । मुंज की डोरी का कंदोरो, दंड (वेग,छडी) और कमंडल धारण करना, मृगचर्म रखना, दो कोपीन और दो बर्हिवस्त्र, कोट में कण्ठी रखना जनोई धारण करना, सर्व भोग की इच्छा का त्याग करना । स्त्री की बात कान से मत सूनना

। और मुख से कहना नहीं । स्त्री का स्पर्श करना नहीं ; स्त्री के साथ बोलना नही, स्त्री का रूप कभी मत देखना, स्त्री के संकल्प का भी त्याग करना । स्त्रियों के क्रिडा स्थान पर ब्रह्मचारियोंकों जाना नहीं, काष्ठ (लकडी) की या चित्रकी बनी स्त्री को ब्रह्मचारी स्पर्श मत करना और मत देखना । देवी की मूर्ति को स्पर्श और देखना मुक्ति है, जिस स्थान पर स्त्रियाँ स्नान करती है उसी स्थान पर ब्रह्मचारि को स्नान नही करना चाहिए । ब्रह्मचारी कभी माँस-मदीरा-पान भी नही कर सकता । किसी रोग के बिना दिन में सोना नही, द्रव्य रखना नहीं और रखवाना नहीं लोभ और क्रोध का त्याग करे । स्वाद और मान का भी त्याग करे । काम, क्रोध, लोभ, रस, मान का त्याग करके पंच वर्तमान का पालन करे । ऐसे ब्रह्मचारी भाव के साथ वेदो का अध्ययन करे । वेदों का अध्ययन खत्म करने के बाद ब्रह्मचारी का मन सकाम हो तो गृहस्थाश्रम स्वीकार करें । निष्काम हो तो नैष्ठिक ब्रह्मचर्य का पालन करे वह ऊर्ध्ववेता और ब्रह्मवेता कहा जाता है । ब्रह्मचर्यव्रत पालन की अवधि हो तो उसे उपकृर्वाण ब्रह्मचारी कहा जाता है । गृहस्थ होने की इच्छा हो तो गुरू को दक्षिणा देकर अध्ययन पूर्ण करके घर जाने के पश्चात् अग्नि और ब्राह्मण की गवाही में वेदविधिनुसार अपने वर्ण की कन्या से विवाह करें । यह ब्रह्मचारी के विशेष धर्म कहें, अब गृहस्थाश्रम के विशेष धर्म कहुँगा ।

गृहस्थाश्रम के विशेष धर्म

स्नान, संध्या, जप, होम, स्वाध्याय, विष्णुपूजन, तर्पण, वैश्वदेव, अतिथि सेवा, उधंम द्वारा धर्म के साथ द्रव्य का उपार्जन करना, पोषण करना, शरीर के संबंध में आसक्त न होना, कुटुंम्बीजनों को कष्ट मत देना । निश-दिन संत समागम करना, दुष्ट का संग मत करना, जातीय वृति के भाव से पर-स्त्री को देखना नहीं,श्राद्ध, पर्व और व्रत के दिन अपनी पत्नी स्त्री का त्याग करना, आपतकाल

बिना विधवा स्त्री को स्पर्श भी नही करना, माँ-बहन और पुत्री के साथ एकांत में मत रहना, व्रत-उधांपन आदि करना, चोरी मत करना, जुआ मत खेलो । शराब मधं-माँस आदि (आहार) का त्याग करना, आपत्ति के बिना उधार मत लेना, माता-पिता की सेवा करना और उनकी आज्ञा का पालन करना, श्रीमंत घराने वाले विष्णुयाग करे, हरि मंदिरों में बडे उत्सवों का आयोजन करें, पर्वणी और तीर्थो में साधु-ब्राह्मणों को प्रीति पूर्वक भोजन कराना ब्राह्मणो को विविध प्रकार के दान देना , न्याय के साथ धन का उपार्जन करना, दशांश और वीशांश धर्म पर उपयोग करने से ही द्रव्य की शुद्धि होती है । देव-गुरू और साधु को अपनी शकितनुसार सेवा करना , गृहस्थ साधु के आगे कभी भी छल(प्रपंच) नही करना, देव-गुरू-और संत के द्रोह हो ऐसा बचन बोलना नहीं, गुरू और संत को कल्याण के दाता समझना, इसी प्रकार गृहस्थ के विशेष धर्म संक्षिप्त में कहे, वे सर्व सत्संगीओं ने हृदय से स्वीकार किये, जो शुद्र गृहस्थ है तो उन्हें यह शुभ कर्म वषट्कार, स्वाहा, स्वाधिक मंत्र बिना करें, जो शुद्र गृहस्थ है तो उन्हें यज्ञादिक क्रिया शुद्ध ब्राह्मण के पास कराना, और यह शुद्ध ब्राह्मण पुराण के मंत्र पढकर शुद्र गृहस्थ की विधि कराना । भगवान के भक्त ब्राह्मण है , तो उसके मुख से महाभारत और भागवत की कथा सूने , अभी मैं नारियों के धर्म कहता हुं वह आप सूनें ।

नारियों के धर्म

सौभाग्यवती (सधवा) नारी अपने पति की इश्वर की तरह सेवा करें । जो तन, मन और वचन से अपने पति की सेवा करती है वह उभय लोक का सुख पाती है । अपना पति वृध्ध हो, रोगिष्ठ हो या फिर निर्धन हो तो भी उसका अपमान नहीं करना चाहिए । सौभाग्यवती नारी घर के बर्तन आदि चीज वस्तुओं को

सुव्यवस्थित रखें । पापी का संग न करें । हित हो ऐसा सत्य बचन बोलना चाहिए । पति की आज्ञा से तीर्थ-व्रत-दान करे । शरीर में उन्मत का भाव मत रखना । पर पुरूष का संग त्याग करें ।

विधवा नारी श्रीकृष्ण भगवान को अपना पति मानकर सेवा करें । काम भाव की बात कभी भी कहना और सूनना नहीं । कोई भी पुरूष के साथ बोलना नही..... और उसका स्पर्श भी मत करना । आपत्ति के समय अपने सगे सबन्धी के साथ बोलना और स्पर्श करना । पिता और पुत्र की आज्ञा में वर्तन करना (व्यवहार करना) किन्तु स्वतंत्र कभी मत रहना । उपवास और व्रत का आचरण करके सदा देह का दमन करना । विधवा नारी एक बार भोजन करे । सुगंधी तेल और अत्तर का त्याग करें । ताम्बूल मत खाना । कुमकुम और काजल का त्याग करे । शरीर को शृंगारित मत करना । झीने तथा तारवाले और आकर्षित वस्त्र मत पहने । दिन में मत सोना । वेश्यादिक का संग छोडना । दिन-रात श्रीकृष्ण भगवान की भक्ति करना । इस प्रकार विधवा नारियाँ के धर्म कहे ।

कोली, ब्याघ्र, हरिजन, चमार, जैसी अनेक संकर जातियाँ भी है । उनको कल्याण की आवश्यक्ता हो तो वह सर्व प्रकार के पाप कर्मो का त्याग करे अपने कुलके मुताबिक उधम करें । हिंसा कभी भी मत करना । जो सत्संगी है उन्हें मध-मांस, चोरी और व्यभिचार का सर्व प्रकार से त्याग करे । कलियुग में हरि-कीर्तन सर्वश्रेष्ठ धर्म है । इसमें से अपवित्र भी पवित्र होता है, इसलिए हर समय हरि कीर्तन करें । इसी प्रकार संकर जाति के धर्म है ।

अब **वानप्रस्थान** के धर्म कहता हूँ वह सूनिए ! पति-पत्नी दोनों घर छोडकर वन में रहे विषयसुख का त्याग कर निष्काम रहे

उसको वानप्रस्थ कहा जाता है । आयुष्य कें तीसरें भाग के अंत तक पति और पत्नी दोनो वैराग्य वाले हो तो वानप्रस्थ का धर्म ग्रहण करे । वन में जाकर तपस्या करें ।

स्त्री वैराग्यवाली न होने पर पुरूष अकेला वन में जा सकता है । ठंड, धूँप, बारीस सहन करे । पर्णकूटी में कुंड करके अग्निहोत्र नामका अग्नि धारण करे । नर-नारी निर्भय होकर पर्णकूटी के बाहर निवास करें । तीर्थ में त्रिकाल स्नान करें और सावधान होकर यज्ञ भी करें । नाखुन और केश बढाएँ । फलो का सेवन करें । सामो, मणथो और थेक आदिक बिना खेडे उगाये हुए खायें और जो तीव्र वैराग्य है तो सर्व का त्याग कर सन्यासी हो जाए ।

अब **सन्यासी** के धर्म कहता हूँ । दो कोपिन और एक बहिर्वास रखे । गुंदडी और जल गरणा रखे । उसी प्रकार दंड और कमंडल रखे । सर्व इन्द्रियों को जीते । नारायण परायण हो जाना । **'ॐ नमो नारायणाय'** ऐसे अष्टाक्षर मंत्र का जप करें । ज्ञान-विज्ञान के साथ हर समय आनंद मे ही रहे । आत्मामें संतोष का भाव रखें । भाव के साथ विष्णु की भक्ति करें । भिक्षा से ही भोजन ले । हर समय अंतःकरण शुध्ध रखे । प्रीतिपूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन करें । इसी प्रकार कई स्मृतियों में सन्यासी के धर्म कहे है । वानप्रस्थाश्रम और सन्यासाश्रम आधिक्य कठिन है । इसलिए कलियुग में वानप्रस्थाश्रम और सन्यासी मत होना । ऐसा शास्त्र मे लिखा है ।

अब **साधु** के धर्म कहता हूँ । वह सूने जिसका अच्युत गोत्र है उसे परमहंस और वैष्णव कहा जाता है । एक भागवत परमहंस और दुजा केवल परमहंस ऐसे भेद भागवत आदि शास्त्र कें कहे गये है । मात्र परिवार है उसे यति और भिक्षुक भी कहा जाता है । भागवत परमहंस हे उसे भिक्षुक और त्यागी भी कहा जाए । वह अच्युत गोत्री ही है । भागवत परमहंस भी वही है । महामुनि वैष्णव की उन्हीं कोटी कहा

जाता है । उन्हे भगवान की नौ प्रकार की भक्ति बिना व्यर्थ समय पसार न करें । स्त्री का अष्ट प्रकार से त्याग आजीवन करे स्त्रैण पुरूष का संग न करना स्त्रीवेश धारे हुए पुरूष को देखना नही । चित्रादिक की नारी का स्पर्श नही करना और मत देखें । धन का संग्रह नहीं करना और करवाना नही । रसास्वाद और मान का त्याग किजिए । अंतःशत्रु को जीते ओर सदा श्रीकृष्ण का ध्यान करें । सत्य, दया, शम, दम, क्षमा, तप,शौच, ज्ञान-विज्ञान, वैराग्य और धीरज आदिक गुण प्राप्त किजिए और भगवान के गुण गाईए । तिलक-टिका, मंत्र आदि वेश धारण करें । संप्रदाय की मर्यादा में भोजन का व्यवहार करना । हे भक्तों ! यह धर्म को सुनकर जो मनुष्य धर्म का पालन करेगा तो वह भक्त मुझे अधिक प्रिय होगा ।

हे भक्तों ! अब धर्म प्राप्ति का साधन कहता हूँ वह सुनिए । देवताओं भी शरीर को बहुत कष्ट दे, तो भी उसके अंतर में श्रद्धा न हो तो धर्म की सिद्धि नही होती । ज्यादातर धन-दौलत से भी धर्म की प्राप्ति नही होती अपना सर्वस्व समर्पण किया जाए, किन्तु श्रद्धा न हो तो इसका फल प्राप्त नहीं होता । अतः मनुष्य को पहेले ही श्रद्धावान बनना होगा । श्रद्धा जगत की माँ है, ज्ञान और वैराग्य की भी माँ है । श्रद्धा से ही धर्म सिद्ध होता है किन्तु, दूसरे कोई उपाय से नही होता निर्धन ब्राह्मण भी श्रद्धावान होने से स्वर्ग के सुख की प्राप्ति करता है । इसी तरह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का साधन भी श्रद्धा है । शास्त्रोक्त कर्म का आचरण करता है, दान करता है, असूया रहित है, आत्मज्ञानी होता है । धर्म और अर्थ के मर्म के ज्ञाता हो वह भी न पार हो शके ऐसे संसार सिंधु को भी श्रद्धासे पार कर सकते है । श्रद्धा सह पालन किया हुआ धर्म प्रमादी (आलसी) मनुष्य को यथार्थ फल देनेवाला होता नही है । इसलिए नियमोनुसार धर्म का पालन करें ।

नियमो का पालन मनुष्यों के लिए तलवार की धार पर चलना जैसा कठिन है । इसमें भी विलासप्रिय और धनलोभी मनुष्यों के लिए आधिक्य कठिन है । नियमो के पालन से ही देवता ने देवत्व की प्राप्ति की है । नियम के पालन से नक्षत्र-मंडल प्रकाशित हो रहा है । नियम के पालन से ही समुद्र अपनी मर्यादा का उलंघन नहीं करता । नियम के पालन से ही अग्नि प्रज्वलित होती है । नियम के पालन से ही सूर्य गर्म रहता है । नियम से हवा चलती है । तथा नियम से ही जगत की स्थिति का संचालन होता है । जगत में जो मनुष्य नियम का पालन करते है उनके वहाँ ऐश्वर्य फल सिद्धि प्राप्ती होती है । नियमों का उलंघन करते है उनके वहाँ भयंकर (कठिन) आपति आती है । तत्पर्य श्रद्धावान (व्यकित) को धर्म की नियमपूर्वक वृद्धि करनी होगी । देश, उपाय, द्रव्य, काल, श्रद्धा, सत्पात्र और त्याग यह सात धर्म के मूल है ऐसा शास्त्र वेत्ताए कहते है ।

यह सात साधन मात्र शद्ध हो तब ही धर्म शुद्ध फल देता है और अशुद्ध हो तो अशुद्ध फल देता है । मनुष्य में गुण और दोष की प्रवृत्ति संत और असंत के समागम से होती है । अतः मोक्ष इच्छुक सत्पुष का संग करना किन्तु असत्पुरूष का संग मत करना । असत्पुरूष का समागम दोष की उत्पति का केन्द्र है । जिसकी विधा उत्पति और कर्म शुद्ध है । ऐसे सत्पुरूषों का समागम मनुष्य को करना होगा । यह लोक में अधर्मी मनुष्यों भी धार्मिक पुरूषों के सेवन से धार्मिक बनते है तथा धार्मिक मनुष्य भी पापीओं के सेवन से दुष्ट बनते है । अत्पुरूषों के दर्शन से और स्पर्श से मनुष्यों धर्मभ्रष्ट हो जाते है तथा उनके साथ बोलने से और उनके साथ आसन ग्रहण करने से मनुष्य धर्म मार्ग से भ्रष्ट होते है और उनका मानव जन्म (नष्ट) व्यर्थ हो जाता है । नीच पुरूषों के समागम से मनुष्यों की बुद्धि नीच हो जाती है । मध्यम पुरूष के समागम से मध्यम होती है और श्रेष्ठ पुरूषों के

समागम से बुद्धि श्रेष्ठ होती है। जिससे बुद्धिशाली मनुष्यों को ज्ञानवृद्ध, वयोवृद्ध, तपस्वी, जितेन्द्रिय और सरल स्वभाववाले सत्पुरूष का समागम करना (होगा)। धर्म आचरण करने योग्य है और अधर्म आचरण करने योग्य नही है ऐसे विवेक सत्पुरूष के द्वारा मिलता है।

हे भक्तों! ताकी आप सर्वेजनो सत्पुरूषों का समागम करके अपने अपने धर्म का समागम करके यथायोग्य आचरण करें। वह धर्मो 'श्री वासुदेव माहात्म्य' नाम के ग्रंथ के द्वारा जानकारी प्राप्त करे ऐसा श्री रामानंद स्वामीने मुझे कहाँ है इसलिए ही 'श्री वासुदेव माहात्म्य' द्वारा धर्म का यथार्थ माहात्म्य का ज्ञान और उस धर्म का आश्रय करके श्री कृष्ण भगवान की अेकांकित भक्ति सदा करे।

धर्म-अधर्म, साधु-असाधु, न्याय-अन्याय भगवत स्वरूप और उसकी भक्ति का स्वरूप जैसे सत्शास्त्र के कारण ही समझ में आते हैं अतः मेरे सर्व आश्रितों अपनी -अपनी बुद्धिपूर्वक आदरपूर्वक सत्शास्त्र का अध्ययन करें। ब्रह्मस्थिति की प्राप्ति हुई होगी तो भी सत्शास्त्र का त्याग मत करना। कयोंकि सत्शास्त्र का त्याग करने से सिद्धि प्राप्ति पुरूष भी अचेतन बन जाता है। भगवद भक्ति में उत्साह शक्ति का भंग होता है। बुद्धि में मोह उत्पन्न होता है और श्रद्धा में शिथिलता (शैथिल्य) आती है।

जिस शास्त्र में भगवान श्री कृष्ण का सदाय साकारपने और निर्दोषपने के साथ प्रतिपादन किया हो और शास्त्रे वेदो के अनुसार हो उन्हें ही जो सच्छास्त्र जाने। ऐसे **सत्शास्त्र** भी अनेक है। जिसमें मुझे जो प्रिय है वह आपको कहता हूँ वह **सत्शास्त्र** आप सभी का हित करनेवाला है।

चार वेद, व्यास सूत्र, भगवत्गीता, विष्णुसहस्त्रनाम, श्रीमद् भागवत पुराण, श्री वासुदेव माहात्म्य, विदूरजी की नीति और याज्ञवल्क्य स्मृति आठ **सत्शास्त्र** हमें प्रिय है। इसमें भी

श्री रामानुजाचार्य का भाष्य, श्रीमद् भगवत् गीता और शारीरिक सूत्र -यह दो शास्त्र हमें अधिक प्रिय है। यह **सत्शास्त्र** के अध्ययन से बुद्धि भगवद भक्ति से युकत होती है। इसलिए **असत्शास्त्रों** का सेवन से भी कभी कभी उद्धव संप्रदाय के मार्ग से भ्रष्ट नही होता।

यह दो ग्रंथ के अध्ययन करे। सर्व प्रकार से असमर्थ हो उन्हें रामानुज भाष्य सहित भगवद गीता का अध्ययन करना चाहिए। विज्ञानेश्वर पंडितजी की मीताक्षर समीक्षा से युक्त 'याज्ञवल्क्य ऋषि की स्मृति' हमें मान्य है। आचार, व्यवहार ओर प्रायश्चित का निर्णय उद्धव संप्रदाय के अनुसार यह स्मृति के आधार पर करना होगा। यह आठ सदग्रंथ में श्रीमद्भागवत का दशवाँ और पँचम स्कंध तथा याज्ञवल्क्य ऋषि की स्मृति - यह तीन ग्रंथ हमे अधिक प्रिय हैं। ताकी मेरे आश्रितों यह सर्व श्रेष्ठ ग्रंथो का निरंतर पाठ किजिए। और स्वस्थ मन से उसका चिंतन किजिए।

हे भक्तो! आप सभी मेरे आज्ञा का पालन करें तथा तृच्छ जीव की तरह सद्. रामानंद स्वामी का शोक न करे। अखंड ब्रह्म स्थिति में रहे सत्पुरूषों का जन्म इस लोक में कल्याण हेतु है। ऐसा आप माने। सतपुरूषो का अवतरण और गमन स्वतंत्र है। किन्तु वे दूसरे तुच्छ (पामर) जीवो की तरह कर्माधीन बनकर कभी जन्म धारण करते नहीं है। उनके शरीर त्याग की रीति देखके राक्षस जीव भी आसक्त हो जाते है और उनकी महिमा समझने वाले दैवी जीव उनके शरीर त्याग को ''लीला'' कहते है। इसलिए सेव्य स्वरूप सदगुरु का शोक छोडकर व्यवहार करें। सभी वेद और धर्मशास्त्र के साररूप स्पष्ट सुंदर और निर्णय सभर सद्उपदेश देकर भगवान श्रीहरिने सभी गुरूबंधुओं का शोक दूर कर के 'हरि' ऐसा अपना नाम फरेणी गाँव में सार्थक किया।

३.३ महामंत्र प्रागट्य

भगवान श्रीहरि रामानंद स्वामी के चौदहवे दिन विशाल सभामें विराजमान थे । और धर्म का मर्म समझाने निजाश्रितो को उदासी दूर करते और वैदिक धर्म की स्थापना करने निजाश्रितों को उपदेशामृत दे रहे थे । उस समय शीतलदास नामके एक वैरागी सभामें आकर बैंठे । वे एकलशृंगी के वंश के थे । और ईश्वर के अंश थे । वे प्रगट भगवान को पाने के लिए देश विदेशमें भ्रमण करते थे । अनेक तीर्थ स्थानों में भ्रमण करते करते पश्चिम के देशोंमें आ पहुँचे । इस देश में उन्होंने यह बात सुनी कि रामानन्द स्वामी स्वयं भगवान है । यह रामानंद स्वामी के दर्शन अभी फरेणी गाँव में होगा यह सोचकर शीतलदास फरेणी आ पहुँचे । किन्तु अब तो रामानंद स्वामी सहजानंद स्वामी को गादी देकर अंतर्धान हो गये थे । शीतलदास सभामें हरि के पास पहुँचे, ' मैं शीतलदास हुं, यह कहकर हरि को प्रणाम किया । श्रीहरिने अच्छे साधु है ऐसा सोचकर उन्हें एकांत में आश्रय दिया और शीतलदास विचार करने लगे कि रामानंद स्वामी तो स्वधाम सिधार गये है इसलिए भगवान की शोध करने के लीए मैं चार धाम में जाऊँ । मुझे श्रीभगवान मिलेंगे और मेरी चिंता दूर हो जायेगी । अंतर्यामी श्री हरि शीतलदास के ऐसे विचारों को जान गये । और शीतलदास से कहने लगे कि; 'जाने के लिए उतावले क्यों हो रहे है'' ? तब शीतलदास हाथ जोडकर कहने लगे कि '' मैं रामानन्द स्वामी के दर्शन करने के लिए आया था '' परंतु मेरी दर्शन की इच्छा पूरी न हूई, इसलिए अब भगवान को ढूँढ ने के लिए दूसरी जगह पर जा रहा हुँ । तब श्रीहरिने कहाँ कि; ''आप यहाँ पर स्थिर हो जाएँ । मै आज ही रामानंद स्वामी के दर्शन कराके आपकी इच्छा पुर्ण करुँगा'' । तब शीतलदासने कहाँ कि; ''रामानंद

स्वामी के दर्शन होंगे तभी मुझे आन्नद होगा ।'' तब श्रीहरि बोले कि ; ''स्वामिनारायण'' नाम रटते रहो । तब शीतलदास 'स्वामिनारयण, स्वामिनारायण' रटते रहे और तत्काल समाधि हुई । समाधि में शीतलदास अक्षरधाममें गये । कोटि कोटि सूर्य-चंद्र की तरह अधिक्य शीतल और अनंत सुख की अनुभूति शीतलदास को हुई । उन्होंने तेजोमय धाममे पुरूषोतम भगवान के दर्शन किये । और इस मूर्ति के फरेणी में प्रत्यक्ष प्रमाण दर्शन हुए । अनंत अक्षर मुक्तो जिसकी सेवा करते है । मत्स्यादिक चोबीस अवतारो जिसकी स्तुति करतें है, रामानंद स्वामी भी सन्मुख खडे होकर जिसकी प्रशंसा करते है ऐसे श्रीहरि के अलौकिक दर्शन शीतलदास को हुए । इस प्रकार आनंद से विभोर शीतलदास को अनंत मुक्तो की पूजा करने की इच्छा हुई । श्रीहरिने कहॉ कि '' अनंत स्वरूप धारण करके अनंत मुक्तो की पूजा एक क्षण मे किजिए'' । तब शीतलदासने कहॉ कि'' मैं अनंत रूप कैसे धारण कर सकता हुँ?'' तब श्रीहरिने कहा कि '' रामानंद स्वामी पुरूषोत्तम भगवान हो तो मेरे अनंत स्वरूप हो जाय ऐसा संकल्प किजिए ।'' तब शीतलदासने ऐसा संकल्प कीया । परन्तु अनंत स्वरूप न हुए । तब श्रीहरिने कहॉ कि ''चोबीस अवतार पुरूषोतम भगवान हो तो मेरे अपार स्वरूप हो जाइएँ'' । ऐसा संकल्प किजीए, परंतु अनंत स्वरूप हुअे नहीं । तब श्रीहरिने कहॉ कि अब ऐसा संकल्प किजिए कि यह सहजानंद स्वामी पूर्ण पुरूषोतम भगवान हो तो मेरे अनंत स्वरूप हो जाए । उस समय शीतलदासने ''यह सहजानंद स्वामी पूर्ण पुरूषोतम भगवान है '' ऐसा संकल्प किया कि तुरंत ही अगणित स्वरूप हुए और एक क्षण में अनंतरूप होकर रामानंद स्वामी तथा अनंत मुक्तो की पूजा की । (श्रीहरि. क.५. वि.३)

बाद में शीतलदासने रामानंद स्वामी को कहां कि '' आपको भगवान मानकर मैं आपके दर्शन के लिए आया था ।'' तब रामानंद

स्वामीने कहाँ कि'' भगवान तो यह अक्षरधाम के धामी सहजानंद स्वामी है । वही सर्वावतारी भगवान है । आपने फरेणी में दर्शन किये वही अक्षरधाम के मालिक है ।'' सब अवतार श्रीहरि में लिन होते हैं । परंतु अपने आप किसी में लिन नही होते । ''मैं तो उसका दास का दास हूँ । मै तो उनकी सेवा करता हूँ । मै उद्धवजी हूँ । और सहजानंद स्वामी जो कहते है वही करता हुँ । सर्व अवतार यह अवतारी पुरूष के है ।'' ऐसी बात रामानंद स्वामीने की, तब उसी समय सरीताओं सागरमें लीन हो जाती है उसी प्रकार सब अवतार श्रीहरिमें लीन हो गये । अनेक अक्षर पुरूषों भी देखे । यह सबके नियंता एक श्रीहरि है ऐसे दर्शन हुए । ऐसे समर्थ श्रीहरि आगे प्रधान पुरूष कौन मात्र ? ऐसा आश्चर्य देखकर श्रीहरि को प्रत्यक्ष पुरूषोतम समझे । यह भक्तिपुत्र है वही भगवान है । दूजा कोई उनके समान समर्थ नही है, इस के बाद वे संत समाधि में से शरीर में आ गये और समाधि की अनुभूति की बात सभा में कही । किन्तु रामानंद स्वामी के शिष्योंने इस बात का स्वीकार नही किया ।क्योंकि रामानंद स्वामी भगवान है ऐसा दृढ निश्चय था इसलिए वे दूसरी बात कैसे माने ? बाद में सर्वे ने श्रीहरि को हाथ जोडकर कहाँ कि''हमे भी समाधि कराइए और हमारे संशय मिटाइए ।'' ऐसा सूनकर श्रीहरिने कहाँ कि ''स्वामिनारायण स्वामिनारायण''नाम रटे । बाद में मनके संशय मिटाने के लिए सब भक्त स्वामिनारायण स्वामिनारायण धून करने लगे । और तत्काल सब भक्तजनोंने समाधिमें अक्षरधाम के दर्शन किए । वहाँ पर अक्षरधाम के धामी सहजानंद स्वामी ऊचे सिंहासन पर बिराजमान थे । रामानंद स्वामी श्रीहरि की सेवामें लीन थे । और अनेक अक्षर मुक्तो के वृंद भी श्रीहरि की सेवामें लीन थे । ऐसा अपार अलौकिक ऐश्वर्य देखकर सर्व सभाजनों धर्मकुमार को सर्वेश्वर मानने लगे । सब भक्तजनों समाधि से जागे

और श्री हरि को प्रत्यक्ष भगवान मानकर साष्टांग प्रणाम करने लगे और प्रार्थना करके कहने लगे कि ''हे सहजानंद स्वामी आप ही सर्वोपरी भगवान है '' (श्रीहरिलीलामृत-क.५.वि.३)

बादमें शीतलदास को श्रीहरिने भागवती दीक्षा दी और श्रीहरि महाप्रभुने 'व्यापकानंद' ऐसा नामाभिधान किया । इस प्रकार स्वामिनारायण संप्रदाय की भागवती दीक्षा का आरंभ अलौकिक उपहार (मौका) यह फूल जैसे फरेणी गाँव को मिल गया । यह भागवती दीक्षा द्वारा अनेक जीवों का उद्धार होने का माध्यम का पहला उपहार इस छोटे से फरेणी गाँव को मिला ।

बाद में श्रीहरिने 'स्वामिनारायण'महामंत्र की महिमा अपने श्रीमुख से कहाँ ।

जो स्वामिनारायण नाम लेगा, उनका सब पातक जल जायेगा ।
है नाम मेरा श्रृतिमे अनेक, सर्वोपरी आज गणाय एक ॥
जो स्वामिनारयण एकबार, रटे अन्य नाम रटया हजार,
जप्या थकी जो फल थाय उनका, कर शके वर्णन कौन उनका ''२''
षडक्षरी मंत्र महा समर्थ, उससे होगा सिद्ध समस्त अर्थ,
सुखी करे संकट सर्व कापे, अंत में अक्षरधाम आपे ''३''
गायत्री से लक्ष गुना विशेष, समजे जो महिमा उनका महेश
जहां जहां महामुक्तजनों वसाय, यह कालमे तो जप उनका ही हुए ''४''
जो अंतकाले श्रवणे सुणाय, पापी बहुत हो उनका भी मोक्ष हो जाय ,
वह मंत्रसे भूत पिशाच भागे, वह मंत्रसे तो सद्‌बुद्धि जागे ''५''
वह मंत्र जीनके मुखसे जपाय, उनसे सेकी तो जम नाश जाय
श्री स्वामिनारायण जो कहेंगे, भावे -कुभावे भी मुक्ति लेंगे ''६''
षडक्षरो है षट्‌शास्त्र सार, वे तो उतारे भव सिंधु पार,
छये ऋतुमे दिनमे निशाये, सर्वे क्रियामे समरे सदाये ''७''
पवित्र देहे अपवित्र देहे, वह नाम नित्ये स्मरण करना सनेहे,

जल से तन-मेल जाय, यह नामसे अंतर शुद्ध हो जाय ''८''
जिस ने महापाप किया अनंत, जिस ने पीडया ब्राह्मण धेनुं संत,
वह स्वामिनारायण नाम लेने से, लाजी मरते हे मुखसे कहने से ''९''
श्री स्वामिनारायण नाम सार, है पापको वह प्रजलावनार,
पापी बडा अंतर होय जिस का, जलिये बिना कैसे रह सके उसका ''१०''

ऐसा महाप्रतापी महिमा यह महामंत्र का है । इस प्रकार श्रीहरि विशाल सभा को संबोधन करते हुए कहते है कि; ''वेदों में मेरे अनेक नाम है परंतु यह 'स्वामिनारायण' नाम तो सर्वोपरी है । वैसे ..... यह महामंत्र की भेट हमें स्वयं श्रीजी महाराजने ही दी है । इसलिए ही सभी भक्तजनों कृतार्थ हो गये । 'स्वामिनारायण' महामंत्र का भजन अब शुरू हो गया है । यह फरेणी की पुनीत धरा से अब तो यह सभा में देश-विदेश से पधारे हुए सौ भक्तजनों यह कृपा प्राप्त महामंत्र की महिमा कहने लगे ।

इसी प्रकार श्रीहरि महाप्रभुने श्रीमुखे नामका महिमा विशाल सभा को समझाया । यह महिमा सौ संतो-भक्तोंने धारण किया, उस समय यह विशाल सभा में सद्. रामानंद स्वामी के करीब पच्चीस हजार शिष्य यह मंत्र महिमा का अलौकिक लाभ ले रहे थे । उन सबको श्रीहरिने विशेष कहा की आप सर्व मेरे शिष्य है । ताकी मैं आपको सत्य कहता हूँ कि अब आप सब स्वामिनारायण का भजन करे और काम काज करते करते 'स्वाानिारायण' स्वामिनारायण' नाम लें और हमारा नाम स्वामिनारायण है, यह वेद में है लेकिन कोई जानता नही ं है । हमने आज प्रगट किया है । और आप श्रीकृष्ण, श्रीकृष्ण कहते है और कोई श्रीराम-श्रीराम कहते है - और कोई नारायण नारायण कहते है और कोई हरिॐ, हरिॐ कहते है और कोई रामानंद रामानंद कहते है कोई जय अम्बे जय अम्बे कहते है तो कोई नमः शिवाय, नमः शिवाय कहते है वे सर्वदेवो की

सेवा पूजा करना, परंतु भजन तो यह अवतारी प्रगट 'स्वामिनारायण' का करना और परस्पर एक दूसरे को नमस्कार करना । तभी भी **'जय स्वामिनारायण'** कहना । मार्कण्डेय मुनिने हमारे चार नाम रखें (१) नीलकंठ (२) हरि (३) कृष्ण (४) हरिकृष्ण और लोज में हमारा नाम 'सरजुदास'रखा । रामानंद स्वामीने 'सहजानंद स्वामी' और 'नारायण मुनि' यह दो नाम रखे । आजसे 'स्वामिनारायण' नाम हम स्वयम् रखते है । तो इस नाम का भजन किजिए ।

जय शब्द का अर्थ भविष्य 'पुराण' मे इस प्रकार होता है ।
विष्णु धर्मादि शास्त्राणि शिव धर्माश्च भारत ।
कार्ष्ण च पंचमो वेदो यन्मया भारतं स्मृतं ॥
सीता रामादि धर्माश्च मानवोक्ता महिपते ।
जयेति नाम चैतेषां प्रवदन्ति मनीषिणः ॥

यह श्लोक का सार समजाते हुए स्वयं श्रीजी महाराज कहते हैं कि ; वेद, शास्त्र, पुराण, भारत, रामायण, धर्मशास्त्र आदि सर्व ग्रंथो का नाम 'जय' इस प्रसार बडे पुरूष कहते हैं । ताकी अभी से आप सर्व जय स्वामिनारायण कहोंगे । यह हमारी पहली आज्ञा है, आप सभी पालन करेंगे और स्वामिनारायण नाम हमने रखा है तो यह नामका भजन करना ।

इस तरह पुरूषोतम लीलामृत सुखसागर में निर्गुणानंद बह्मचारी ने श्रीजी महाराज के स्वमुख कहा हुआ अपने नाम के महिमा इस प्रकार वर्णित किया है । (तरंग-१३)

बाद में आये है फरेणी गाम, स्वामी के साथ संत तमाम
वहां स्वामी रामानंदजी जेह, हुअे अंतर्धान ते अेह;
दुर्वासाके श्रापसे मुक्त बने, हरिमूर्तिमे हेतसे जूडाये.
गुरूकी देहक्रिया बाद मे, की हरिने यथा विधि से;
बाद में धर्मधुर स्वामी जी की, चलायी प्रभुने रूडी रीत से.

स्वामीश्री रामानंदजी का, थे आश्रितजन अनेक ;
साधु, ब्रह्मचारी और गृहस्थ, थे नरनारी जो समस्त.
उनको सत्शास्त्र बोध करके, दिये उपदेश स्वयं हरिने;
ऐसे संभावना बहुं की, मूल अज्ञान सबके हरे.
आगे व्हाले की अेक बात, सबजन सूनो साक्षात्;
हमारे नाम हे जो अपार, उसमें भी किया निरधार.
मारकण्ड ऋषिने दिये जेह, नाम रखे हे हमारे एह;
कृष्ण, हरि, हरिकृष्ण सार, नीलकंठ नाम निरधार.
आगे स्वामी रामानंदजी ने, नाम रखे है हमारे एह;
सहजानंद सुखके धाम; दुसरा नारायण मुनि नाम.
रूडा घनश्याम नाम जेह, माता-पिता कहते करके स्नेह;
एसा नाम हमारा अनेक, बुलाते भिन्न भिन्न जन सब.
किन्तु मुख्य हमारा जो नाम, वेतो भूल गये हे तमाम;
किसी को हाथ जो आया नहीं, वह सारा नाम रही गया.
अब आज मे करुं प्रकाश, तुम सुनिये सब दास;
स्वामिनारायण मेरा नाम, याद करते सब को सुखधाम.
अन्य नाम ले कोई हजार, फिर भी नही आ शके उनके हार;
स्वामिनारायण नाम सार, लिए एकबार निरधार.
उसको हजार नामका फल, मिले तुरंत जानीए पल;
इस लिये सब जन लेना विचारी, यह नाम हे अति सुखकारी
स्वामिनारायण नाम सार, रटना सब नर-नार;
सर्वे नारायणका मै स्वामी, इसलिये रहेना मुझे कर भामी.
अन्य नारायण नाम है बहुत, कहुं नाम थोडे उन तणा;
सूर्य नारायण जो केहते है, वैराट नारायण भी लेते है.
लक्ष्मीनारायण नाम केहते है, नर-नारायण नाम लेते है;
वासुदेव नारायण सार, ऐसा नारायण नाम अपार.

वह सब नारायणका मै स्वामी, सहुं रहें मुझे करभामि;
इसलिये स्वामिनारायण जेह, नाम मेरा कहता हुं तेह.
सर्वोपरि नाम हे वो सार, जिसे रटना सब नर-नार;
एह नाम रटे जन जेह, पामे अलौकिक सुख तेह.
ऐसे हरिने निज नाम तणा, कहा महिमा मुखसे बहुत;
बादमे नर-नारी मीले सब, रटे वह नाम हरिका बहुं.
स्वामिनारायण, नारायण, करे जन सब वो रटण;
पीछे स्वामीश्री सहजानंद, सहुं जनको देते आनंद.
अलौकिक प्रताप जणावे, ब्रह्मविधा सबको शिखावे;
ध्यान धारणा और समाधि, उनकी पकवदशा अति साधि.
समाधिमे इष्टदेव सभिका, दिखावे दया करी सभिको;
देखी ऐसे ऐसे चमत्कार, शरणे आये मुमुक्षुं अपार.
उनके चितको चोर लीये, बहु ही सुखिया सबको कीये;
उनके साथ लिए घनश्याम, फिरे देशो-देश सुखधाम.
करते लीला आपे आनंद, धन्य धन्य स्वामी सहजानंद;
वहांसे आये कच्छ देश श्रीहरि, बहु जीवो पर दया करी.

स्वयं नामी ही यह कृपा प्रदान नाम के महिमा का उद्घोष करते हुए कहते है कि; ''दुसरे साधन के बल को त्याग कर सिर्फ एक ही भगवान की उपासना का बल रखें और जो ऐसा भक्त है तो ऐसा समझे जो जैसा भी पापी हो और अंत समय जो उसको 'स्वामिनारायण' ऐसे नाम का उच्चारण करेंगे तो वह सर्वपाप से छूटकर ब्रह्ममहेल निवास करे।

इस प्रसंग पर 'स्वामिनारायण' मंत्र महिमा से रोमांचित हुअे सद्. मुक्तानंद स्वामी श्रीजी महाराज को हाथ जोडकर कहने लगे कि;''हे महाराज ! यह प्रसंग के अनुरूप आपकी प्रसन्नता के लिए कीर्तन सूनाने की इच्छा व्यकत करता हूँ। तब श्रीजी महाराजने आज्ञा दी कि''कीर्तन सूनाइएँ''।

राग - भैरव

पद - १

स्वामिनारायण स्वामिनारायण कहो रे मन मेरा,
अेही हे महा मंत्रसार मीटे भव फेरा........स्वामि (१)
रटहुं नाम अष्ट जाम हरे ताप तेरा
माया मोहादि मीटे ना'वे जम तेरा.........स्वामि(२)
अजामिल आदि अधम ओधरे घणेरा
महिमा त्रय लोक में प्रसिध्ध नाम केरा...स्वामि(३)
श्रीमुख श्रीहरि आप अेही जाय प्रेरा
मुक्तानंद मंत्रराज मेटत अंधेरा.............स्वामि(४)

पद - २

स्वामिनारायण स्वामिनारायण स्वामिनारायण जपना,
मनवा अेही मंत्रराज इष्टदेव अपना ....स्वामि (१)
हरत फरत करत काम स्वामिनारायण कै ये,
मोहादिक शत्रु मीटे, परमानंद पैये ....स्वामि (२)
उरमें हरिरूप घोरी रसना गुन गावे,
ता पर हरि अधिक अधिक करूना वरसावे ....स्वामि (३)
निशदिन हरिनाम जपे लोकलाज त्यागी,
मुक्तानंद तासमों नही दुजो बडभागी................स्वामि (४)

पद - ३

स्वामिनारायण स्वामिनारायण समरो सुखकारी
मनवा अेही जपत जाप कहत कर्म भारी ....स्वामि (१)
ब्रह्मा भव रटती नाम सनकादिक गावे,
सहस्त्रवदन रटती शेष तृप्ति न पावे ....स्वामि (२)
अजामिल गुनका गज, गीध कुं ओधारे,
नामी जूत नामने अनंत जंत तारे ....स्वामि (३)

नामी जूत नाम कह्यो वेद में मोरारी,
मुक्तानंद श्री मुख की शाख ह्दे धारी ....स्वामि (४)

पद - ४

स्वामिनारायण स्वामिनारायण स्वामिनारायण भजना
मनवा अेहि मरम जानी वृथावाद तजना ....स्वामि (१)
हरि विना अन्य करत वात बुध्धि भ्रष्ट होवे,
जैसे पतिव्रता नारी भटकत पत्य खोवे ....स्वामि (२)
सुंदरवर सुभग रूप ताके गुन गाना,
ते विना मन ओर ठोर भूली के न जाना ....स्वामि (३)
नारदमुनि प्रेममगन अखंड नाम लेवे,
मुक्तानंद ताकुं हरि अखंड दरश देवे ....(स्वामि (४)

मुक्तानंद के यह हर्षोल्लासित पदें सूनकर श्रीजी महाराज अधिक प्रसन्न होकर बोल उठे कि;''वाह... मुक्तानंद....... वाह आपके यह पद तो अनंत जीवों को अक्षरधामी बना सकता है । आपके इस पदो की रचनाने तो हमें अधिक आनंदित कर दिया है ।''

स्वामिनारायण स्वामिनारायण जप किजिए । यह मंत्रराज हमारा इष्टदेव है, घूमते - फिरते काम करते 'स्वामिनारायण' 'स्वामिनारायण' बोलिए । यह मंत्र से मोहादिक शत्रु नष्ट होते है । और परमानंद की प्राप्ति होती है । अंतर में हरिरूप धारण करके रसपूर्वक हरिके गुण जपते है । उस पर श्रीहरि अतिशय करूणा बरसाते है । लोकलाज को त्याग कर सदा स्वामिनारायण नाम जपे उसके जैसा कोई दूसरा महद्भागी नहीं है । ऐसा मुक्तानंद स्वामी कहते है ।

मुक्तानंद स्वामी कहते हैं कि; हे मन ! अब तुं स्वामिनारायण स्वामिनारायण स्मरण कर यह मंत्र ही सुख देनेवाला है, सुखकर है । यह मंत्र बलवान कर्मो को काटता है । ब्रह्मा, भव आदि भी उसको ही रटते हैं । सनकादिक भी यही मंत्र के जाप करते हैं ।

शेष-नारायण इस मंत्र को सहस्त्र मुख से रटते हैं फिर भी तृप्ति प्राप्त नही होती । अजामिल, गीध, गज, गुनका आदि का इस मंत्र से उद्धार हुआ हैं, नामी सहित नाम अनंत पतित (पापी) जीवों को उद्धारता है । श्रीहरि के श्रीमुख की साक्षी से मुक्तानंद स्वामी कहते हैं कि; ''वेद में नामी सहित नाम कहा है''

हे मन ! स्वामिनारायण स्वामिनारायण भजन करे, वृथा सिद्धांत (वाद) का त्याग करे । स्वामिनारायण सिवा दूसरी बाते करने से बुद्धि भ्रष्ट होती है । सुंदरवर की रमणीय मूर्ति है । उसके गुन गाना उस मूर्ति को भूलकर, हे मन ! दूसरी जगह पर मत जा । नारदमुनि जैसे भी प्रेममग्न बनकर अखंड यह नामका जाप करते है । ऐसे भक्त को श्रीहरि दर्शन देते है, ऐसा मुक्तानंद स्वामी कहते है ।

हे मन ! 'स्वामिनारायण' 'स्वामिनारायण' ऐसा कहना । यह मंत्र से भव, संसारिक फेरे मिट जाते है । यह मंत्र आठो जाम रटने से तीन ताप जल जाते हैं । इस मंत्र से मोह, माया आदि मिट जाते हैं । यम का बुलावा नही आता । यह मंत्र श्रीहरिने श्रीमुख से ही आजही यह फरेणी गॉव में हमें दिया हैं । इस प्रकार श्रीहरिने करूणा की बारीश बरसाई । ताकी सब लोक कृत कृत्य हुए और विशेष में श्रीहरि ने कहा कि; ''आप सब मेरी आज्ञा का पालन करें । रामानंद स्वामी का शोक न करें और अब तुम सब अपने देश के लिए प्रयाण करें । मैं यहॉ से धोराजीपुर प्रति जा रहा हूँ'' । इस प्रकार श्रीहरि का सुंदर उपदेश सूनकर शोक से मुक्त भक्तजनों श्रीहरि को साष्टांग प्रणाम करके सब अपने अपने देश चले गयें ।

३.४ सद्गुरू संपन्न मंत्ररत्न महिमा

स्वयं श्रीहरिने प्रकट किया हुआ यह महामंत्र का हमारे नंदसंतो से लेकर वर्तमान समय के संतो को कैसा महिमा है यह हम देखते हैं ।

४.१ सद्. श्री सुखानंद स्वामी

पंजाब प्रांत की बात है । भगवान स्वामिनारायण की आज्ञा से सद्गुरू श्री सुखानंद स्वामी आदि पांच संतो सत्संग के लिए पंजाब की भूमि पर पधारे है । बारिश का मौसम है । एक वृक्ष की छॉह में संत उतरे है । शाम के समय पर अचानक (एकाधिक) वहॉ पर बारिश टूट पडी । संतो बारिश में भीगे हुए ठंड के मारे कांपते हुए बैठे है । वहॉ सामने एक भव्य महेल के जरूखे में बैठी स्वरूपवान स्त्रीने संतो कों कॉपते हुए देखा और उन पर दया आई, उसने नौकर को संतो के पास भेजकर अपने राजमहेल में ठहरने की बिनंती की । संत राजमहेल में आये और नौकर को सूचना भेज दी कि महल की मालकिन नीचे न आयें । यह स्त्री के अनुरोध पर तीन दिन के उपवास के बाद संतोने खिचडी का भोजन लिया । अब रात का समय था । वही नौकर को संतोने पूछा यह महल किसका है ? यहॉ कौन रहता है ? ऐसी पूछताछ होती है और उत्तर मिलता हैं । ''पंजाब के राजा रणजितसिंह की (रखात) एक वेश्या बाई यह महल में रहती है ।'' संत यह उत्तर से हतबुद्ध हो गये किन्तु तुरंत ही संतोने स्वामिनारायण महामंत्र की धून लगाई । पूरी रात धून चली । जैसे जैसे महामंत्र का जाप उपर बैठी वेश्याबाई के कानों तक पहुँची रही, वैसे उनका मन भी निर्मल होता गया । उनके अंतर की मलिन वासना जलने लगी और धीरे धीरे वह भी धून के साथ धून बोलने लगी । धून करते सूबह हो गई और संतोने स्नान करके वहॉ से बिदाई ली । यह स्त्रीने पीछे से महलमें खडे होकर संतो के दर्शन किए ।

एक दिन, दो दिन, तीन दिन बीत गये । यह स्त्री का वासना लोलुप से खराब हुआ पुरा मानस बदल गया । उनके

आत्मां में कुलबुलाहट हुआ था और अेक दिन उसने किया हुआ पाप का प्रश्चाताप करके वह एक वेश्या से वैराग्य पूर्ण स्त्री बन गई । महल छोडकर चल पडी और जाते जाते नौकर से कहकर गई कि राजा रणजितसिंह को कहना की ''अब मेरी गठरी, माँस और रूधिर से भरी हुई देह मे आसक्त न हों । अब मैं अविनाशी वर को वरने जा रही हूँ । मैं उनको प्राप्त करके ही रहूँगी, ताकी मुझे मत ढूँढना'' ।

वन में जाकर एक नदी के किनारे पर्णकूटी में यह स्त्री ने निवास किया । और भगवान स्वामिनारायण को पाने के लिए संतो के मुख से सुने हुए स्वामिनारायण मंत्र का रटन शुरू किया । जब तक महाप्रभु का मिलाप न हो जाए तब तक अन्नजल का त्याग किया । बस अखंड 'स्वामिनारायण..... स्वामिनारायण..... स्वामिनारायण..... महामंत्र का रटन शुरू किया ।

उस तरफ कामांध राजा रणजितसिंह महल में आते हैं पर अपनी रखाती (रखैल)स्त्री नजर न आई तब उनकी वासना की आग बुजाने राजा रखैल को ढूँढने निकल पडता है । यह स्त्री की अनशनव्रत का आज आठवाँ दिन था । उनके मुखसे पीछले आठ दिन से महामंत्र का अखंड रटन था । परिणामतः उनकी वासना संपूर्णतः जलकर राख हो गई थी । ऐसी यह प्रभुमें आसक्त बनी हुई स्त्री का योग राजा रणजितसिंह को हुआ तब उसका तेजस्वी मुखारविंद देखकर राजा रणजितसिंह की वासना भी जल गई । भगवान स्वामिनारायणने अलौकिक दर्शन देकर यह स्त्री को अपने अक्षरधाम की ओर दिव्य गति दी । इतना ही नहीं महाप्रभु स्वामिनारायण के महिमा समझनेवाले राजारणजितसिंह को भी श्रीजी महाराज २७ जून १८३९ के दिन दर्शन देकर अक्षरधाम साथ ले गयें ।

धन्य हो ..... धन्य हो ..... यह दिव्य और भव्य स्वामिनारायण महामंत्र की प्रौढ प्रताप को !

काशी के राजा अनोपसिंह थे । उनकी धर्मपत्नी ईडर के राजा की पुत्री थी । विवाह करके पति के गृह आई तब दहेज में पिता के घरसे स्वामिनारायण भगवान की मूर्ति और सत्संग लाई थी । इनके घर एक कुंवरी का जन्म हुआ । वह पुत्री बडी होकर बहुत स्वरूपवान और सद्‌गुणोवाली बनी । एक दिन राजा अनोपसिंह बन में शिकार के लिए दूर निकल पडे थे । उस समय एक सिंहने गर्जना की और राजा अनोपसिंह पर टूट पडा लेकिन राजा के अंगरक्षक ने बंदुक की गोली से सिंह को मार दिया और राजा बच गये । दूसरे दिन राजदरबार में राजाने खुश होकर यह अंगरक्षक को अपने रक्षा के बदले में कुछ माँगने के लिए कहाँ । यह अंगरक्षक कई समय से राजा की कुंवरी के रूप पर आसक्त था । कामांध अंगरक्षकने कहाँ मैं आपकी कुँवरी से विवाह करना चाहता हुँ ऐसा प्रस्ताव राजा के सामने रखा । राजा और रानी यह सूनकर अवाक् रह गये । परंतु महाप्रभु भगवान स्वामिनारायण में अनन्य निष्ठा रखनेवाली कुंवरीने पूरे दरबार में कह दिया कि '' ठीक है, मैं आपके साथ विवाह करने लिए तैयार हूँ । पर एक शर्त है कि तमाम सुविधा के साथ एक ऐसे कक्षमें आपको बैठना है जहाँ पर भगवान स्वामिनारायण की मूर्ति के सामने हाथ में माला लेकर छः मास तक स्वामिनारायण, स्वामिनारायण ऐसा अखंड भजन करना है । कक्ष की बाहर निकलना नहीं ।''

शर्त के मुताबिक एक बंध कक्ष में श्रीस्वामिनारायण भगवान की प्रसादी की मूर्ति आगे बैठे आसक्त बने हुए यह अंगरक्षकने स्वामिनारायण महामंत्र का रटन शुरू किया । ..... और आ .....हा..... हा..... जो महामंत्र की शक्ति प्रताप से जीव की

अनादि की वासना जल जाती है ऐसा महिमा है, ऐसा ही हुआ । जिस प्रकार करवत लकडी को काटता है उस प्रकार जैसे जैसे भजन चलता गया वैसे वैसे अंतर की वासना जलने लगी । चार माह पूर्ण होने ही निर्मल एवं निर्वासिक हुआ अंगरक्षक बाहर आकर संसार का त्याग कर साधु बन गये ।

वाह प्रभु ! वाह ! क्या शक्ति (प्रताप) है ! स्वामिनारायण महामंत्र का !

४.२ सद्. श्री नृसिंहानंद स्वामी :

नृसिंहानंद स्वामी पूर्वाश्रम में जगन्नाथजी के मंदिर में बारह साल तक सेवा में थे वहाँ पर एक दिन द्वारका की यात्रा करके एक वैरागी आये । वह वैरागी दूसरे कोई दर्शनार्थीसे बातें करते थे कि;''पश्चिम भूमि में सोरठ देश में जीवन मुक्ता स्वामिनारायण भगवान प्रगट हुअे है । तब निज मंदिर में देव की सेवा में रहे हुअे नृसिंहानंद स्वामीने यह बात सूनी । इसमें बातों बातों में स्वामिनारायण शब्द आता है तो नृसिंहानंद स्वामी को तेज नजर आता है । इसी प्रकार जितनी बार स्वामिनारायण नाम सुना उतनी बार नृसिंहानंद स्वामी को तेज दिखाइ दिया । उन्हें ऐसा लगा कि' हमे उस भगवान को मिलना चाहिए । बाद में वह पैदल चलते चलते गुजरात में आये । उस समय श्रीहरि कच्छ-भूज में गंगाराम मल्ल के यहाँ बिराजमान थे । नृसिंहानंद स्वामी वहाँ आये और श्रीहरि के दर्शन किये और तुरंत ही नृसिंहानंद स्वामी को समाधि हुई । इस में श्रीजीमहाराज के अलौकिक दर्शन हुअे । और नृसिंहानंद स्वामी विस्मय (आश्चर्य) हो गये । और समाधि से बाहर आकर श्रीजी महाराज को हाथ जोडकर पूछा कि ''हे प्रभु ! मैं जगन्नाथजी का सेवक हूँ । मै श्रीकृष्ण से और किसीको जानता नहीं हुँ । परन्तु यहां तो वे भी आप के आगे स्तुति करते नजर आते है, मैं कैसे समझुँ ? कृपा ! मुझे बताईएँ । तब श्रीहरि बोले कि; '' हम तो सर्व अवतार के अवतारी अक्षरधाम के अधिपति पूर्ण पुरूषोतम नारायण है''। यह बात सूनकर नृसिंहानंद स्वामीने श्रीजीमहाराज का सर्वोपरि दृढ निश्चय करके साधु बनके श्रीहरि की सेवामें जूड गये ।

४.३ योगीवर्य सद्‌गुरू श्रीगोपालानंद स्वामी

सद्‌गुरू श्री गोपालानंद स्वामी कृत भगवान श्री स्वामिनारायण सहजानंद स्वामी का मंत्र

''ॐ ह्रौं हें ॐ श्रीं ठें ह्रीं पत्रे पत्रे देवानां ॐ भूते द्वीपे ह्रीं सौं गौं त्रीं योग पीवात्मानं ह्रां ह्रें भगवते गलों महाष्टयोगसिद्धिं मॉं प्रदात्रे श्री सहजानंद परमात्मने नमः औ ठें भें ऍं ह्रॉं गूँ ॐ।

जब श्रीजी महाराज के आश्रित सत्संगीओं को अध्यात्म, अधिभूत, अधिदेव सम्बन्धी कोई देशकाल आ जाए । मनुष्य संम्बंधि, देवसम्बन्धि कोई देशकाल आ जाएँ या शारीरिक, मानसिक कौटुम्बिक, सामाजिक कोइ दुःख आ जाए तब क्षुद्र देव का जप मत करना । ऐसी श्रीजीमहाराज की आज्ञा है । ताकी यह आज्ञा का भंग करना नही चाहिए । परन्तु अन्य राजसी, तामसी अशुभ मंत्र के बदले (अलावा) सद्.श्री गोपालानंद स्वामीने किया हुआ श्री सहजानंद स्वामी का यह मंत्र का विधिपूर्ण जाप करें । ताकी सर्वप्रकार संकट नष्ट हो जाए और जाप करनेवाले और जाप करानेवाले दोनों का सर्वप्रकार श्रेय होता है यह मंत्र जाप करने का रीति निम्नलिखित है ।

- मंत्र का जाप का प्रारंभ मंगलवार के दिन करना ।
- पंद्रह दिन में दशहजार जाप करना ।
- यह मंत्र का जाप मंदिर अथवा पवित्र और एकांत स्थान पर करें ।
- सुगंधित धूप और घी का दीया अखंड रखे ।

- मंत्र जाप करनेवाले को स्त्रीने बनाया हुआ भोजन नहीं करना चाहिए ।
- ब्राह्मण के हाथ से बनाया हुआ खाना अथवा अपने हाथों से बनाया हुआ भोजन लें ।
- मंत्र जाप करनेवाले उपवास करें याने दूध या फलाहार करना ।
- अशक्त है वह एकबार भोजन लें ।
- जाप करनेवाले संसार-व्यवहार कार्य का और आलस का त्याग करे ।
- दिन की निद्रा और स्त्री का संग का त्याग करे ।
- किसी की निंदा न करें और न सूने ।
- इस मंत्ररत्न में संपूर्णतः श्रध्धा और विश्वास रखें ।
- इस मंत्र का जाप खूद करे या ब्राह्मण के पास करवाइऍं ।

४.४ अ.मू.सद्. श्री गुणातीतानंद स्वामी

अ.मू. सद्. गुणातीतानंद स्वामी ने यह स्वामिनारायण महामंत्र की महिमा कहते हुए कहाँ है कि ''पाँच दश बार 'स्वामिनारायण, स्वामिनारायण' नाम जाने - अनजाने लेगा उसका भी हमें कल्याण करना होगा..... और पूरे ब्रह्मांड को सत्संग करवाना है ।

''पूरा ब्रह्मांड 'स्वामिनारायण का भजन करेगा तब सत्संग हुआ और वहाँ तक करना है । तथा महाराज को मिले हुअे एक साधु के पीछे लाखों मानवी धुमेंगे .....तब तक सत्संग करना है ।''

'स्वामिनारायण' नामका मंत्र जैसा दुजा कोई मंत्र आज शक्तिशाली नहीं है । यह मंत्र से जहरिला नाग का विष भी नही चढ ता । यह मंत्र से विषय उड जाता है । ऐसा शक्तिशाली मंत्र है । ताकी उनका निरंतर भजन करें ।

और हमे तों हेत आता है ऐसा कहते है कि स्वामिनारायण नामका मंत्र बडा शक्तिशाली है इसलिए भजन करते रहीए ।

और चिन्ता हो तो क्या करे ? यह प्रश्न पूछा गया.... उसका उत्तर दिया 'स्वामिनारायण, स्वामिनारायण' करने से चिन्ता, बेचैनी मिट जाता है । इस लिए अ.मू.सद्. गुणातीतानंद स्वामी की बातों में स्वामिनारायण महामंत्र का नशा सर्वोपरी स्थान से सुख देता है । तो हमारे दुजा नंदसंतोने भी यह महामंत्र के केफ को अपनी बातों और कीर्तनो ं में प्रस्तुत किया है ।

४.५ सद्. प्रेमसखी श्री प्रेमानंद स्वामी :

सद्. प्रेमसखी श्री प्रेमानंद स्वामी अपने कीर्तन द्वारा महामंत्र की महिमा को स्पष्ट करते हुए कहते है कि-

स्वामिनारायण आज प्रगट महामंत्र है.
श्रवणे सांभळते कंपे दिनकर दूत जो
भवका बंधन सर्ध कापी सुखिया करे,
क्या कही दाखु महिमा अति सद्भूत जो..... स्वामिनारायण.....(१)

अनंत पतित उद्धार्ये पूर्व यह मंत्र से,
अजामिल, गनिका आदिक अपार जो.
वे मंत्र आज महाराजने प्रगट किया.
कलिमें करने अनेक पतित भवपार जो.....स्वामिनारायण.....(२)

सकामीजन सुमरी पामे त्रिवर्गको,
निष्कामीजन पामे पद निर्वाण जो.
नाम तणा नामी स्वामी प्रगट मिले,
उस जनका क्या करुं मुखसे बखाण जो..... स्वामिनारायण.....(३)

भव ब्रह्मा-मुनि मुक्त जपे यह मंत्रको,
वे सब पामें मनवांछित सुख आज जो

प्रेमानंद कहे कर जोडी सभी जनको
भूलना नहीं अवसर आया आज जो.....स्वामिनारायण.....(४)

इस प्रकार सद्. प्रेमानंद स्वामी हम सबको कहते कि आज वर्तमान काल में यह प्रगट महामंत्र है । जिसका श्रवण करने से यम के दूत भी काँपने लगते हैं ।

यह मंत्र के रटन से तो अजामिल आदि अनंत दुष्ट जीवात्माओं को भी उद्धार हुआ है । एसे यह 'स्वामीनारायण' महामंत्र को स्वयं श्रीजीमहाराजने कलियुग के दुष्ट जीवातमाओं के मोक्षार्थ के लिए प्रगट किया है ।

यह मंत्र स्मरणसे निष्काम भक्त तो अक्षर का सुख प्राप्त करते ही है परंतु सकामी भी यह मंत्र रटन से अपनी मनोकामना पूर्ण करते हैं ।

यह मंत्र रटने से देवों भी (देवताओं भी) अपनी मनोकामना पूर्ण करके सुखी होते हैं .....ऐसी प्रगट प्राप्ति हुई है तो अब यह समय को कैसे जाने दे ? इसलिए प्रेमानंद स्वामी सब भक्तों को विनम्र भाव से हाथ जोडकर बिनती करते है कि'' अब प्राप्त समय को जाने मत दो । अनायास समय पर मिला हुआ यह कृपामंत्र को मत भूलें, भजन करना शुरू कर दो ।
स्वामिनारायण....स्वामिनारायण....स्वामिनारायण....''

४.६ वैराग्यमूर्ति सद्. श्री निष्कुलाानंद स्वामी :

इस प्रकार वैराग्यमूर्ति सद् निष्कुलानंद स्वामी भी यह महामंत्र की महिमा गाते गाते कहते हैं ।
स्वामिनारायण नाम, व्हाला लगे स्वामिनारायण नाम.....
रात-दिवस मेरे रूदिया की भीतर, जपीश आठु जाम..... व्हालु (१)
भवजल तरने पार उतारने, ठरनेका है मझे ठाम..... व्हालु (२)

सर्वोपरी श्याम है नरवीर नाम है, सुंदर सुखडे का धाम...व्हालुं (३)
निष्कुलानंद के नाथ को भजते, वारे उनका नहीं काम .....व्हालुं (४)

उपर्युक्त पद में वैराग्य मूर्ति सद्. निष्कुलानंद स्वामी कहते है कि मुझे यह स्वामिनारायण महामंत्र बहुत ही प्यारा लगता है , स्वामी कहते हैं कि महाराज की यह कृपा प्रदान मेरे हृदय में बस गया है । इसलिए मे अब यह महामंत्र का जाप निरंतर करता रहूँगा ।

इस प्रकार ही सद्. निष्कुलानंद स्वामी 'पुरूषोतम प्रकाश'में भी यह महामंत्र की महिमा गाते गाते कहते है कि;

राम-चोपाई

सूणी स्वामिनारायण नाम रे, सर्या कंइक जीवका काम रे,
कानो मे वो नामनी भणक पडी रे , उनको अक्षरपोल उघडी रे,
स्वामिनारायणाकी कीरति रे, सूणी रहे नहीं पाप रति रे,
स्वामिनारायणकी जो कथा रे, सूणी जाये नही जन्मावृथा रे.
स्वामिनारायण नाम पद रे , सांभलते आये सुख सधेरे,
छंद अष्टक और श्लोक रे, सूने पढे पहोंच ब्रह्मलोक रे.
साखी शब्द स्वामी नामे जेह रे, सर्वे कल्याणकारी है तेह रे,
श्वास उच्छ्वासे समरे स्वामी रे, उनकी व्याधि जाये सर्वे वामी रे
रहे रसनाअे रव उनका रे, धारा अखंड उच्चार उनका रे
वह तो पाते है परम प्राप्ति रे नही फेर उनमे अेक रति रे,
अैसा नाम तणा परताप रे, कह्या सबसे अधिक अमाप रे
जाने अजाने जपेगा अेह रे, परमधामको पामेंगे वह रे

इस पद में सद्. निष्कुलानंद स्वामी कहते है कि; यह स्वामिनारायण महामंत्र ऐसा शक्तिशाली हे कि सिर्फ सूनने से ही परमधाम की प्राप्ति होती है । यह महामंत्र की महत्ता जानने से पापमात्र जल जाता है और अक्षरपोल खुलती है । जिसकी जिह्वा से यह महामंत्र का जाप होता है उसको, परमधामकी प्राप्ति हो

जाती हे और निरंतर सुख भोगता है । ऐसा महाशक्तिशाली यह महामंत्र है ।

४.७ सद्. श्री बालमुकुंददासजी स्वामी :

सद्. गुणातीतानंद स्वामी के शिष्य सद्. श्री बालमुकुंददासजी स्वामी सत्संग शुद्धि और वृद्धि में रूचिवाले और सत्संग का विचरण प्रिय थे । बडे शहरों से लेकर छोटे-छोटे गाँवो तक सत्संग विचरण करते थे । उना महाल तथा अमरेली खारापाट में बहुत विचरण करके नये मंदिर भी बनवायें थे । सत्संग विचरण उनका जीवन था ।

सद्. श्री बालमुकुंददासजी स्वामी उना से सत्संग विचरण करते करते समढियाळा पहुँचे । वहाँ पर रात को एक सत्संगी को बहुत विषैला बिच्छुने काटा । पीछले समय में इस गाँव में बिच्छु काटने से एक व्यक्ति की मृत्यु हुई थी । इसलिए उस सत्संगी को मरने का डर लगता था । वह सत्संगी स्वामीश्री के पास दर्शन करने के लिए आये । स्वामीश्रीने कहाँ कि; 'स्वामिनारायण... स्वामिनारायण' भजन किजिए अच्छा हो जायेगा, डरो मत ! स्वामिनारायण के भजन से काले नाग का विष भी उड जाता है और जीव ब्रह्मरूप बनकर भगवान का धाम प्राप्त होता हैं । इस प्रकार स्वामीश्री की आज्ञा और विश्वास से भजन करने लगे । ताकी बिच्छु का जहर उस सत्संगी को न लगा और थोडा भी दुःख न हुआ ।

४.८ सद्. श्री महापुरूषदासजी स्वामी :

सद्. महापुरूषदासजी स्वामी योगीवर्य सद्. गोपालानंद स्वामी के मुख्य शिष्य थे । सद्. गुणातीततानंद स्वामीने सत्संग रक्षण और विचरण के लिए दस मंडल बनायें थे । जिसमें सद्. गोपालानंद स्वामी के शिष्य परंपरा में सद्गुरू महापुरूषदासजी

स्वामी का मंडल भी समिल्लित थे और स्वामीने सद्. महापुरूषदासजी स्वामी को जूनागढ में ही रखा । स्वामी की आज्ञा से सद्. महापुरूषदासजी स्वामी सत्संग वृद्धि का (सेवा) कार्य करते थे । इसलिए वे सद्. गुणातीतानंद स्वामी के भी कृपापात्र थे ।

एक बार सद्. महापुरूषदासजी स्वामी सत्संग विचरण करते करते जामनगर के पास वीजरखी गाँव पधारे । वहाँ पर दरवाजे के पास एक खाली मकान था । उसमें स्वामीने आश्रय लिया । वहाँ पर बढई भक्त वालजीभाईने रसोई दी थी । ठाकोरजी को थाल धराकर सौ संत भोजन करने के बाद दोपहर को वालजीभाई के घर पहुँचे । वहाँ पर वालजीभाई के भाई जादवभाईने स्वामी को कहा कि; हे स्वामी ! हमारे घरमें एक बडा साप रहता है, वह घर में , रसोई घर में, आंगन में सर्व स्थान पर दिखाई देता है । पर वह कीसी को काटता नही है । हम एक-दो-बार उसे पकड के दूर फैंक आये । फिर भी वह तुरन्त ही वापस आ गया । वह किसी को काटता नही है लेकिन घरमें सब डरते हैं । छोटे बच्चे तो रोते रोते चिल्लाते है तो यह दुःख का क्या करे ?

बादमें स्वामीने पानी को छिंडककर 'स्वामिनारायण' 'स्वामिनारायण' बोल कर कहाँ '' तु अब बदरीकाश्रम में जला जा । इतना कहकर पू. स्वामी आश्रय आये । दूसरे दिन पू. स्वामी जादवभाई बढई के घर के पिछवाडे भेजते है । जादवजीभाई बढई घरके पिछवाडे गये तो वहाँ जो बडा साप था उसे मरा हुआ देखकर यह बात जादवभाई ने पू. स्वामी को कही । तब पू. स्वामी श्रीमहापुरूषदासजीने कहा कि; वह साप पिछले जन्म में तेरा भाई था । उसको हमने बदरीकाश्रम में भेज दिया है । ऐसा महिमा है इस महामंत्र रत्न 'स्वामिनारायण' के जाप का ।

४.९ सद्.श्री कृष्णचरणदासजी स्वामी :

बहुत पुराने समय में गोंडल एक राज्य था इस गोंडल राज्य में 'रीब' नामका एक छोटा सा गाँव था। इस गाँव में दादभा नाम का एक गरासिया दरबार रहते थे। यह दरबार दादभा की उम्र चालीस साल की थी। तब अचानक (आकस्मित) दोनों आंखो से अंध हो गये। अचानक आंखो की रोशनी चली जानेसे दरबार परिवार पर आफत टुट पडी, आंखो से अंध बने दरबार परिवार पूर्णतः बिलकुल लाचार बन गया। क्योंकि दुनियामें अंध जैसा दुःख कोई दूसरा दुःख नही है। इस प्रकार यह दरबार दादभा को अब दुःख के दिन से जलने लगे। कई –वैद और डॉक्टरों से आँखो का इलाज करवाया लेकिन कोई फर्क नही पडा।

उसी समय सद्. कृष्णचरणदास स्वामी सत्संग विचरण करते फह 'रीब' गाँव में पहुंचे तब गाँव में सत्संगीओंनें दादभा के अंधापे की बात स्वामी को कही। करूणामूर्ति सद्. कृष्णचरणदास स्वामी को दादभा की स्थिति पर दया आई। इसलिए उनको दर्शन देने के लिए वे दादभा के घर पहुँचे । तब दुःखी दरबार दादभा स्वामी के चरण स्पर्श कर रोने लगे तब कृपाळु स्वामी की करूणा बरस पडी ..... और आशीर्वाद देते हुए कहा कि ; ''दरबार ! आप आजसे 'स्वामिनारायण – स्वामिनारायण' मंत्र का जाप किजिए। आपका अंधापा दुर हो जायेगा।'' इसी प्रकार यह दादभाने स्वामी की आज्ञा से तुरन्त ही 'स्वामिनारायण – स्वामिनारायण' महामंत्र का भजन शुरू किया और थोडे ही दिनों में यह दादभा का दुःख दूर हो गया। और आँखो का अंधापा भी दूर हो गया। उस दिन से ही यह दुःखी दरबार सर्वे दुःखो से मुक्त हो गये। इस महामंत्र का महिमा जानकर अन्य भक्तों को भी अपनी अनुभूति की बातें करने लगे। ऐसी शकित है यह 'स्वामिनारायण' महामंत्र की।

४.१० सद्. जोगीस्वामी श्री धर्मप्रसाददासजी स्वामी :

इसी प्रकार स्वयं श्रीहरिने और अनेक नन्दसंतोने इस महामंत्र की महिमा कही है। तब अभी श्रीहरि के नंदसंत की परंपरा के दास पंक्ति के संतो भी यह कृपा प्राप्य महामंत्र की प्रसंशा कहे बिना रह सके ? कैसे रह सकते है ? ताकी अ.मू. सद्. गुणातीतानंद स्वामी के शिष्य परंपरा में अनेक संतोने इस महामंत्र की महिमा दो मुख से कही है। यह सब गुरूदेव के अमृत वचन तो हम यहाँ कैसे ले सकते है। परंतु यह जोगीस्वामी धर्मप्रसाददासजी स्वामी, जैसे कई बर्ष तक सिर्फ छास के साथ जवार का रोटी खाकर नव्य, भव्य, दिव्य मंदिर का नवनिर्माण (नवसर्जन) किया यह समय था सं.२०१० का।

सद्. जोगीस्वामी श्रीधर्मप्रसाददासजी स्वामी को सभी भक्तों 'वचनामृत' के पगी–ज्ञानी से पहचानते थे। उनकी साधुता, उनकी पंचवर्तमान की दृढता, तप, आत्मनिष्ठा, वैराग्य तथा श्रीजी महाराज की उपासना का बल भी अनन्य था।

उनका जीवन भोला (कपट रहित) एवं निराला था और वचनसिद्धि भी थे। ऐसे जोगीस्वामी को कथा–वार्ता का अंग ही सहज था। सभा में या साधुआश्रममें , संस्थामें या विचरण में, गाँव में या खेत में जाते समय या अन्य प्रवृत्ति में बस कथा–वार्ता ही करते। स्वामी जहाँ भी बिराजित हो ही तुरन्त ही चारो ओर संत हरिभक्त बैठ जाते और तुरन्त सभा हो जाती। स्वामी भी तुरन्त ही स्वामिनारायण हरे..... स्वामिनारायण हरे..... संवत १८७६ के मागसर सुद ४ के दिन वचनामृत पढना या कंठस्थ बोलना शुरू करते। वचनामृत पुरा करके तुरन्त ही निरूपण (वर्णन) करने लगते। या तो फिर दूसरे से पढा के बातें करने लगते। इस प्रकार वचनामृत स्वामीश्री का जीवन बन गया था। यह बात इस वचनामृत में हैं। वैसे तो समय पर ही प्रमाण देते क्योंकि जब बोलते तब

वचनामृत केही शब्द बोलते । इनके साथ स्वामी गुणातीतानंद स्वामी की बातें तो होती ही रहती । भक्तचिंतामणि तो स्वामी का जीवन बन गया था । ''भगवान की भक्ति के बीना एकक्षण भी न बिताना '' इन्होंने आत्मसात की थी । निष्कुलानंद स्वामी कृत चोसठपदी उन्होनें कंठस्थ किया था और वे भी उनकी नस नस में उत्तर गयी थी । मुक्तानंद स्वामी कृत । 'मुकुंदबावनी' भी लाक्षणिकता (अनुपन) से रजु कर सकते थे । गोपालानंद स्वामी की बातों में से भी लघु आहार करना अे गोपालानंद स्वामी का आदेश जीवनभर अणीशुद्ध पाला था । ऐसे अनेक साधुगुणों से सम्पन्न, शुद्ध, सरल, स्वभाव के पुरानी (पूर्व)रूढि के मूर्तिमंत की तरह जीवन व्यतित करने वाले प.पू. सदगुरू जोगी स्वामी श्री धर्मप्रसाददासजी स्वामी की बाते 'साक्षात् सविता' में से जानकारी लेते हैं इस महामंत्र की महिमा ।

संवत २०३१ के आषाढ सूद-७ के दिन पीपलाणा मंदिर कें सभामंडप में प.पू. सद्. जोगीस्वामीने बात कि;-- हम स्वामिनारायण के वणोतर है , हुंडी लिखे तो भी चले इतना उपासना का बल है । हम आशीर्वाद दे तो उनका काम हो जाए । परन्तु हम स्वामिनारायण की महिमा सही तरह से समझें होंगे तो आशीर्वाद दे सकेंगे । तो हमारा कल्याण हुआ है । ऐसा निश्चित हो जाता 'स्वामिनारायण के एक नाम से प्रेत-पिशाच, सिर हिलाने लगता है और राम के नाम के साथ हनुमानजी का नाम साथमें लिया जाय तो प्रेत-पिशाच सिर हिलाने लगता है । इस प्रकार 'स्वामिनारायण' के नाममें और राम नाममें इतना फर्क है ।

संवत २०३१ के आसो सुद-२ के दिन पीपलाणा मंदिर में साधु की धर्मसभा में प.पू. सद्. जोगीस्वामीने बात की ''स्वामिनारायण के एक नाम लेने से पूरे पाप-नष्ट हो जाते हैं । ऐसा जानते हुअे भी

हम नाम नहीं ले सकते । इसका भावार्थ कया है ? तो श्रद्धा में फर्क है । श्रद्धा में फर्क तो महात्म्यमें फर्क । इसलिए महात्म्य तो ऐसा ही समझना चाहिए जैसे अक्षरधाम मे है । और प्रतापसंयुक्त है और यहां आये तो भी प्रतापी युक्त है । ऐसा समझमें आये तब नाम ले सकते है । ''(वतनामृत मध्य-४)''

संवत २०३२ के पोष सुद-४ के दिन पीपलाणा मंदिर में साधुकी धर्मशाला में प.पू. सद्. जोगी स्वामीने कहां कि; अर्थसाध्यामि के देहंपात्यामि -इसी प्रकार यह देह से अर्थ साधी लेना । हमें प्रीति आती है वह कहते है -- स्वामिनारायण मंत्र बहुत शक्तिशाली है । ताकी दृढ संकल्प करके उसकी आज्ञा पालन करें ।

संवत २०३२ के चैत्र वद-५ के दिन गोरवियाली गॉव में पोपटभाई के घर प.पू. सद्. जोगीस्वामी ने बात की-''कोई बिमार होगा तो वहॉ जाकर स्वमिनारायण - स्वामिनारायण भजन करे तों उसका भी कल्याण होगा । दूसरे को भगवान याद करादे तो बहुत बडी प्राप्ति होगी । स्वर्गके लोग तो चाहेंगे व अन्य लोक के लोगों भी चाहने लगेंगे । भगवान कोई भी रूपमें हमारा काम करता है । हमारी इच्छा पूर्ण करते है । भगवान हमे अक्षरधाममें अंत तक छोडने आयेगा होशियार होकर भजन करे नही तो यम जूतें मारमारकर ले जायेगा ।

संवत २०३२ के जेठ सुद-२ के दिन पीपलाणा मंदिर के सभामंडप में प.पू. सद्. जोगीस्वामी ने बात की-''स्वामिनारायण कहने से पाप जल जाते हैं । तो भी मन रूक्ता है जहॉ पर मन की इच्छा शांत हो वहॉ पर ही दान, पूण्य, यज्ञ, व्रत, पूजा, ध्यान वही पर ही करना । दोष नजर में आये इसके बाद उसके लिए साधन करें । उसे राजी करने के लिए करे तो दोष टले ।

संवत २०३२ के जेठ सुद-४ के दिन पीपलाणा मंदिर के सभामंडप में प.पू. सद्. जोगीस्वामी ने बात की-''स्वास जाता है आता है उसके साथ ही स्वामिनारायण का भजन होने से संकल्प नष्ट होता है ।

संवत २०३२ के आश्विन वद-९ के दिन राजकोट में प.भ. श्री नौतमभाई सोलंकी के घर प.पू. सद्. जोगीस्वामी ने बात की-''हमारे बडे-बडे साधु बहुत मेहनत करके लिख गये है तो भी उनकी किंमत नही हैं उनकी महिमा नही है, कुछ न समझने पर भी चलते -चलते खाते पीते स्वामिनारायण, स्वामिनारायण भजन करना और जो स्वामिनारायण को समझते है उन्हें नमस्कार करना चाहिए ।

वजुभाई टॉक को स्वामीने खूद आशीर्वाद लिखकर दिये कि ''नामी भगवान और नामके ठिकाने साधु -सत्संगी समस्त समाज यह पृथ्वी पर अलौकिक काम कर रहे है । ..... परंतु मोक्षबुध्धि प्राप्त किये बिना हम नही समझ सकतें लोहा है तो चुंबक की और आकर्षित होगा । इसी प्रकार यह बात समझ में आये तो भगवानकी महिमा बुद्धि की पकड में आयेगी । स्वामिनारायण नामका मंत्र बहुत शक्तिशाली है । बहुत मूल्यवान है यह मंत्र देवकोटी, इश्वरकोटी, ब्रह्मकोटी को भी विचारवंत जैसा अलौकिक मंत्र है इसलिए स्वामिनारायण मंत्र जैसा कोई मंत्र दुनियां में कहीं पर भी नही है । ताकी भजन करे स्वामिनारायण.... स्वामिनारायण..... स्वामिनारायण.....

संवत २०३५ के भादो शुद-३ के दिन मुंबई में प.भ.श्री त्रिभुवनभाई झवेरी के घर प.पू. सद् जोगीस्वामी ने बात की-''भगवान का सुख अगम है । दिखता नही है इसलिए उसकी प्रधानता (महत्ता) नहीं है । एक नाम लेने से पाप मात्र जल जाता है । तो भी नाम क्यों नहीं लिया जाता ? जैसे अक्षरधाम में है वैसे ही पृथ्वी पर है । ऐसी महत्ता जाने तो नाम ले सकते है । नाम मे भी नामी का साक्षात् संबंध

है । मक्खी जैसे जीव हमारे से मरे तो दसबार 'स्वामिनारायण', 'स्वामिनारायण' शब्द बोलना चाहिए । तो प्रयश्चित हो जाता है । 'स्वामिनारायण' शब्द का महिमा कितना है वह माने तब शास्त्र के दृष्टि हुई है दृष्टा दृश्य के सामने वृत्ति ठहरावे बाद में स्वामिनारायण का नाम ले तब महिमां जान पाये । देह भूलाने के बाद ही भगवान के गुण और नाम की महिमा का ज्ञान होता है ।

संवत २०३५ के भादो सुद-११ के दिन मुंबई मे प.भ.श्री त्रिभुवनभाई झवेरी के वहाँ प.पू. सद्. जोगीस्वामीने बात कि ''इस समय यह सत्संग में जिससे प्रतीति आये उसे पूण्य का अंत न कह सकेंगे । सनकादिक के योग से अजामिल का मोक्ष हो गया । यह तो हमे प्रीति आती है इसलिए कहते है । वह 'स्वामिनारायण'का मंत्र बहुत शक्तिशाली है । ताकी -धुमते फिरते, खाते-पीते भजन कर लेना ।

संवत २०३६ के कारतक (कार्तिक) सुद-४ के दिन वंथली गुरूकुल में प.पू. सद्. जोगीस्वामी ने बात की-''स्वामिनारायण' नामका मंत्र बहुत शक्तिशाली है । यह मंत्र से काले नाग का विष उत्तरजाता है । विषय उड जाता है । ब्रह्मरूप हो जाते है ।

संवत २०३६ के कारतक (कार्तिक) वद-२ के दिन माणावदर में प.भ.श्री भगवानजीभाई परबतभाई मारडीया के घर प.पू. सद्. जोगीस्वामी ने बात की-''स्वामिनारायण, स्वामिनारायण'' उच्च स्वर से गाते है उसे यमदूत दूर से प्रणाम करते है । ऐसी शक्ति 'स्वामिनारायण'की है ।

संवत २०३६ के चैत्र सुद-१५ के दिन धोराजी में प.भ.श्री वशरामभाई भालोडिया के घर प.पू. सद्.जोगीस्वामी ने बात की घुमते-फिरते, बोलते-सूनते, चलते-फिरते , भजन करना सीखें । भजन ही करवत है । ''स्वामिनारायण' नाम पाप को जला दे ऐसा है । हमारे बहुत बडे पूण्य होंगे ताकी हम इस सभामें बैठे है ।

इस प्रकार प.पू. सद्. जोगीस्वामी श्री धर्मप्रसाददासजी स्वामी की बातों में सहज (स्वाभाविक) महामंत्र की महिमा आ गई । वंथली गुरूकुल के या दूसरे छात्रों प्राथमिक, माध्यमिक, उच्चतर माध्यमिक, बोर्ड या कालेज की इम्तहान (परीक्षा) देने जाने के णहले प.पू.स्वामीश्री के पास आते थे और आशीर्वाद लेके जाते थे । तब भी प.पू. सद्. जोगीस्वामी कहते कि--' स्वामिनारायण - स्वामिनारायण ऐसे बोलकर पेपर लिखने की शुरूआत करना । ता की भगवान आपका ख्याल रखें । और आप अच्छे गुण से पास हो जायेंगे । और सचमुच ऐसा ही होता । जो भी छात्र कम प्रतिसत से पास होता है वह प.पू. स्वामीश्री के आशीर्वाद से 'स्वामिनारायण' महामंत्र बोल के पेपर लिखने की शुरूआत करता तो वह अच्छे माकर्स (नम्बर) से पास हो जाता । इसी प्रकार प.पू. स्वामीश्री के ऐसे आशीर्वचनों से महामंत्र के प्रताप से कई छात्र आज उच्च होदे पर-नौकरी, धंधे में कार्यरत है । अरे.... कई छात्र तो विदेश में जाकर अपनी कारकिर्दि जमा के जीवन जीते है । ऐसा महाप्रताप है यह महामंत्र का आशीर्वादात्मक वचन पालन करने का । भजन तो कई लोग करते है । परंतु जिसकी आज्ञा और आशीर्वाद से भजन होता है इसमें आज्ञा करनेवाले का चैतन्य सुख के प्रताप से अचानक सफलता और अकल्पनीय सुख की अनुभूति होती हैं ।

ऐसे यह महामंत्र की शकित से कई भक्त देशकाल से मुक्त हुए है , आइए एक प्रसंग देखें । राजकोट जिल्ले के धोराजी तालुके (तहसील) में एक कलाणा नाम का एक सुंदर गाँव है । यह कलाणा गाँव में पीपलाणावाले प.पू.सद्. जोगीस्वामी ने मंदिर बनवाया है । इस गाँव में कडिया ज्ञाति के सवजीभाई टांक नामके एक भक्त रहते थे ।

अक्षर मूर्ति सद्. गुणातीतानंद स्वामी के शिष्य सद्गुरू बालमुकुंददासजी स्वामी थे । उनके शिष्य सद्. नारायणदासजी स्वामी के पास माला (कंठी) बँधवाकर सवजीभाईने वर्तमान - नियम लिये थे । सद्. नारायणदासजी स्वामीने बोयां हुए यह सत्संग के पौधे को सद्. जोगी स्वामीने कथा-वार्ता रूपी पानी से सींचकर बडा किया था ।

यह सवजीभाई टांक प.पू. सद्.जोगी स्वामी के कृपापात्र भक्त थे । गाँव में तथा सत्संग-समाज में सौ उन्हें 'सवजी भगत' नाम से पहचानते थे । यह सवजी भगत को उनके मामा (मोसाल) के गाँव स्वामी के बोडका से सत्संग वारिस में मिला था । बाद में सवजी भगत ने पीपलाणा मंदिर में तन, मन, धन से सेवा करके प.पू. सद्. जोगी स्वामी को राजी (खुश) किया । ऐसे सवजी भगत नियम, निश्रय और पक्ष दृढ करके प.पू सद्. जोगी स्वामी के कृपापात्र बन गये ।

एक दिन यह सवजीभगत कलाणा गाँव की अपनी वाडी में गये । बाडी में काम करते थे वहाँ उन्हे साप ने काँटा । सर्प के काटने से (सर्पदंश) सवजी भगत बेचैन हो गये (बेशुध्ध) उन समय अपने परिवार वाले उन्हे (सवजीभगत) को डोकटर के पास ले जाने के लिए तैयार हो गये । तब सवजी भगतने सभी परिवार के सदस्यों को कहाँ कि-- 'मुझे डोकटर के पास जाना नही है । किन्तु आप पीपलाणा प.पू. सद्. जोगी स्वामी को समाचार भेजें । वे जैसा कहेंगे ऐसा करेंगे । इस प्रकार सवजी भगत के कहने से प.पू. सद्. जोगी स्वामी को समाचार भेजे तब प.पू. स्वामीश्री ने कहाँ कि-''स्वामिनारायण, स्वामिनारायण'' भजन करों । हम कलाणा आपके पास आते है । इसी समाचार से सवजीभगत तो प.पू. स्वामीश्री की आज्ञा से भजन करने लगे । स्वामिनारायण

स्वामिनारायण । वहाँ थोडी देर में प.पू. सद्. जोगी स्वामी भी पीपलाणा से संत-मंडळ के साथ कलाणा आ पहुँचे । और थोडी ही देर में यह सर्पदंश की पीडा मिट गई । और सवजी भगत तो सभान होकर प.पू. सद्. जोगी स्वामी के चरण छूकर स्वामिनारायण -- स्वामिनारायण ऐसे भजन करने लगे । इसी तरह सौ भक्त यह महामंत्र का प्रताप और गुरूदेव के आशीर्वाद की अनुभूति से आश्चर्य चकित हो गये ।

अब भी कलाणा के यह सवजी भगत की परंपरा में उनके पुत्र, मोहनभाई, वल्लभभाई, रणछोडभाई और उनके पौत्र पोपटभाई, वजुभाई, कानजीभाई, कनकभाई, भगवानजीभाई और शांतिभाई के परिवार में भी अच्छा सत्संग है ।

उसी प्रकार प.पू.सद्. जोगी स्वामी के जीवन मे (स्वामिनारायण महामंत्र)चैतन्यसभर आशीर्वाद के रूप में स्थान लिया था । तथा उनके योगमें आये हुअे सत्संगीओं में भी यह चैतन्य सुवास ने स्थान लिया था । अपने गुरूदेव प.पू. सद्. जोगी स्वामी के सर्वे रीति से समर्पित होनेवाले उनके संतमंडल में भी गुरूदेव की यह अलौकिक प्रेरणा फैली हुई है ।

गुरूदेव के सभी वचन पालन करनेवाले उनके यह शिष्यवृंद में भी गुरूदेव की कृपा-साकार बनी है ।

सद्. स्वामीश्री के शिष्य माणावदर में बहुत थे इनमें जादव रामजीभाई बेचरभाई कापड के वेपारी थे । मूल पीपलाणा के और पू. स्वामी की आज्ञा से वेपार करने के लिए माणावदर रहने गये थे । उन्हें व्रजलाल नाम का एक पुत्र था । उन्हे छः मास की छोटी उम्र में कोलेरा (विशूचिसा) रोग हुआ था । यह दिन था सं.२०२१ के जेठ वद-८ मंगलवार दिनांक २२-६-६५ का उनके पारिवारिक डोकटर जोषी को बुलाया । उसने सारवार की परंतु रोग में थोडा कुछ फर्क हुआ नहीं

। मल (विष्ठ) और उल्टी (वामीट) बढती रही । यह रोग मासुम व्रजलाल को जानलेवा और असाध्य हो गया । पारिवारिक डोकटरने कहा की तुरंत ही अस्पताल में भर्त करवाए । नही तो यह केस बचेगा नही । शरीर भी निश्चेष्ट (अचल) हो गया । आँखे पीली हो गई । अस्पताल में जाने जैसी परिस्थिति न रही । अंत में सब ने पीपलाणा से पू.स्वामीश्री को बुलाने का निश्चय किया । जेठाबापा पनारा मोटरकार लेकर पीपलाणा स्वामी को बुलाने गये । स्वामी संतमंडल के साथ रामजीभाई के घर पहुँचे । अचल, बेचैन, अवस्था में सोये हुए वृज के पास बैठकर पू. स्वामी ने स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, इसी प्रकार पाँच बार बोलकर उनके शरीर पर हाथ (का स्पर्श) किया वजुने तुरन्त ही आँखे खोली । शरीर चेष्ठावान (चल) हुआ । मल, उल्टी वेमूचिस तुरन्त ही बंद हो गया । इसी प्रकार स्वामिनारायण, मंत्र की महिमा की बात करके स्वामी माणावदर मंदिर दर्शन करके पीपलाणा पधारे ।

सं.२०३१ की साल में पू. स्वामी कथावार्ता प्रसंग के लिए माणावदर पधारे । हरदिन शाम सभा का आयोजन होता था । पू. स्वामी धर्म, ज्ञान, वैराग्य, आत्मनिष्ठा और उपासना की बाते करते । सत्संगी के भी स्वामीजीने पधरावनी की । इसमे अश्विन-वद-७ के दिन जादव रामजीभाई बेचरभाइ की ''वृजलाल रामजी''नामकी पेढी में पधारे और बात की ''स्वामिनारायण'' का मंत्र महा बलवान है यह मंत्र से काले नाग का जहर उतर जाता है । ये मंत्र से काल, कर्म, माया और पाप नष्ट होतें है । स्वामिनारायण, का मंत्र भूतकाल में जिसने लिया, वर्तमान काल में जो लेंगे ओर भविष्य मे जो लेगा उनहोंने यह मनुष्य देह को सफल किया है ।

पीपलाणा में हीराभाई लाधाभाई टांक पू. स्वामीश्री के कृपापात्र थे उन्हें कथा, पठन की योग्यता थी , ताकी मंदिर के सभामंडप में बैठकर कथा पठन करते रहते । ओधाभाई करमशीभाई परमार उनके मित्र थे । वे भी अच्छे सत्संगी थे ।

एक दिन शाम आरती के समय हीराभाई को असह्य दुःख (दर्द) शुरू हुआ । डाकटर को बुलाया लेकिन डाकटर की दवा से यह (पेटका दर्द) दुःखना मिटा नही । ताकी उनके मित्र ओधाभाई मंदिर में पू.स्वामी पास पहुँचे और बात की ''हिराभाई को पेटमें असह्य दर्द हो रहा रहै डाकटर की दवा ली फिर भी असर नही हुई । हीराभाइ रहेंगे या नहीं एसी परिस्थिति है । तब स्वामी ने कहाँ कि आप उनके घर जाईए और उनके पेट पर स्वामिनारायण-स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, इसी प्रकार बोलकर हाथ फिराना बादमें ओधाभाई इसी प्रकार घर जाकर स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, बोल कर हाथ फिराया और चमत्कार हो गया तुरन्त ही पेट का दर्द गायब हो गया ।

पीपलाणा में नानजी देवजी टांक कडिया थे । उनके पुत्र का नाम सवजी उसकी उम्र १९ थी । अपनी वाडी को सवजी पानी छोडने गये । मुंगफली के कच्चे (पोपटे) बहुत खाये शाम को घर आकर मंदिर में दर्शन कर के सो गये । कच्ची मुंगफली अधिक खाने से मोम चडा । रात में शरीर अचेतन हो गया । करीबन १२ बजे टीनमस गाँव से डोकटर को बुलाया । उन्होंने (इलाज) सारवार की लेकिन मोम अंकुश में नहीं आया । ताकी सवजी के पिताश्री नानजीभाई पू. स्वामी को बुलाने मंदिर गये । स्वामी सवजी के पास आये बैठकर स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, ऐसा बोलकर पू. स्वामीने सवजीभाई

के मुँह में पानी पिलाया । सवजीभाई जय स्वामिनारायण, कहकर बैठ गये ऐसा स्वामिनारायण, मंत्र महा बलवान है ।

माणावदर तहसील में गलवाव गाँव पीपलाणा के पास में है । वहाँ मोहनभाई राजकोटिया एक सत्संगी थे । उन्हें हाथ की कोनी में केन्सर हुआ था । जूनागढ, राजकोट और अमदाबाद तक के डाकटरों के पास सारवार (इलाज) करवाया था । सबने हाथ काँटने के लिए कहाँ । नही कटवायेंगे तो यह रोग जान-लेवा बन सकता है । ताकी मोहनभाई द्विधामें पड गये । उदास हो गये । परंतु उन्हें पीपलाणा प.पू. जोगीस्वामी का असाधारण विश्वास था । इसलिए वे पीपलाणा आये और पू. स्वामी को कहा कि--स्वामी ! दया किजिए मुझे इस हाथ की कोनी में केन्सर है । डाकटरों ने कहाँ है की हाथ काँटना पडेगा । यह रोग जान-लेवा है । ''स्वामी ने दया करके कहाँ पास में आईए । ऐसा कहकर पू. स्वामीने स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, हाथ फिराया और कहाँ जाईए मिट जायेगा । स्वामिनारायण, का भजन करना'' इस आशीर्वाद लेकर मोहनभाई गलवाव गये और यह आशीर्वाद लेने के बाद मोहनभाई बीस साल जीवीत रहे ।

आज फरेणी माहात्म्य (हस्तप्रत) लिखा जा रहा हे तब भी उस समय का एक प्रसंग का चित्रवा करने का मन हो रहा है ।

सद्. जोगीस्वामी के जूनागढ के अनन्य शिष्य प.भ. श्री काचा हिराभाई के पौत्र का यह प्रसंग है । उनका पुत्र काचा परषोतमभाई धोराजी में रहते है और उच्च माध्यमिक विभाग में शिक्षक (अध्यापक) की नौकरी करते है । उनका ऋषिकुमार नाम का पुत्र अमदावाद एल.डी. इजनेर कोलेज में बी.ई. (इलेकट्रीकल) में अध्ययन करता हो

वे अपने पिताश्री की आज्ञानुसार अपनी हरेक परीक्षा पूर्व एक संत के आशीर्वाद प्राप्त करने के बाद परीक्षा देने जाते ।

इसी प्रकार काचा ऋषिकुमार की बी.ई. के अंतिम वर्ष की सांतवे सेमेस्टर की परीक्षा शुरू हुई हरेक परीक्षा समय पर यह संत की आज्ञानुसार ही सर्व प्रथम भगवान स्वामिनारायण, को याद करके पाँच बार मन में स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, मंत्र का उच्चारण करके परीक्षा के पेपर लिखते । फिर भी एक पेपर बहुत ही कठीन होने के कारण खराब रहा । ताकी ऋषिकुमार को संपूर्णतः विश्वास था कि इस पेपर मे वह अनुत्तीर्ण होगा । इसलिए उसने धोराजी अपने पिताजी को इस बारेमें बताया । उनके पिताजीने फिरसे संत को फोन से संपर्क करके आशीर्वाद लिए । और उसके पुत्र ऋषिकुमार को आगेकी सूचना का पालन करके पूर्वातया विषय की परीक्षा देने के लिए कहाँ । इसलिए आनेवाले पेपर अच्छे रहेंगे और प्रथम वर्ग (प्रथमश्रेणी) में उत्तीर्ण होंगे । ऐसे आशीर्वाद दीये ।

इस तरह ऋषिकुमार ने यह संत के आशीर्वाद अनुसार पूर्व परीक्षा भगवान स्वामिनारायण.... को मन में याद करके पाँच बार स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, बोलकर बाद में प्रश्नो के उत्तर लिखें । इसी प्रकार यह सूचना का हरेक प्रश्नपत्र लिखने से पूर्व पालन किया । तो समस्त (पूर्णतः) पेपर अच्छे रहे और इम्तहान खत्म हो गई । इसी तरह परिणाम आने पर आत्मविश्वास के साथ मार्कशीट लेने के लिए गये । सर्वजनों के आश्चर्य के साथ उनका परिणाम प्रथमवर्ग में आया । यह है स्वामिनारायण महामंत्र की दिव्य शक्ति ।

३.५ वेदादि सच्छास्त्र मान्य मंत्रार्थ :

'स्वामिनारायण' मंत्र महा अलौकिक हैं और महामंत्रराज है । 'स्वामिनारायण' महामंत्र में 'स्वामि' तथा 'नारायण' यह दो शब्दों से जुडा हुआ है इसमें हम प्रथम ''स्वामी'' शब्द पर विचार करेंगे ।

'स्वामिनारायण' महामंत्रमे 'स्वामि' शब्द प्रथम है, यह शब्द वेदशास्त्र संमत है । इस शब्दार्थ का सूचन करने वाली कई श्रुति और स्मृतियाँ प्रमाणभूत हैं । अमरकोश में 'स्वामी' शब्द का अर्थ इस प्रकार है ।

स्वामीत्वीश्चरः पतिरीशिता ॥ १० ॥
अधिभूर्नायको नेता प्रभुः परिवृढोडधिपः ।
(तृतीय कांड, विशेष निध्नवर्ग-१)

'स्वामी' याने 'ईश्वर', 'पति', 'नियामक', 'नाथ', 'नायक', 'प्रभु', ' अधिप', आदि स्वकर अस्यास्तीति स्वामी एश्वर्य का मालिक वह 'स्वामी' 'स्वामिन्नेश्वर्ये' यह व्याकरण सूत्र से 'स्वामी' शब्द सिद्ध होता है ।

समस्त जगत के नियंतृत्व रूप ऐश्वर्य दो प्रकार के है राजवत् अर्थात् राजा की तरह शासन और आकाशवत् अर्थात् आकाश की तरह शासन राजवत् नियमन वे बहिर्शासन कहलाता है । आकाशवत् नियमन व आंतर शासन कहा जाता है । इस प्रकार संचालन कर सके उसे 'स्वामी' कहते हैं ।

वृष्टि समय पर वृष्टि, ठंड समय पर ठंड, गरमी (उष्मा) समय पर (उष्मा) गरमी, सुबह सूर्य का उदय होता है । शाम को सूर्य का अस्त होता है । पृथ्वी की स्थिरता, मेघ की गर्जना, बिजली के चमकारे, पानी के बूँद में से सृष्टि की उत्पति आदि अनेक विध आश्चर्य परमात्मा के 'राजवत्' ऐश्वर्य से होता है । वह श्रीजी

महाराजने वचनामृत प्रथम अध्याय-र७ में कहा है कि; इस पृथ्वी को जिसने स्थिर रखा है । और हिलाइ हिलती है तथा तारामंडल जिसने रखा है तथा जिसके बरसाने से मेंघ बरसते है तथा जिसकी आज्ञा से सूर्य-चंद्र उदय-अस्त को प्राप्त करता है तथा चंद्रमाँ की कला उतरती -बढती हैं तथा बिना दीवार वाला समुद्र भी अपनी मर्यादाओं में रहता है तथा पानी के बुंद मे से मनुष्य की उत्पति होती और हाथ, पग, नाक, कान आदि -दस इन्द्रियाँ होकर आता है तथा आकाश में खुला जल छोड रखा है और इसमें गर्जना होती है ।

इस प्रकार बाह्य शासन करने के कारण परमात्मा ही 'स्वामी' है ।

आकाश की तरह आंतर नियमन, आकाश की तरह आंतरशासन याने हरेक अचेतन-चैतन्य अंतर्यामी की तरह नियमन करने रूप, सर्व कर्म-फल प्रदाता रूप से शासन है जिस प्रकार आसमान चार भूतो में व्याप्त है, इनसे ही चार भूतों की सत्ता टिकी हुई है । बिना आकाश उसका अस्तित्व नहीं है । इसी प्रकार हरेक अचेतन-चैतन्य पदार्थो का अस्तित्व महासत्ता के आधार पर है । वह महासत्ता श्री नारायण की है । उसको महाऐश्वर्य रूप सत्ताभी कहा जाता है । यह एश्वर्यसत्ता (सौन्दर्य) से 'श्रीनारायण' सब के अंतर्यामी बनके व्याप्त है । और सब के अच्छे बूरें कर्मो के ग्वाह है । और सब के कर्म के अनुसार सब को फल देते हैं । अंतर्यामी शक्तिरूप एश्वर्य से परमात्मा सर्व पदार्थ के गुणधर्म को पकड में रखता है । मनुष्य से मनुष्य ही उत्पन्न होता है । पशु से पशु ही उत्पन्न होता है । यह सर्व प्रकार की सृष्टि उनके अंतर्यामी शक्ति के संचार से ही होती है । अंतरनियमन से सर्व-कर्मफल प्रदाता उपरान्त और सर्व पदार्थ

के गुणधर्म का अस्तित्व पकड में रखने (रूप, सौन्दर्य) एश्वर्य एक 'श्रीनारायण' का ही है । इसलिए उनको वेदोंने 'स्वामी' कहा है । (शब्द से)

विष्णु पुराण में कहा है कि; 'एक एव हरिः स्वामी शब्दो वाच्योडस्ति सर्वथा ।' 'स्वामी' शब्द वाच्य एक हरि भगावान है तथा आत्मदास्यं हरेः स्वाम्यम् स्वत्वमात्मनि सन्जातं स्वामित्वं ब्रह्मणिस्थितम् । जीवात्माएँ स्वभाव से ही श्रीहरि के दास है और श्रीहरि स्वामी है आत्माओ में दास भाव रहा है और श्रीहरि में स्वामी भाव रहा है ।

सत्संगिजीवन में भी शतानंद स्वामीने लिखा है त्वमेवैकः स्वामी सकलजगतामित्यपि हरे । सर्व जगत के स्वामी आप एक ही है । शास्त्र वचन के अनुसार सकल (समस्त) ऐश्वर्य संपन्न एक 'नारायण' ही है । ताकी श्रीनारायण स्वामी शब्द वाच्य है । किन्तु दुजा कोई तत्व 'स्वामी' शब्द वाच्य नही है ।

स्वामिनारायण संप्रदाय के गुरू परंपरा में प्राचार्य के अनुसार श्रीहरि ने स्वीकार किये हुअे श्री रामानुजाचार्य कृत शरणागति गर्धं के भाष्य में 'श्रीमन्नारायणः स्वामिन् इत्यादौ मन्त्रान्तरे च तद् दृष्टव्यम् । इस प्रकार का वाक्य लिखकर 'नारायण' और 'स्वामी' शब्द के सह-संबंधवाले मंत्र का प्रतिपादन (समर्थन) किया है । कि 'स्वामी' शब्द का मुख्य प्रयोग श्री 'नारायण' के लिए होता है । अन्य तत्व में प्रयोजन 'स्वामी' शब्द गौण है । क्योंकि अंतर्यामी उपरान्त नियमन और बाह्य नियमन रूप (सौन्दर्य) एश्वर्य एक 'नारायण' मे ही संभव है ।

इन्द्र, ब्रह्मा, वैराज, प्रधानपुरूष या अक्षरब्रह्म में एसा एश्वर्य नहीं है । इन्द्र, ब्रह्मादिक, इश्वरों, त्रिलोकी, चोदलोकी ब्रह्मांड का नियमन करता है । इसलिए उसेभी स्वामी कहा जाता है किन्तु उनका स्वामीत्व तो इनके लोक के बाह्य नियमन तक सीमित है ।

सर्व ब्रह्मांड में उनका नियमन नही है । वे अपने आप के ब्रह्मांड के ही स्वामी है । तो भी एक दूसरे की दृष्टि में 'दास' भी है । इन्द्र त्रिलोक के ही स्वामी है–चौदह लोक के नहीं । चोदह लोक के स्वामी तो ब्रह्मा है । वह चौदह लोक का नियमन करता है । इसलिए ब्रह्मा के पास में इन्द्र 'दास' कहलायेगा । विराट के पास में ब्रह्मा दास कहलायेगा । अक्षर ब्रह्म के पास में सर्व इश्वरों दास कहलायेंगे अक्षरब्रह्म उनके स्वामी कहलायेंगा । फिर भी मूलतः अक्षरब्रह्म पुरूषोतम नारायण के पास में दास ही हे । सर्वशक्ति संपन्न अक्षरब्रह्म का नियमन एक परमात्मा के सिवा सब तत्व में है । किन्तु अक्षरब्रह्म परमात्मा का नियमन नहीं करतें । इसी प्रकार मूल अक्षरब्रह्म तक के चैतन्य तत्वों का दासत्व का प्रमाण है । (श्री स्वामीनारायण मंत्र का अर्थ और महिमा ले.शा. निर्मळदासजी)

जो सर्व सृष्टि का नियम करता है --- वह है 'स्वामी' अक्षरब्रह्म से लेकर अन्य जीवों तक समस्त अचेतन–चैतन्य समाज के परमात्मा 'नारायण' ही नियमन (संचालन) करता है । ताकी 'स्वामी' शब्द का मुख्य प्रयोग नारायण के लिए होता है । किन्तु अक्षरब्रह्म के लिए नही क्योंकि वेदो ने परमात्मा को अक्षरब्रह्म के आधार कहा है ।

वही संदर्भ में वेदों की श्रृति को वचनामृत प्रथम प्रकरण के २१ में स्पष्ट करते हुए, श्रीहरिने कहां है कि;--'अक्षर के दो स्वरूप है, एक तो निराकार, एकरस चैतन्य है उसे चिदाकाश कहेंगे, ब्रह्ममहोल कहेंगे और यह अक्षर दूसरे रूप में करके पुरूषोतम नारायण की सेवा में रहे है ।

वेद और वचनामृत के प्रमाण से जीवात्मा मुक्तात्मा के अक्षर के विषय में जो स्वामीपना है, वे दासभाव से युक्त स्वामीपना है । दासभाव से रहित विशुद्ध स्वामीपना तो एक परमात्मा के विषय में

ही है । इसलिए सच्चे अर्थमें 'स्वामी' एक नारायण को ही कह सकते हैं । अक्षरब्रह्म को भी नही कह सकेंगे । यह शास्त्र अधिकृत (प्रमाणभूत) बात है ।

वचनामृत में भी श्रीजी महाराजने कहॉ है कि आतमा और अक्षर यह दोनों जो पुरूषोतम भगवान का शरीर आत्मा वही जीवात्मां आधीन एवं असमर्थता उसीके द्वारा ही है । इसी तरह वह भगवान जो वह अपनी अलौकिक शक्ति के द्वारा आत्मा को अक्षर से ज्यादा व्यापक है । और वह दोनों व्याप्त है । और भगवान जो स्वतंत्र है वह आत्मा और अक्षर दोनों भगवान के आधिन है । वे परतंत्र है और भगवान अति समर्थ है और आत्मा और अक्षर वे तो भगवान के आगे असमर्थ है । इस तरह भगवान जो दोनो के शरीरी है और ये दोनों भगवान के शरीर है । (वचनामृत–प्र. ६४)

इसी प्रकार 'स्वामी' शब्द का ज्ञान शास्त्र के आधार पर हुआ । अब 'नारायण' शब्द का ज्ञान शास्त्र के आधार पर प्राप्त करते हैं । 'स्वामी' शब्द एक नारायण को ही लागू होता है । तो यह 'नारायण' कौन है ? उसका क्या अर्थ होता है ? यह नारायण मंत्र वैदिक है कि अवैदिक है ? क्योंकि जो नारायण मंत्र वेद मान्य नही है, उस मंत्र का जाप करना व्यर्थ है । वेद से विरोध मंत्र का जाप करना उनुचित है ।

श्री 'नारायण' मंत्र वेद मान्य (उचित) इसलिए है कि-- श्री यामुनाचार्यने 'नारायण' त्वयि न मृष्यति वैदिकः कः । तथा परब्रह्म पुरूषोतमो नारायणः ।' इसी तरह स्त्रोत रत्न के भाष्य में गीता भाष्य के उपोद्घात की विवेचन में नारायण शब्द का अर्थ प्रमाण सहित सिद्ध किया है ।

नारायण वेदिक मंत्र है । अनेक श्रृति समुदाय उनका साक्षी (गवाह) है । महानारायण उपनिषद में अनेकबार नारायण मंत्र का प्रयोग किया गया है । ''एको ह वै नारायणासीत्, न ब्रह्मा नेशानः''

। ब्रह्मा और शंकर न थे । एक नारायण ही स्वराट ही बिराजमान थे । एषः सर्वभूतान्तरात्माडपहत्पाप्मा दिव्यो देव एको नारायणः'। सर्व जीवों के अंतरात्मा पाप रहित अलौकिक देव है एक यह 'नारायण' है । अचेतन-चैतन्य रूप (सौन्दर्य) सृष्टि में वहाँ अंतर्यामी और बहार परमात्मा 'नारायण' ही व्याप्त रहे है। कहाँ है कि--'अन्तर्बहिश्च तत्सर्वं व्याप्यो नारायणः स्थितः' । इस प्रकार अनेक श्रृति समुदाय से 'नारायण' मंत्र वेद मान्य सिध्य होता है ।

विष्णुसहस्त्र स्त्रोत में (नारायण) नामका तात्विक अर्थ और उनके भाष्य में 'नारायणय विदमहे' । और नारायणः परंब्रह्म' यह आदिक श्रृतियाँ लिखकर उसका अर्थ किया है । जिसका क्षय नहीं है उसे नर कहा जाता है । अर्थात् स्वरूप (सौन्दर्य) स्वभाव से जो नित्य वस्तुएँ चैतन्य अचेतन है वह 'नर' कहा जाता है । उस नर का अयन आश्रय जो है उसे नारायण कहा जाता है । इस प्रकार सहस्त्र भाष्य में नारायण मंत्र ही वैदिक मंत्र कहा गया है ।

श्रीमद् भागवत पुराण में भी कहा है कि 'नारायण परा वेदाः' सर्व वेद एक नारायण पर है (एक नारायण पर सर्ववेद है) ऐसा सर्व वैदिक मानतें है । उसी तरह भागवत् पुराण 'नारायण' मंत्र घोष करतें हैं ।

महाभारत मे भी व्यास महर्षि ने लिखा है कि - तत्त्वमेकों महा-योगी हरिर्नारायणः परः सर्व से पर तत्व स्वरूप महायोगी श्रीहरि नारायण ही है और व्यास महर्षि श्री नारायण के ध्येय स्वरूप से लिखते हुए कहते हैं कि-- । आलोड्य सर्व-शास्त्राणि विचार्य च पुनः पुनः । इदमेकं सुनिष्यन्नं ध्येयो नारायणः सदा । सर्व शासत्रों का बार-बार मंथन करके चिंतन करने से यह एक ही सार तत्व निकला है --एक 'नारायण' भगवान का ध्यान करना योग्य (उचित) है ।

'नारायण' की तरह कोई देव नही हुअे और होंगे भी नहीं । ऐसा सर्व वेद और पुराणों का सर्वोतम रहस्य है । उसी प्रकार भागवत

में छठ्ठे स्कंध में अजामिल के आख्यान में 'नारायण' की महिमा 'निरतिशय' कहा है ।

वचनामृत में भी श्रीहरि ने कहा है कि-- ''ते नारायण अपना ऐश्वर्य करके सर्वोपरी होकर वर्तन करते है । नारायण जैसा तो एक नारायण ही है । किन्तु दुजा कोई उनकी तरह नही हो सकता । भगवानने कई अवतार लिए है । वह हम जानते है । लेकिन सर्व अवतार 'नारायण' के ही है । ताकी यह मंत्र अनादि और वेद सच्छास्त्र अधिकृत है । ऐसा हमें ज्ञान हुआ । अब हम 'नारायण' मंत्र का अर्थ प्राप्त करेंगे ।

'नारायण' मंत्र में दो शब्द है । 'नर' और 'अयन' (प्रमाण/गति) 'अ' कार दीर्घ करके संधि होने से 'नारायण' शब्द हुआ । इनमें 'नर' शब्द का अर्थ 'मनुस्मृति'में किया है ।

आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः ।
ता यदस्यायनं पूर्व तेन नारायणः स्मृतः ।।

जल को नारा कहा है । क्योंकि जलं 'नर' से उत्पन्न होता है । वह जल सृष्टि से पहले परमात्मा का आश्रयस्थान था । इसलिए सृष्टि के प्रथम गर्भ रूपी जल में परमात्मा 'अयन'(प्रमाण गति) शयन कर रहे थे । इसलिए उसको नारायण कहा जाता है ।

सृष्टि के प्रथम जल को नार कहा है । 'अयन' याने 'आश्रयस्थान' नार-जल परमातमा का आश्रयस्थान होने से 'नार' है, आश्रयस्थान जिसका उन्हें नारायण कहा जाता है ।

न रीयते, नक्षीयते , न नश्यति इति नरः । जिसका स्वरूप स्वभाव से कभी भी क्षय नही होना अर्थात् - नित्यवस्तु - अचेतन - चैतन्य पदार्थ उससे 'नर' कहते है । नराणा समूहः, नारम् । अचेतन-चैतन्य के समुह को 'नार' कहा जाता है । नारम् अयनम् यस्य स नारायणः चेतन-अचेतन के समुह के व्यापक रूप से

आश्रय करने वाले उनके अंतर्यामी स्वरूप अधिकृत है उस तत्त्व को नारायण कहा जाता है ।

''यः पृथिव्यां तिष्ठन् पृथिव्या अन्तरो यं पृथिवी न वेद यस्य पृथिवी शरीरं यः पृथिवीमन्तरो यमयत्येष त आत्मान्तर्याम्यमृतः''जो परमात्मा पृथ्वी के अंतर्यामि रूप से अधिकृत रहकर पृथ्वी का नियमन करता है, फिर भी पृथ्वी उसको नही जान पाती । पृथ्वी के अंतर्यामि तेरे भी अंतर्यामि है । अमृत स्वरूप है ।

नर 'अर्थात्' परमात्मा' के द्वारा उत्पन्न महदादि तत्व 'नार' कहा जाता है । वह तत्व में उदेश्यपूर्ण होने से उसे 'नारायण' कहा जाता है । 'नर' से अर्थात् परमात्मा से उत्पन्न हुअे, अलौकिक समुचय को 'नर' कहा जाता है । वह दिव्य प्रकाश का अयन आधार उसको 'नारायण' कहा जाता है । क्योंकि दिव्य तेजस्वी अक्षरब्रह्म धाम भी परमात्मा के आधार पर है ।

न रमन्ते विषयेषु स नरः भोग्य जिसको बंधन न कर सके ऐसे मुक्त पुरूष को 'नर' कहा जाता है । ऐसे मुक्त पुरूषों की समुदाय जिसको 'नार' कहा जाता है ।

तेषाम् अयनम् उपास्यतया प्राप्यम्

उनके भी प्रिय उपास्य (भक्त) स्वरूप उसको 'नारायण' कहा जाता है । नराणाम् अर्थात् चेतनानाम् अयनम् अर्थात् प्राप्य-स्थानं यः स नारायणः । समस्त जीवात्माओं का अंतिम प्राप्ति स्थान उसको 'नारायण' कहा जाता है । इसी प्रकार नारायण के अनेक अर्थ है ।

व्याकरण शास्त्र के अनुसार 'नारायण' शब्द सिद्धि

'नराणां समूहो नारम् । नारम् अयन यस्येति वा नरस्य अयनमिति नारायणः । ऐसी व्युत्पत्ति है । अब 'नारायण शब्द की सिद्धि का प्रकार जानीए ।

'ईण् गतौ' धातु के अधिकरण अर्थ में ल्युट् प्रत्यय लगाके यु का अन् आदेश करके धातु के गुण और अय् आदेश होके अयन शब्द सिद्ध होता है । या तो 'अय गतौ' धातु को ल्यूट् प्रत्यय लगा के यु को अन् हो के अयन शब्द सिद्ध होता है ।

'नर' शब्द की सिद्धि का प्रकार देखते है । तब **'रि हिंसायाम्'** यह धातु के 'ड' प्रत्यय ला कर 'टि' का लोप करने से 'र' होता है । बाद में 'नग्' के साथ समास करके 'नर' शब्द की सिद्धि होती है । बाद में **'नराणां समूहो नारम्'** ऐसे समूहार्थमें **'तस्य समूह'** - यह सूत्र से अन् प्रत्यय ले के 'नार' शब्द की सिद्धि होती है । बाद में दोनों शब्द के बीच में कहते नार और अयन् शब्द के बिचमे बहुव्रीहि समास करके 'नारायण' शब्द की सिद्धि हुई । इस के बाद **'पूर्व पदात्संज्ञायामगः ।'** यह सूत्र से संज्ञा में 'न' का 'ण' होते 'नारायण' शब्द निष्पन्न हुआ ।

'स्वामिनारायण'मंत्र में 'स्वामी' पद विशेषण 'नारायण' पद विशेष्य है । वैसे **'स्वामी चासौ नारायणश्च इति' 'स्वामी ऐसे नारायण'** ऐसे एक परम तत्त्व का बोधक अर्थ निकलता है । वह अर्थ शास्त्र मान्य है ।

चेतना-चेतन-जातम् अन्तः प्रविश्य यः नियमति स नारायणः किदृशः ? इति प्रश्ने उच्यते यत्, 'स सर्वस्य चिदचिद् जातस्य स्वामी, पतिः राजा वा अस्ति ।'

'स्वामिनारायण' महामंत्र का अर्थ ऐसे होगा - वो अनंत कोटिबद्ध जीवें, अनंतकोटि मुक्त जीवें, अनंतकोटि ब्रह्मांडे, नित्यमुक्ते और अक्षरधाम के अंतर्यामी स्वरूप से नियमन करते है; जो यह सब का आधार है ; जो यह सब का मालिक या स्वामी है उसको कहते है 'स्वामिनारायण' । ऐसे 'स्वामिनारायण' महामंत्र का अर्थ बहुत विशाल और महिमा से भरे हुआ है । जो सब कीसीका आधार है; जो

सब कीसी का मालिक है, जो सब कीसी का नियमन करता है; जो अनंत कोटि ब्रह्मांडो कि उत्पत्ति, पालन और प्रलय करते है; जीसमें से सब अवतारें प्रकट होते है और फिर से उनमें लीन होते है । वो है सर्वावतारी, सर्वोपरी पुर्णपुरूषोत्तम भगवान 'श्री स्वामिनारायण' ।

प्यारे भक्तों ! ऐसा अर्थ सभर यह वेदोक्त सर्वोपरि 'स्वामिनारयण' महामंत्र का जप हो तो जीवात्माओं का सब दुःख टल जाय और महासुखी हो जाय । अर्थ और महिमा के साथ यह मंत्र का जप करते भूत भाग जाय, यमदूत भाग जाय, काले नाग का जहर उतर जाय । मरे हुए जीवित हो जाय, काल, काम और माया का भय टल जाय और जीव अतिशय बलिया हो जाय । इसलिए चलते-चलते, खाते-पिते, उठते-बैठते, नाते-धोते सब क्रियामें अर्थ के साथ 'स्वामिनाराय, स्वामिनाराय, स्वामिनाराय.... जप करना ।

ऐसे महामंत्र राज 'स्वामिनारायण' का भजन और उपासना करने का श्रीहरिने आदेश दिया है । शुद्ध मंत्र के जाप और शुद्ध स्वरूप की उपासना फैलाने का असली धाम 'फरेणी' बन गया । पहले ऐसा सद्भाग्य किसी को मिला नहीं है । अब किसी को मिला नहीं और भविष्यमें मिलेगा भी नहीं । क्योंकि जो महामंत्र का महिमा ऐसा है उस मंत्र की प्राकटय भूमि 'फरेणी' का कैसा महिमा हो शके ! जहा स्वयं श्रीहरि अपना षडक्षरी महामंत्र प्रकट करके इस धरा को कृपावर्षा से भीग देते है । ऐसी पूण्यदात्री सत्यसंकल्प यह भूमि है ।

इस के बजाय श्रीजी महाराज यह पवित्र भूमि पर बार बार पधारे है और बार बार कल्याणकारी लीला चरित्रे किये है । ऐसे चरित्रो कों अब हम याद करे ।

३.६ कल्याणकारी पावन प्रसंगे :

(१) सांठ संतो को दिव्यगति :

एकबार श्रीजी महाराज जुनागढ से जमनावड होकर फरेणी

आये अैर रामानंद स्वामी के द्वारा बनवाया हुआ मंदिर पर निवास किया । दुसरे दिन बडी सभा हुई । संत और हरिभक्त सभा में आकर बेठे । श्रीजी महाराज भी गदी तकीये पे बिराजमान हुए । फिर बडे बडे संतोने श्रीजी महाराज को कहा कि ; कुछ प्रश्न पूछीए तब आनंदस्वामी बोले; ''हे महाराज ! आपने मुझे सब संत में बडा दरज्जा दिया लेकीन मेरी आज्ञा में कोई रहता नहीं । तब श्रीजी महाराज बोले; कि ''हम अक्षरधाम में से कई मुक्तो को ले आये है एवं कई सारे देवो को लाए है ओर वे सब साधु हुए है । वे सब आपकी आज्ञा में क्युं रहे ? वो तो हमने एंश्वर्य करके दबा दिया है । वे तो तुम्हारी आज्ञा में रहे ऐसे नही है । इसलिए जिस तरह चलता है वैसे ही चलने दो लेकीन उसके उपर हुकम मत करना । वो तो हमारी उपासना समझके अपने अपने स्थान पर जाऐंगे । और वहाँ रहकर हमारा भजन करेंगे । और आयुष्य पुरी होगी तब वहाँ से अक्षरधाम में जाऐंगे ।'' इस तरह श्रीजी महाराज की बात सुनकर आनंदस्वामीको सब संतो की महिमा समझ में आयी । फिर श्रीजी महाराज ने सभामें अपने पुरूषोतमता की बात कहकर अपने स्वरूप का पक्का निश्चय कराया । और सब संत के प्रति ऐसे बोले कि '' आप सब हमारे मुक्तानंद स्वामी की आज्ञा में रहो'' ''तब कई सारे संतो ने कहा और हिन्दुस्तानी त्रिविक्रमानंदस्वामी आदिक ने कहाँ कि; ''तुम जैसा कहेगा तैसा करेगा तुम कहो तो अन्न बी नही खावेगा और अेक टंग खडा रहेगा, मटका बी नही मारेगा । लेकीन मुक्तानंद स्वामी का कहां नही मानेंगे'' । यह बात सुनकर महाराज बोले कि; ''स्वर्गद्वारे जावेगा ? तब उसने कहाँ कि; 'जावेगा' फिर महाराजने एक हरिभक्त के पास चारपाइ मंगवाएँ और एक कमरे में रखी । उसमें ऐसा चमत्कार रखा की उस पर जो भी सोऐगा वो धाम में जाऐगा । इस तरह एक ही दिन में सांठ साधुओं को अक्षरधाम में भेज दिया ।

(२) भक्त के द्रोह का फल जरूर भुगतना पडता है ।

श्रीजी महाराज एक दिन फरेणी आये । रामानंद स्वामी के द्वारा किए हुए हनुमानजी मंदिर के कक्ष में आश्रय लिया । श्रीजी महाराज के आश्रीत भक्त यहाँ पर बहुत थे । इसमें वेलाभाई सोनी प्रमुख थे इस वेलाभाई सोनी के यहाँ एक बालक का जन्म हुआ । यह बालक अभी सिर्फ पंद्रह दिनों का ही हुआ था । तब ही बहुत चिल्लाकर रोने लगा । इससे बालक के पिता वेलाभाई और दुरसे परिवारो के लोग बालक के पास गये । और सब चिंता में (परेशानी) पड गये । वेलाभाई बालक के झुले के पास गये और कहने लगा । है पुत्र! रोना बंद करो, तब उस बालकने झुले मे बैठकर उसके पिता को एक चांटा मारा और वेलाभाई सोनी गिर पडे । मंदिर में श्रीजी महाराज थे वहां आकर बात की । ''पंद्रह दिन के लडकेने मुझे चाँटा मारकर गिरा दिया । दांत गिर गये हो ऐसा मुझे लगा ।'' तब महाराजने कहाँ चलो हम आपके घर आकर उसको समजाते है ऐसा कहकर श्रीजी महाराज वेलाभाई के घर गये । और श्रीजी महाराजने लडके (बालक) को डाँटा ।'' तुम पहले के अवतार में धुंधलीमल था । इसलिए तुने किनते सारे अपकृत्य किए है । उसके पापो से तुम अभी दुःखी हो रहे हो एवंम इस जन्म में भी हमारे प्रिय भक्त वेलाभाई को मारा वह भी बडा पाप हुआ । इसलिए अब तुम्हारी मुक्ति नहीं होगी । ऐसा कहा इसलिए वो लडकेने रोना बंध कर दिया । और श्रीजी महाराज मंदिर पर आये ।

(३) व्यापकानंद स्वामी को समाधि :

एकबार श्रीजी महाराज झीणाभाई के गाँव पंचाला आये । और उसके घर निवास किया । फिर सुबह महाराजने कहाँ ''हमें भोजन करना है । तब गंगा माँ ने कहाँ महाराज ! थोडी

देर ठेहरो हम भोजन ले आते है । तब महाराजने कहा ''जो तैयार हो वो देदो मेरे लिए ही नया खाना बनाओंगे तो आपको मेरी कसम है । तब गंगामाँने पुरानी ज्वार की बासी चपाती और गाजर का आचार थाली में लेकर आये एवम् दूध का कटोरा भर दिया । महाराजने जलपान किया और जीणाभाई को प्रसादी देकर वह बाहार आकर बैठे । तब जिणाभाईने भी प्रसादी लेकर महाराज के चरण छुकर सामने बेठे । तब महाराजने जीणाभाई को पूछा कि''ऐसी पुरानी ज्वार आपको खानेको मिलती है; वो नई नही मिलती?'' तब वह बोले कि ''हे महाराज ! रबारी कृषक है । वे हिस्सा पुरा देते नही और लगान के पैसे भी पुरे देते नही और जबरदस्ती करके सभी बोया हुआ अनाज ले जाते है । इसलिए हमे ऐसी पुरानी ज्वार खानी पडती है । यह सुनकर महाराजने कहाँ तीनसो कलसी दाने के लिए बरतन खाली करो तब दरबार ने कहाँ अरे ! महाराज ! तीनसो पोवाला दाने भी नहीं मिलते और तीनसो कलसी कहासे निकालोंगे ? फिर महाराजने नवलसंग एवम् शुकस्वामी को बुलाया । वे आकर महाराज को प्रणाम करके बैठे । तब महाराजने कहाँ'' पोरबंदर मे बाकर साहब आये हुए है उसको खत लिखो'' तब जीणाभाईने कहाँ महाराज ! वह साहब आये है उसका पता आपको कैसे चला ? '' तब महाराजने कहाँ'' हम गाँव फरेणी में थे तब व्यापकानंदस्वामी को समाधि करा कर विदेश भेजा था उस वक्त स्वामीजीने हमको कहाँ जो ''मुझे उस देश की भाषा आती नही है । तब हमने उसको वचन दिया था जो आपको भाषा आऐगी । फिर वह समाधि करके वहाँ गये । तब उस साहब की उम्र सोलह साल की थी वो अपने भवन में सोये हुए थे । वहाँ जाकर उसकी बोली में स्वामीजीने कहाँ कि; आपको महाराजने बद्रिकाश्रम में से यहाँ अवतार (जन्म) दिया है । एवम आपका हिन्दुस्तान में काठियावाड

का राज्य देना है इसलिए आपको बुलाया गया है ।'' तब यह साहबने कहाँ मेरे पास तो राज्य ज्यादा है'' फिर स्वामीजी ने कहाँ ; फिर भी ज्यादा देने की महाराजकी इच्छा है । इसलिए आप काठियावाड आईए ।'' तब साहब ने कहाँ'' मैं अभी तो नहीं आ सकता लेकीन महाराज को आवश्यकता हो तो दो हजार मनुष्य के साथ बाकरसाहब को भेजता हूँ लेकीन कुछ वजह तो बताईए मेरी उम्र सभी से छोटी है मेरा आना ठीक नहीं वरना मैं महाराज की आज्ञा का उल्लंघन करता नहीं ।

इस तरह बात होने के बाद स्वामी समाधि में से जागे सब बात कहकर कहाँ कि वो बाकरसाहब पोरबंदर की गोदी में उतरेंगे फिर वो साहब की दो आगबोट समंदर के दुसरे रास्ते से जा रही थी । इसलिए हमने समाधिवाले मुलजी को रास्ता बताने के लिए भेजा था । इसलिए उस रास्ता बताने के कारण दोनों आगबोट दो दिन से पोरबंदर आई हुई हैं । वहाँ वो तम्बु डालकर रह रहे है । और हमारा संदेश मनुष्य को पुछते है इसलिए यह शुकस्वामी को कहते है कि; ''पोरबंदर उस साहब को खत लिखो । यह कह कर महाराजने स्वामी के पास खत लिखवाना शुरू किया । उसमें पहले कई उपमाएँ लिखी फिर लिखा कि; ''आप वहाँ से सीधे राजकोट जाना और वहाँ राजकोट के राजा के पास से जग्गा लेकर आपका वहाँ निवास करना और इस देश के गरासिया लडकियो-बालिकाओं, अबलाओं को मार रहे है उस पर प्रतिबंध लाद देना ।'' इस तरह कई सारी शिकायत लिखी । वह भक्त पंचाला के रबारी की हकीकत भी कही फिर वो खत को पुरा करके शुकस्वामीने महाराज के हाथमें दिया । तब महाराजने खत को पढकर अपने दस्तखत करके नबलसंगजी को देकर कहाँ कि; ''आप पोरबंदर जाना और यह खत बाकरसाहब को हाथो में ही देना ।'' फिर वह महाराज को प्रणाम

करके स्वार होकर पोरबंदर गये साहब के मुकाम जाकर सिपाई को कहाँ '' हमे यह खत साहब को देना है ।'' तब सिपाई ने कहाँ कि;''मैं साहब को पुछकर आता हुँ ? ऐसा कहकर साहब को कहा कि--''स्वामिनारायण का एक (दूत) मानव खत लेकर आया है '' । तब साहबने कहाँ'' वो स्वामिनारायण के दूत को अश्व के साथ यहाँ ले आओ ।'' तब वह सिपाई नवलसंगजी को अश्व के साथ साथ ले गया । और साहब के कहने से वहाँ तम्बुं के पास अश्व को बाँधा फिर नवलसंगजी ने खत साहब के हाथों में दिया ।

तब ओ कागज को साहबने सातबार सिर से नमन करके उस खत को पढकर खुश होकर बोले'' इस वक्त स्वामिनारायणने हमें अच्छा सलाह मसुहरा दिया है । और उसने पंचास सिपाई मंगवाएं है । फिर पंचास ही कयुं यह सब सिपाई ही स्वामिनारायण के है इसलिए सब सिपाई को ले जाओं ।ज्यादा ले जानेकी साहबने मनाई कीं है । सिर्फ पंचास ही चाहिए । इसलिए इतने ही भेजो ।'' फिर भी साहबने सौ सिपाई नवलसंगजी के साथ भेजे और कार्य पुरा हो जाए तभी वापस भेजना एसा कहाँ ।

बादमें वो सैनिक अपने हथीयार लेकर नवलसंगजी के साथ पंचाला गाँव आये । सब सैनिकने काले कपडे पहने हुएँ थे । और कमर पर कमरबंद बंधा हुआ था और सब अश्व पे सवार होकर एक ही साथ सौ बंदुको का आवाज किया यह सुनकर रबारी के लोगोने जाना कि यह काले डगलेवाले अंग्रेज के ही सैनिक आये हैं वो अवश्य अगवाह करेंगे ऐसा डर होते ही सब खलिहान को छोडकर भाग गये । उस वक्त महाराजने जिणाभाई को पूछा कि; ''यह आवाजे किसकी हैं ? '' तब उसने कहाँ''महाराज वो तो नवलसंगजी पोरबंदर से आये होंगे । ऐसी बात करते है तब ही वहाँ सब सैनिकों के साथ नवलसंगजी जीणाभाई के सभाखंड में आये तब नवलसंगजीने

महाराज को दंडवत प्रणाम किया और दुसरे सैनिकों ने भी नमस्कार किया । फिर नवलसंगजीने बात की जो'' हें महाराज ! यह सैनिको ने बंदुक की आवाज कि जिसके कारण रबारी लोग सब खलिहान छोडकर भाग गये हैं । इसलिए आप वहाँ खलिहान पर आईए ।'' तब महाराज एवं जीणाभाई कितने सारे सैनिको के साथ वहाँ गये और देखा की खेत में ज्वार के बडे बडे गंज पडे थे । फिर साहब की ओर से आये हुए सैनिक के नायकने बोला की''यह सब ज्वार आप गाँव मे ले जाओ और कोई भी रबारी लडने के लिए आयेगा तो उसको पकड कर पोरबंदर ले जायेंगे । फिर जीणाभाईने गाँव में से लोगों को बुलाकर रबारीयों के बैलगाडी थे उसमें रखकर सब ज्वार कमरों मे भर दी गयी फिर साहब के जो सैनिक आये हुए थे उसको पांच दिन तक रोके और अच्छा खाना खिलाया । बादमें जाने को कहाँ तब वो महाराज को नमस्कार करके पोरबंदर गये इस तरह जिणाभाई को ज्वार दिलाकर आनंदित किया । फिर दुसरे दिन महाराज वहाँ से चलते चलते गढडा पधारे ।

(४) उनहतर काल की भविष्यवाणी :

संवत १८६८ की साल में श्रीजी महाराज फरेणी गाँव पधारे । इस वक्त भी श्री महाराज का आश्रय वेलाभाई सोनी के घर ही था । हर वक्त वेलाभाई सोनी के घर ही श्रीजी महाराज का निवास होता था । फरेणी गाँव के सब भक्तजन महाराज और संतो को साष्टांग प्रणाम करके महाराज के सामने सभामें बैठे । और महाराज भी यह भावुक भक्तों के भाव कों समजकर सबको सुख देते थे ।

तब यह भाविक भक्त महाराज की चारपाई के पास आकर बैठ गये । और चरण चांपते चांपते स्नेह से कहने लगे कि'' हम आपको कुछ पूछना चाहते है तब महाराज हँसकर कहने लगे'' पुछिएँ पुछिएँ आप सब हमारे ही भक्त है । आप जो प्रश्न पुछना चाहते हे वह खुसी से पुछे'' ।

तब फरेणी के भाविक भक्त बोले कि महाराज ! हम सब किसान है । इसलिए आपको प्रश्न करते हे कि'' हैं प्रभु! आनेवाला साल कैसा रहेंगा ? ताकी उसी प्रकार की हम तैयारीयाँ कर सके । यह सुनकर महाराजने गंभीरता पूर्वक कहाँ कि'' हें भक्त आनेवाले साल में भयानक और विकट अकाल होनेवाला है । अनाज का एक दाना नही मिलेगा । इसलिए आप सब भक्त दाना ले लेना क्युंकि अनाज पकनेवाला नही है । अच्छाई इसमें है कि आप सब आज ही दाने का संग्रह करो । और आज से ही फिजुल का खर्चा न करें ।

तब सब भक्त ने कहा जैसा आप कहो । महाराज हम सब आज से ही अनाज ले लेते है । आपने जिस प्रकार कहाँ उसी प्रकार फिजुल के खर्च बंद कर देते है । एवं आपके भजन करके इस अकाल का साल बिताएँगे ।

इस तरह श्रीजी महाराज सभा को खत्म करके इस फरेणी गाँव में निकले वहाँ बाजार में एक सोनी की दुकान के पास से महाराज निकले और अपने सहज दयालु स्वभाव से महाराजने सोनी को कहाँ कि..... सोनी महाजन ! आनेवाले वर्षमें कठिन अकाल होंगा इसलिए दाना ले लिजिए ।

तब सोनी ने कहाँ कि मेरे पास बहुत पैसे है, देखो यह रहे । ऐसा कहकर शेठ ने अपने पास रहे पैसे का थेला दिखाया और उस पैसे की आवाज सुनाई ।

फिर इस दुकानवाले के सामने देखकर महाराजने भी हाथ में कंकर लेकर आवाज सुनाई और कहाँ कि; सेठजी आपके पैसे की किंमत यह कंकर जितनी है ऐसा समझकर दाने ले लेना । तब सोनी ने कहाँ ''मुझे अनाज लेने की आवश्यक्ता नही हैं । मेरे पास बहुत पैसे हैं । यह पेसे देकर जितने चाहे दाना मिल जायेंगा ।

तब महाराजने कहाँ कि; जाओ अब आप पैसे दोंगे फिरभी दाना नही मिलेगा । ऐसा कहकर महाराज वहाँ से चल निकले । महाराज के जाने के बाद फरेणी के श्रीजी आश्रित भाविक भक्तोंने महाराज की आज्ञा को सिर पर चढाकर पुरे साल का अनाज ले लिया । लेकीन पहले सोनीने दाना-पानी नही लिया ।

और बाद में सचमुच दुसरे साल उनहतर का अकाल पडा । कही पर भी दाने दिखाई नही देते । वो पेसेवाले सोनी के घर अनाज की कमी होने के कारण उसने पैसा देकर अपने नोकर को दाना लेने भेजा । लेकीन पैसा देते हुए भी कही भी अनाज नहीं मिलता । और यह पैसावाला सेठ पैसा होते हुए भी बीना दाने बाला हो गया । आखीर में वो और उसका परिवार बहुत परेशान हो गया । अंत में पीरवार के सभी सदस्य भूख की बजह से पैर घिसककर मर गये । इसलिए यह दशा की वजह क्या हैं ? मालुम हुआ । महाराज की आज्ञा का पालन न करने से यह पैसेवाला सेठ बिना अन्न.... पैसे होते हुए भी ..... मर गया । देखो केसी है..... महाराज की कृपा.....लेकीन यह अभिमानी जीव को समझ ही नही पाया । और आखिर मे पैर घिसते घिसते उनहतर काल का शिकार बन गया ।

(५) उपलेटा की मलाईबाई :

गाँव उपलेटावाले नथुभाई बाबरिया की बहन मलाई की शादी फरेणी गाँव में की गई थी । वो वहाँ रहते और सत्संग करते थे फिर उसके पती की मृत्युं हो जाने के बाद वह अकेली रहती थी बादमें वह फरेणी गाँव का त्याग करके उपलेटा रहने गई । और उसके भाई के घर में रहने लगी । और उसने गाँव में गाँव की औरतों को सत्संग की बाते करके सत्संग कराया ऐसी बलवाली थी । उसने उसकी जेठानी रूपबाई को भी सत्संग करवाया था । वो

रूपबाई के घर पशुं ज्यादा थे लेकीन वह उनहतर के अकाल में सब मर गये । तब कुछ खाने को न मिले इसलिए उसने लसुन, कांदे खाये थे लेकीन अच्छा साल होने से उसका त्याग कर दिया था । एकबार मलाई आदि औरतें गढडे गाँव महाराज के दर्शन को गई और दूर से नमन करके सभी औरते सभा में जाकर बेठ गई ।

उस वक्त महाराजने मलाईबाई को पुछा'आपकी जेठानी रूपबाई क्युं नही आई''? तब उसने कहाँ 'उसने तो नया घर बनाया है तब महाराजने कहाँ अब दुसरी बार आप आओ तब उसको साथ ले आना ।'' बादमें वो औरत पाँच दिन तक यहाँ ठहरकर उपलेटा गई और दुसरी बार रूपबाई को साथ में लेकर गढडा गयी और महाराज को नमस्कार (नमन) किया तब महाराजने कहाँ ''यह रूपबाई आये है कि ? फिर यह औरतों की सभामें जाकर जीवुबाने बात कही कि जो'' जिसने सत्संग किया हो वो लसुन, कांदा खाना मत एवं सुंघणीं सुंघना मत क्युंकि महाराज ने शिक्षापत्री में उसकी मनाई की है । इसलिए महाप्रभु की आज्ञा पालन नही करेंगे उसको बद्रिकाश्रम में तप कराकर शुद्ध करने के बाद महाराज धाम में ले जाएंगे । इसलिए महाराज की आज्ञा का उल्लंघन मत करना । क्युंकि कुछ पल जीना लेकीन सचेत रह कर'' ।

इस तरह पाँच दिन तक रहकर वो औरतोंने बात सुनकर फिर महाराज को प्रणाम करके वह घर आये और सदैव औरंतो को मंदिर पर एकट्ठा करके कथावार्ता करते थे । और मलाईबाई को समाधि होती थी । और महाराज की मूर्ति (प्रतिमा) के दर्शन पाकर ही थोडे ही बरसों मे रूपबाई की सेहत अच्छी नही रही और उसकी मृत्युं हो गई । तब महाराज लेने आये थे उसे ही विमान मैं बिठाकर बद्रिकाश्रम के किनारे उसको छोड दिया फिर मलाईबाई की समाधि कराकर महाराज अक्षरधाम गये । और महाराजने पूछा कि'रूपबाई

यहाँ नही दिखाई देते वह कहाँ हैं ? तब महाराजने कहाँ '' उसने लसुन कांदे खाये थे इसलिए उसको बद्रिकाश्रम में छोडकर आये है । वो तीन साल के बाद यहाँ आएगी । तब वो समाधि में से आये और तीसरे साल समाधि करके अक्षरधाम गये । तब वहा रूपबाई को देखा तब मलाईबाई ने पूछा कि'' आप कहा गये थे ?'' तब रूपबाईने कहाँ '' मुझे तो महाराजने बद्रिकाश्रम तप के वास्ते वहाँ भेजा था । फिर मलाईबाई जागृत हुए और रूपबाई की सारी बातें औरतों की सभामे कही ओर सभी औरतों को सत्संग कराया । फिर सेहत बिगडने पर हरिभक्तों को बुलाकर कहाँ कि मुझे महाराज दर्शन देते हैं इसलिए मैं धाममें जा रही हूँ।'' ऐसा कहकर प्राण त्याग दिया और श्रीजी महाराज के साथ विमान में बेठकर अक्षरधाम में गये ।

(६) सुख की कुँची :

श्रीजी महाराज एकबार फरेणी गाँव में वेलाभाई के घर कथा-वार्ता करते थे । उस वक्त एक आहिर भक्त कम्बल ओढे काँपते काँपते आता है । सभा में आकर नमस्कार करके यह आहिर रोते रोते कहने लगा कि'' हे महाराज! हे दयालु ! मुजे कई दिनों से यह बुखार परेशान कर रहा है । अब तो कही भी चेन नही पडता ! प्रभु मेरे इस बुखार को निकालो । यह आहीर भक्त की दर्दनाक दुःख की बातें सुनकर महाराज को दया आ गई और तुरंत कहाँ कि'' तुने जो कम्बल ओढा है उसे आंगन में रख दे ताकि इस कम्बल में बुखार रहेंगा ।

बाद में महाराज की यह कृपावचनो को सुनकर यह आहिर भक्तने तुरंत ही अपने शरीर पर ओढा हुआ कम्बल आंगन में छोड दिया और तुरंत ही आहिर भक्त का काँपता हुआ शरीर स्थिर हो गया । और बुखार भी उतर गया । अब उस बुखार का कंपन उस आंगन में छोडे हुआ कम्बल में आ गया । अरे....यह आंगने में छोडा हुआ

कम्बल तो काँपते काँपते छलांग मारने लगा हैं । तब यह देखकर संत एवं भक्त कहने लगे कि महाराज ! यह बेचारे कम्बल की क्याँ गलती है ? अब यह सुनकर बुखार को छुट्टी दे दो ।

तब महाराजने बुखार को कहाँ कि अरे.... तुं यहाँ आकर क्यों घुसा हैं । कोई अच्छी सी जगह ढुँढ और वहाँ सुखी के साथ जिंदगी जियो । यहाँ पर कम्बल की कँपन बंध हो गई । कहने का तात्पर्य यह हुआ कि बुखार महाराज की आज्ञा से कोई अच्छी जगह पर निकल गया ।

बादमें एक संत से रहा नही गया और उसने महाराज को पुछ ही लिया कि ''हे महाराज आपने यह बुखार को कहाँ भेजा है ।'' तब महाराजने हँसते हुए कहा कि;''यह बुखार तो धोराजी के एक बडे शेठ के शरीर में घुस गया है ।

बाद में संत झोली माँगने गये । इसमें दो संत फरेणी से धोराजी गये वहाँ धोराजी में उस सेठ के घर पहुँचे जिसको बुखार था । वहाँ तो सेठ खटिये पर कम्बलमें सोते सोते काँप रहे थे । दो-तीन कम्बल ओढे रखा है । फिर भी सेठ बहुत काँपते थे । बादमें झोली माँगने आये हुए ये संत बोले बिना रह सकते थे कयाँ ! अब पुरा विश्वास हो गया है कि महाराज का यह पसंद किया हुआ पात्र में बुखार का बटवारा हो गया है । फिर भी यह संत सहजता से पूछने लगे कि; ''सेठ को यह बुखार कितने समय से है ? '' तब सेठ के नौकरों ने कहाँ; ''अरे.... साधु महाराज यह बुखार तो अभी अभी पिछले दो घंटो से अचानक आया है । और हमारे सेठ को परेशान कर रहा है । तब उस संतोने मन ही मन सोच लिया कि ''यह बुखार तो हमारे श्रीजी महाराज प्रभु की आज्ञा से यहाँ पर आया हैं ।''

बाद में यह संत धोराजी से फरेणी वापस आ गये श्रीजी महाराज को सष्टांग प्रणाम करके कहते है कि'' महाराज आपने भेजा हुआ बुखार धोराजी के सेठ के पास सही सलामत पहुँच गया है । अतः आप चिंता मत कीजिए । ऐसा कहकर संत हँसने लगे । और श्रीजी महाराज भी हँसने लगे ।

देखा भक्त यह बुखार श्रीजी महाराज की आज्ञा का पालन करके महाराज को खुश कर सकता है । अब हम क्यों नही ? !!

(७) आश्चर्यप्रद औषधि :

एकबार महाराज फरेणी गाँव में सभा करके बिराजमान थे । उस वक्त दो-तीन संतो ने महाराज को प्रणाम करके नम्र भाव से प्रार्थना करके कहने लगे कि; हे महाराज ! अपने ये साधु के शरीर में सुजन बहुत आ जाती है; वहाँ देवानंद स्वामी भी सभामें खडे होकर महाराज को कहने लगे कि; यह सच है महाराज । इस साधु को शरीर पर बहुत सुजन सी आ जाती है । मसुडा और मुहँ पर भी सुजन आ जाती है..... और काफी बिमार पड गये हैं । उसके रोग का कोई उपाय नहीं अब उसके लिए कौंन सी औषधि करे ।

तब महाराजने हँसते हँसते कहाँ कि; यह साधु इस ब्रह्मांड के नही इसलिए उसको इस ब्रह्मांड की दवाएँ काम नही करेंगी । इसलिए उसको अब खट्टी छास और घेंश पिलाया करो । और कुछ खाने मत देना । बहुत खट्टी छाश और घेंश देना । पानी मांगे फिर भी छाश और घेंश ही देना....समझे ?

तब सभी संते एक साथ बोल उठे की, अरे महाराज ! शरीर में सुजन हो तब खट्टी छास दी जाय ? महाराज बोले कि; '' हमने कहाँ था वह भूल गये क्या ? यह सुजन वाले संत यही के नहीं है । इसलिए उनको तो आलोक से बिलकुल विरूद्ध

औषधि ही देनी पडे ही न ! इसलिए.... अब हमने जो औषधि बताइ है वैसे करो.. जो लागु पड जाय तो अच्छा.. नही तो ये संत धाममें चले जायेंगे, समझे !''

तब देवानंद स्वामी और संतोने हा कहकर बिमार साधु के पास पहुँच गये । तब बिमार साधुने खाना मांगा तब संतोने बहुत खट्टी छास में घेंश करके पिला दिया और पानी मांगा तब उन्होंने खट्टी छास पीलायी । इस तरह दो-तीन बार खट्टी छास और घेंश पिलायी तब यह संत के शरीर पर की सुजन कम हो गई । और पुर्वतया अच्छे स्वस्थ हो गये । महाराज की ऐसी रहस्यमय लीला को कैसे समझ सके !

(८) फरेणी से जेतपुर :

एकबार श्रीजी महाराज फरेणी गाँव की सभामें बीराजमान थे । उस वक्त जेतपुर के भक्त जीवा जोषीने भेजे हुए एक व्यक्ति सभा में आया । और उन्होंने जिवा जोषी के द्वारा लिखा हुआ खत महाराज को दिया । महाराजने यह खत (पत्र) पढा इस खत में लिखा था कि; हे दयालु प्रभु ! मेरे यहाँ दो पुत्र की यज्ञोपवित का प्रसंग है । महाराज आप और सभी संत मेरे यहाँ आकर मेरे इस पवित्र प्रसंग को दिव्यता अर्पण दीजिए । ऐसी आपके चरण कमल में मेरी नम्र अरज है ।

सभामें इस पत्र को पढकर महाराज बोले कि; ''क्याँ करेंगे हम ? इस प्रकार विवाह या यज्ञोपवित प्रसंग के निमंत्रण हरिभक्तो के आते ही रहेंगे । इसलिए सबके घर हम पहुँच तो नही पाते और जिसके घर हम न पहुँचे तो उस भक्त को दुःख होगा । तो हम कौन सा निर्णय ले सकते है ?

तब मुक्तानंद स्वामीने महाराज को विनम्र स्वर में बिनती करते हुए कहाँ कि; महाराज जेतपुर के जीवा जोषी बहुत अच्छे

सत्संगी है और बेचारे दीन भक्त हैं । इसलिए वहाँ हम पहुँचे तो अच्छा हैं ।

तब महाराजने खुश होकर कहाँ कि; अच्छा तो हम जेतपुर जायेंगे । बाद में सब संत और भक्त के साथ महाराज जेतपुर पहुँचे । वहाँ जेतपुर के जीवा जोषीने हर्ष उल्लास से महाराज एवं संतो -भक्तों की आगता स्वागता की गाँव में अपने घर निवास कराया । फिर भगवान और भक्त को भाव से भोजन खिलाया । आज इस जीवा जोषी का आनंद का ठिकाना नही था । कयुंकि स्वयं श्रीजी महाराज खुद इस प्रसंग में आकर जीवा जोषी को अलौकिक (दिव्य) सुख दे रहे थे । अपने दोनों पुत्र गोरधन एवं शिवा का यज्ञोपवित प्रसंग तो एक योग था लेकीन श्रीजीमहाराज की कृपादृष्टि इस गरीब ब्राह्मण को भीगो देती थी ।

शाम को इस दोनों यज्ञोपवित लेने वाले पुत्र गोरधन और शिवा की घुडचडी पुरे जेतपुर में निकालनी थी । उसकी तैयारीयाँ हो रही थी । तब उस वक्त श्रीजी महाराज को इस विप्र ने प्रार्थना करते हुए कहाँ कि; महाराज! आप हमारे यह पुत्रो की यज्ञोपवित प्रसंगमें आकर मुझे जीवनभर ऋणी बना दिया है । आपकी यह दिव्य कृपा मैं कैसे भुल पाउँगा ? फिरभी महाराज मेरी अभी भी ऐसी इच्छा है कि आप मेरे यह दोनों पुत्र की घुडचडी में साथ में घुमे तो पुरे गाँव के भक्तो को आपके दर्शन होंगे । और यह जेतपुर के जीवप्राणी केवल कृतार्थ हो जाये । तब महाराजने इस भक्त पर कृपा करके कहा कि; अच्छा हमारी माणकी की भी तैयारी कीजिए । बाद में यह सजाई हुई माणकी पर महाराज सवार हुए । और इस घुडचडी में पहले महाराज की माणकी आगे चली । इसके पीछे संतो-भक्तों और फिर दोनों यज्ञोपवित इच्छुक गोरधन और शिवा की सवारी शोभित थी । उनके पीछे भावुक स्त्री भक्त

भी यह प्रगट प्रभु के कीर्तन गान करके आनंद ले रहे थे । सचमुच आज यह जीवा जोषीने जेतपुर को धन्य-धन्य कर दिया था । आज यह गादीस्थान से जेतपुर तो गोविंद के गर्व में गहेक उठा हैं ।

तद् उपरांत पस, वधामणी भी अलग तरीके से हुई । मुख्य महेमान-महाराज की माणकी तो सबसे आगे अपनी आगवाई गजगति की तरह झुलती झुलती चली जाती है । ताकि सभी भक्तजन प्रथम महाराज का दर्शन (स्वागत) करके 'पस' भराएँ । और पधरामणी कराके बाद में जीवा जोषी के दोनो बेटे को पस भराए । इस तरह पुरे जेतपुर गाँव के भक्तोने महाराज का स्वागत करके पस भराया । तब वह देखकर जेतपुर के जीवा जोषी भी डोलने लगे । आज जीवा जोषी का हर्ष भी नही समा रहा था ।

दुसरे दिन सुबह महाराजने यह जीवा जोषी के दोनों पुत्र गोरधन और शिवा को स्व-हस्त पज्ञोपवित देकर धन्यभागी कर दिया । और जीवा जोषी ने सभी परिवार जनो एवं भक्तों को शाम के भोजन के लिए आमंत्रित किया । सभी रिस्तेदारोंने जीवा जोषी के आमंत्रण का स्विकार किया । किन्तु शाम को जब खाना तैयार हो गया तब कोई नही आया । स्वयं श्रीजीमहाराजने पूछा तब पता चला कि;''पुत्र को दुसरे के हाथो द्वारा यज्ञोपवित दिया जाये तो उसका श्राद्ध पुत्र के पिताजी को नही पहुँचता । इसलिए हम खाना खाने के लिए नही आएंगे ।'' तब महाराजने कहा कि; ''भक्तों यज्ञोपवित तो मैंने ही दिया है । हमे जो श्राद्ध मिलेगा वो पुरे विश्व को मिलेगा । आप सभी रिस्तेदार इस प्रसंग पर आए और यह जीवा जोषी के आमंत्रण का स्वीकार करके ठाकोरजी का प्रसाद ग्रहण करे ।'' महाराज के वचनो को सुनकर सब रिस्तेदार जीवा जोषी के घर गये लेकीन खाना खाने न बैठे । तब सारा भोजन पड रहा । यह भक्तने जो खर्चा उठाया था

उसकी चिंता स्वयं महाराज को भी होने लगी । बाकी बची हुई रसोई गाँव के गरीब लोगों को खिला दि । महाराज को करीमभाई की ओर से पता चला कि जीवा जोषी को इस प्रसंग में पाँचसो कोरी का खर्च हुआ है । अब चारसो कोरी जितनी रकम अभी बोल रही है उसका क्या करे ? महाराज को यह खर्च की बात से बहुत दुःख हुआ क्युंकि भगवान भक्त के दुःख में दुःखी और सुख में सुखी होते हैं । इसलिए अब भगवान कैसे शांत रह सके । इसलिए महाराज खर्च की चिंता दूर करने के लिए शिघ्र ही जेतपुर के सभी भक्तजनों को बुलाया और जीवा जोषी के यह खर्च मे सहायरूप होने की बात कही लेकीन जेतपुर के यह भक्तों के पास से योग्य सहीयोग नही मिला । तब महाराज को ऐसा लगा कि जीवा जोषी के इस खर्च में सहयोग (सहकार) देने के लिए फरेणी के भक्तजन अवश्य सहाय करेंगे । इसलिए महाराज और संत एवं भक्तजन जेतपुर से फरेणी जाने के लिए तैयार हो गये । अब देखेंगे महाराज की प्रेरक लीला ।

(९) समर्पण

फरेणी में महाराजने एक सभा की इस सभामें कई स्त्री-पुरूष भक्त आये थे । और इस सभा में महाराजने जेतपुर के जीवा जोषी की बात बडे विस्तार से कही और जीवा जोषी की नाणाभीड में सबको सहयोग करने की बात की ; तब इस फरेणी सभा में सभी भक्तजन प्रभु की बात सुनकर शांत बैठे थे । लेकीन एक औंरत सभामें से उठकर महाराज को दूर से प्रणाम करके अपने घर चली गई । और कुछ ही वक्त में यह औंरत भक्त अपने घर से कोरी भरी हुई बटलोई लेकर वहाँ फिरसे लौट आयी । महाराज भी सोच में पड गये । इतनी बडी सभामें कोई पुरूष भक्त खडा नही हुआ और यह स्त्री भक्त बटलोई

लेकर सभा में आयी । यह स्त्री भक्त कौन है ? और इस बटलोई में क्या लाई होंगी ?

तब तो यह स्त्री भक्त महाराज के चरणों में पडी और अपने साथ लाए हुई बटलोई को महाराज के चरणों में रख दिया । तब महाराजने पुछा कि; इसमें आप कया लेकर आयी हों ? तब यह स्त्री भक्तने कहा कि; महाराज जीवा जोषी को देने के लिए इस बटलोई में कोरी लाई हुँ । तब महाराज सोच में पड गये कि; यह स्त्री भक्त की श्रद्धा और हिंमत तो देखों । बाद में महाराज को सभा में से पता चला कि यह स्त्री भक्त तो मेरे भाविक वैरागी हरिदास की धर्मपत्नी है । महाराज तो यह स्त्री भक्त पर खुश हो गये । इसलिए महाराजने भक्त के भाव को जानने के लिए कहाँ कि.....बावाजी अभी घर पे नहीं है और घर पे आने के बाद तुमको डाटेंगे तो नही ना ? तब स्त्री भक्त भी बोल उठी कि; अरे ! महाराज कयां बात कर रहे है वो तो मुझसे भी अधिक भाविक भक्त है । वो तो आपके लिए सब कुछ देने के लिए तैयार है । तो फिर इस कोरी बटलोई की बात ही कयों करे ?

यह बात सुनकर सभा में आये हुए सभी लोग आश्चर्यचकित हो गये और महाराज भी भावुक वैरागी भक्त के भाव को समझकर खुश हो गये । फिर महाराजने यह कोरी भरी हुई बटलोई ली और उस बटलोई में से चारसो कोरी लेकर बाकी बची हुई कोरी और बटलोई यह भाविक भक्त को दे दी । तब यह भावुक भक्त बोल उठी कि; ''महाराज यह बटलाई मे से मुझे एक भी कोरी घर ले जानी नही है हे प्रभु ! आप कृपा करके यह सब कोरी का स्वीकार करे''। महाराज आपके भक्त जब घर आएंगे तब यह बात सुनकर आनंदित हो जाएँगे । लेकीन जो मैं यह कोरी फिर से घर ले गई तो मुझे डाटेंगे । इसलिए महाराज ! मुझ पर कृपा करके यह सब कोरी ले ले तो अच्छा है ।

तब महाराजने हँसते हँसते कहाँ कि; हमारे भक्त को यह कह देना कि; हमे चारसो कोरी की आवश्यक्ता है । तब महाराज की इच्छा के अनुसार यह भावुक स्त्री भक्त भी बाकी बची कोरीयों को घर ले गई और महाराज भी यह वैरागी भक्त पर खुश हो गये । और मन ही मन महाराजने यह भक्त को आशीर्वाद दिया ।

शाम होते ही वैरागी हरिदास घर आते हैं तब उनकी धर्मपत्नि से सब बातें विस्तार से सुनते ही बहुत खुश हो गये । लेकीन अपनी धर्मपत्नी बाकी बची हुई कोरी घर ले आयी । वह उसको पसंद नही आया । इसलिए वैरागी साधु उंचे आवाज में बोलने लगे कि आपने यह कोरी कयुं वापस ली ? अरे ! महाराज के लिए हम सबकुछ गवा देने के लिए तैयार है । तो फिर यह कोरी वापस क्यों लायी ? तब धर्मपत्नी ने कहा कि; ''महाराज की आज्ञा थी'' इसलिए बची हुई कोरी ले आयी हुँ । तब यह वैरागी साधु शांत हुए ।

जब अन्य कोई यह अवसर सँभाल न सके । तब यह फरेणी के भावुक वैरागी भक्तने सही अवसर पर महाराज की कृपा प्राप्त कर ली । जेतपुर के दुःखी जीवा जोषी के दुःख दूर करने हेतु प्रभु के चहीते बने हुए यह वैरागी भक्त को मालुम होगा कि जो होता है अवसर पर वो धन से नही होता ।

यह भक्तने पैसे नही दिये लेकीन प्रभु का अवसर सँभाला है । इसलिए ही अवसर को लेकर पैसे का मूल्य हुआ । इसलिए वैरागी भक्त ''फरेणी माहात्म्य''में सब को दर्शन देने के लिए प्रगट हो गये । धन्य हैं इस फरेणी की धरा को जिसने यह सपुतो को श्रीजी महाराज की सेवा में समर्पित कर दिया है । धन्य ...हो.... धन्य..... हो यह फरेणी की धरा को ।

(१०) प्रत्यक्ष पूजा से पूर्णता :

एकबार श्रीजी महाराज फरेणी गाँव में वेलाभाई सोनी के घर सभा करके बैठे थे । इस सभामें महाराज आज कृपावश होकर आश्रितजनों पर कृपा वरसा रहे थे । यह दिव्य आनंद की अनुभूति में समय कैसे बीत गया वो संतो और भक्तों कों पता न चला । सभा पुरी हुई । महाराज बरामदे में बिछाएँ हुए खटिएँ पर सो गये । और महाराज ने इस तरह सुपेडी गाँव की बढई स्त्री भक्त टबीबाई को दर्शन देकर कहाँ कि; बहन टबी हमे आपने बनाया हुआ भातला और दहीं खाना चाहते है । तुम सुबह भातलुं और दहीं लेकर फरेणी आ जाना, मुझे कई समय से यह खाने का संकल्प है । तो सुबह में जल्द आना । यह सब महाराजने स्वप्न में कहा । टबीबाई कहती हैं : देखो देखो अब मैं मेरे प्रिय भगवान के लिए कैसा पाथेय बनाती हुँ । आज तो मेरे प्रिय भगवान को खुश कर देना हैं । अरे..... कभी भी न खाया हुआ ऐसा भातला मेरे प्रिय भगवान को खिलाउँगी । मैं कौन? मालुम हैं ? मैं हुँ टबी टबी । फिर तो यह आनंद विभोर टबीबाई तो सोये ही नहीं । जल्दी से उठकर स्नान एवं पुजा पाठ करके पाथेय बनाने लगे । सबसे पहले गेहुँ और बाजरा के आटा को मिलाकर उसकी चपाती बनाई । यह चपाती में खडे करके उसमें घी डाला यह बनाई हुई चपाती यानी पाथेय । इस तरण खाना बनाकर थाली रख दिया । और फिर दहीं में से मलाइ निकाल कर कटोरा भरके रख दिया ।

सुबह हो गई है । इस टबीबाई का पती एवं उसका दियर और दुसरे मजदूर खेत पर बाजरा बनुने के लिए सुबह से निकल गये थे । और टबीबाई को कहकर गये है कि; ''तुम दो पहरको पाथेय लेकर खेत पर आना''। लेकीन आज तो टबीबाई कुछ और

खुशी मे थे । फिर तो टबीबाई ने पाथेय तथा दहीं की कटोरी एक वस्त्र में बांधकर चल निकले । और पडोशी की ओरतों कों कहकर गई कि; ''मै मेरे भगवान के दर्शन करने के लिए फरेणी जा रही हुँ । ऐसा कहकर टबीबाई चल निकले । वो हर्ष में ही हर्ष में सीधे फरेणी पहुँच गयी । सुपेडी से फरेणी कैसे आ गया । कुछ पता न चला । जैसे महाराज ने ही पहुँचा दिया हो ऐसा लगा ।

यहाँ पर महाराज भी सुबह की नित्य क्रिया करके वेलाभाई सोनी के घर से निकलकर जहाँ सद्. रामानंद स्वामीने निवास किया था उस धर्मशाला में पधारे । यह धर्मशाला में संत-हरिभक्तो की सभा होकर बैठी थी । महाराज यह सभा में बिराजमान होकर सबको सुख दे रहे थे । उसी वक्त सुपेडी की बढई स्त्री भक्त टबीबाई इस सभामें आकर महाराज को प्रणाम करके हँसते हँसते कहने लगी कि; ''चलो महाराज पाथेय और दहीं खाना हे ना ? इस तरह महाराज भी हँसते हँसते चले गये । पाथेय और दहीं खाने !! देखा ! कैसे भगवान और कैसे भक्त ? फिर तो महाराजने भी बडे प्यार से टबीबाई के भाव का पाथेय और दहीं खाकर अपने अंतर से खुशी व्यक्त की यह देखकर भावुक टबीबाई तो खुश हो गई । यह टबीबाई के लिए आज का दिन सुवर्ण का बन गया । अब भले ही जो होनेवाला हो अब हो ।

अब इस ओर सुपेडी में टबीबाई के पति को पता चला कि टबीबाई तो उसके भगवान के पास फरेणी पहुँच गई हैं । इसलिए बढई जाति के स्नेहीजन कहने लगे कि..... यह स्वामिनारायण तो जादुगर है । इसलिए हमे भी जल्दी वहाँ पहुँच जाना चाहिए वरना तो टबीबाई को कही स्वामिनारायण समाधि में भेज देंगे । ऐसा सोचकर तीन-चार बढई हुँका फूंकते फूंकते चल निकले और फरेणी गाँव पहुँचे ।

इस तरफ फरेणी में बिराजमान महाराज को भी आनेवाले बढईयों के मन की बात ज्ञात हो गई थी । और सचमुच ही टबीबाई को समाधिवश कर लिया था । कुछ ही वक्त में सुपेडी के बढई सभामें आ पहुँचे । और टबीबाई के पास जाकर देखा और पता चला कि टबीबाई तो सचमुच समाधिवश में है । तब यह सुपेडी के बढई परस्पर एक-दुसरों के सामने देखकर कहने लगे कि; ''देखा ! यह यह जादुगर स्वामिनारायण ने सचमुच जादू कर रखा हैं ना ? तब यह टबीबाई का पति क्रोधित होकर महाराज को कहने लगा कि; आपने इस ओरत को क्या कर दिया हैं ? तब महाराज ने कहाँ कि इस भक्त को समाधि हो गई है । और प्रभु स्वरूप का आनंद ले रही हैं । वह देह में नही है । तब टबीबाई का पती नस की जाँच करने लगा । लेकीन नस जाँच न हो सकी और वो सोच में पड गया ।

इसलिए महाराजने कहाँ कि;'' ऐसा कीजिए आप उनकी कलाई पर अँगारे रखे; ता कि आपको विश्वास हो जाएगा कि वो सचमुच शरीर से दूर हो गई हैं कि नहीं । इस सुनकर टबीबाई के पतिने उनकी कलाइ पर अंगारे रखे । फिर भी टबीबाई का हाथ हिला भी नहीं । किन्तु यह अँगारे से बाई के हाथ की नस से खुन उबलने लगा । तब सुपेडी के सभी बढई श्रीजीमहाराज को प्रार्थना करने लगे कि हे महाराज ! हैं प्रभु ! आप भगवान हो । यह औरत को अब जगाइएँ ! दयालु ।''

सुपेडी के बढई की ऐसी विनय युक्त वचनो सुनकर दयाळु प्रभुने कृपा करके टबीबाई को फिर से शरीर में ले आयें और टबीबाई को कहने लगे; अरे.....। टबी ! तुम कहाँ गई थी ! तब टबीबाईने कहाँ मैं तो आपके धाममे गई थी ! और भगवान का सुख प्राप्त कर रही थी । कितना आनंद ! .... कैसी शांति ! ..... महाराज आपने मुझे यहाँ

फिर से क्यों बुलाया ? अब मुझे यहाँ नही रहना है । महाराज मुझे अक्षरधाम का अलौकिक सुख प्राप्त करने दीजिए ना !

टबीबाई की यह बात सुनकर सब बढई भक्त आश्चर्य में डूब गये । बढई भक्त की ऐसी स्थिति देखकर महाराज यह भक्तों पर खुस हो गये । और टबीबाई को उनके साथ सुपेडी जाने की आज्ञा दी । सभी भक्तों के साथ टबीबाई सुपेडी जाने के लिए तैयार हो गई ।

उसके बाद यह सुपेडी का बढई परिवार कई सालो के बाद जेतपुर रहने गये । यह टबीबाई वृद्धावस्था में बिमार पड जाती हैं । तब महाराज अपने इस प्रिय भक्त को आखरी दिनों में लेने के लिए हजारो संतो और भक्तों के साथ विमान लेकर आये । और टबीबाई को लेकर गये, जेतपुर के सभी भक्तजनों को दिव्य दर्शन हुआ और भगवान को भाव से पाथेय भोजन देनेवाली यह टबीबाई आखरी वक्त पर सबको कहकर गई कि; ''देखिए । मेरे प्रभु मुझे लेने आये है । सब दर्शन कर ले । .... अच्छा ..... जय स्वामिनारायण भक्त ।

(११) सांख्य बीना आधा सत्संग कहा जाता है ।

एकबार श्रीजी महाराज फरेणी पधारे तब कारियाणी के मांचा भक्त सारंगपुर के जीवा खाचर, गढपुर से दादा खाचर ओर लोया से सुरा खाचर आदि काठी दरबार साथ में थे । वेलाभाई सोनी के यहाँ महाराजने आश्रय लिया । संत, हरि भक्तों ने भी यथायोग्य आश्रय लिया । वेलाभाई सोनी आदि भक्तजन श्रीजी महाराज की सेवा करने लगे । इसी वक्त श्रीजी महाराज फरेणी में कई दिनों तक ठहरे । हर दिन शाम को सभा होती थी । इसमें संतो हरिभक्तों धर्म, ज्ञान वैराग्य आदि अनेक प्रकार की बाते करते थे । हर दिन सुबह में एवं दो पहर के बाद भद्रावती बावली पर स्नान करने जाते थे और भद्रावती में संत-भक्त साथ में जलक्रिडा करके सबको आनंदित करते । हर दिन साम को सभा होती थी । इसमें एकबार श्रीजी महाराजने सांख्य

विचार देते हुए कहाँ कि; ''शरीर और शरीर के सम्बन्धी दुःख रूप हैं ।'' 'जगत मिथ्या हैं भगवान सत्य है ।' जिस पदार्थ, वस्तुं में आसक्ति होती है उसका यथार्थ स्वरूप जानने को मिले तो उसकी अरूची कम हो जाती हैं । दुःख देखने सेही वैराग्य की उत्पति होती हैं । जगत को नाशवंत मानने से अरूचि होती है । जो शरीर दुःखरूप दिखाई दे तो ही इसमें आसक्ति मिटती हैं । और शरीर में से आसक्ति मिटती हैं । तो ही आत्मा में प्रीति होती हैं । इसलिए भगवान के भक्तों को देह का यथार्थ स्वरूप जानना चाहिए । जिस तरह पंचविषय का स्वरूप जैसा हैं वेसा दिखने को मिलता हैं । फिर पंचविषय भुगत नही सकते । उस प्रकार शरीर का स्वरूप स्थिति जैसी है वैसी जानने को मिले तो उसमें कममात्रा में आसक्त रहती हैं । यह प्रसंग सद्. गुणातीतानंद स्वामीने लिखा हैं ।'' सभी प्रकार की आसक्ति टल जाये तो इस लोक को देह पसंद नही लेकीन इस लोक में रहना पडे तो दुःख होता ही हैं । ऐसा कहाँ । आसक्त रहित है उसका दुःख होता हैं । उसको कया समझे ? फिर उसका उत्तर किया जो दुःख अच्छा करते हैं क्योंकी जिससे निर्मानी रह सकते है । भगवान जो करते हे वो अच्छे के लिए ही करते हैं । देह का रूप फरेणी गाँव मे सुरा खाचर को कान दिखाया और उलटी हुई । इस तरह दुसरे को दिखाई देता हैं तो ऐसा होता हैं । '' इसलिए शरीर का जैसा रूप है वैसा दिखाये तो उसमें से आसक्त टली जाती हैं ।

(१२) जिसको निश्चय हुआ हो उसके वचन सेही निश्चय हो ।

सद्. श्री गुणातीतानंद स्वामी के पाससें सद्. बालमुकुंददास स्वामीने सुनी हुई और उसने की हुई प्रसादी की बात में कहा है ।

स्वामीजीने बात की है कि थाणागालोल में मावाभाई थे । वो पहले से ही सत्संगी नही थे । लेकीन मुमुक्षु अवश्य थे । छोटी सी उम्र

गेहरे खडे पड गये । एक दिन गाँव में खाखी बावा की जमात आई । गाँव के दुसरे लोगो के साथ मावाभाई उसके पास बैठने के लिए गये । उस भक्त की उम्र छोटी थी । कई लोग उठकर चले गये । लेकीन मावाभाई तो वही पर बैठे रहे । तब जमात के महंतने शिष्यों को पूछा ''खेमे में या बाहार कोई गाँव की व्यक्ति हैं? तब एक शिष्यने कहाँ ''कोई व्यक्ति नही हैं । लेकीन एक छोटा लडका बेठा हैं । तब महंतने कहाँ लडका कयाँ समझे ? आप सब यहाँ आओ, एक बात कहता हुँ। सब महंत के पास आये और महंतने कहाँ कि....' हम ठुंगा निकालकर भले ही घुमते और जुठे आडंम्बर जगत को दिखाते हैं लेकीन अब हममे कुछ कल्याण नही । '' तब उसमें से कोई बोला; ''तब कल्याण कहाँ है ? '' कल्याण तो आज जीवन मुक्ता का पंथ चल रहा हैं । उसके जो स्वामिनारायण कहे जाते है; उसमें है । लेकीन दूसरी जगह पर कल्याण कही पर नहीं हैं । इस तरह महंत बोले वो बात मेने कानो से सुनी हैं । ऐसा मावाभक्त कहते हैं । फिर मावाभाई ने सोचा कि हम स्वामिनारायण को मिलेंगे ।

उस वक्त जेतपुर के जीवाजोषी के दो पुत्र थाणा गालोल में कथा करने के लिए आये थे । मावाभाई कहते थे कि मैं भी कथा सूनने के लिए जाता था । वों ब्राह्मण सत्संगी थे । उसके ललाट पर तिलक देखकर मावाभाई ने पूछा ; जगत में रामानंदी (खडा) तिलक करे, शिवमार्गी ललाट पर आडा तिलक करे, वैष्णव टुकडे में तिलक करें । आपने यह तिलक टीका किया है वे किसका हैं ? तब ब्राह्मणोंने कहाँ ''यह तिलक टीका स्वामिनारायण का है ।'' तब मावाभाईने पूछा स्वामिनारायण कौन हैं ? तब ब्राह्मणोने कहां कि वे प्रगट भगवान हैं ।'' मावाभाई ने फिर से पूछा स्वामिनारायण में कल्याण होता हैं ? या आगे हो गया या अभी भी होता हैं । तब वे ब्राह्मण बोले कि; ''स्वामिनारायण में कई जनो का कल्याण हो गया

है, फिलहाल भी हो रहा हैं और आगे भी होगा '' तब मावाभाईने स्वामिनारायण भगवान को प्राप्त करने के लिए ब्राह्मणो से बिनती की । कथा पुरी होने पर मावाभाई ब्राह्मणो के साथ चले । ओर स्वामिनारायण भगवान का दर्शन करने का दृढ निश्चय किया । दोनों ब्राह्मण और मावाभाई गाँव फरेणी में आये । श्रीजी महाराज के अनन्य आश्रीत रामजीभाई के वहाँ रात को ठहरे । शाम को मावाभाई खाना खाने के लिए बेठे । तब रामजी बढई की बुढीयाने मावाभाई को पूछा कि; आपका नाम क्यां हैं और कहा जा रहे हो ? तब मावाभाई ने कहाँ; ''महाराज के दर्शन करने के लिए जा रहा हुं ।'' बुढीयाँ को ऐसा लगाकि मावाभाई सत्संगी हैं । ऐसा सोचकर बुढीयाँ ने पूछा कि मावाभाई हमारे ऐसे कयाँ पूण्य होंगे कि हमको प्रगट भगवान मिले । हमारे जैसे किसीके पूण्य नही होंगे !!'' यह सुनकर मावाभाई सोच ने लगे कि बुढियाँ को ऐसी महिमा और ऐसा निश्चय हैं । इसलिए स्वामिनारायण भगवान ही होंगे । इस तरह मावा भक्त को आधा निश्चय तो हो ही गया । इसलिए मावाभाई राम राम भजन करते थे उसके बदले में स्वामी राम, स्वामी राम ऐसा भजन करने लगे । ऐसा ही भजन करते करते पीपलाणा गये । वहाँ श्रीजी महाराज के दर्शन करके कृतार्थ हुए ।

(१३) भगवान का निश्चय भगवान से ही होता हैं

कारियाणी गाँव में मांचा खाचर और भोजाभाई दोनो पूर्व जनम के शुद्ध मुमुक्षु थे । दोनों प्रथम मार्गीय पंथ मे थे । अपने मोक्ष के लिए भगीरथ प्रयत्न करते थे । मोक्ष प्राप्ति के लिए साधु की सेवा सच्चे दिल से करते थे ।

एकबार श्रीजी महाराज कारियाणी गाँव आये । तब मांचा खाचर अपने आप किस प्रकार सत्संग हुआ वे पूर्व वृत्तांत श्रीजीमहाराज

को कहते हैं कि; मैं और भोजाभाई हम प्रथम मार्गीय पंथी थे। एकबार दोनों साथ में काशी की यात्रा करने गये। वहाँ गायो को हरे घास खिलाकर दान किया। इस तरह ही ब्रह्म भोजन करा के बहुत पुण्य किया। कावड में गंगाजल भर के कारियाणी वापस आ गये।बाद में हम दोनों मित्रों ने माला लेकर प्रतिज्ञा की कि;''जो आपको कोई महापुरूष मिले तो मुझे कहना और मुझे कोइ महापुरूष मिलेगा तो मैं आपको कहुँगा।''ऐसा निश्चय करके भोजाभाई गंगाजल की कावड लेकर चलने लगे और गाँव जेतपुर की सीमा तक आये। वहाँ पर लडके गऊं चराते थे। वे लडके बिना बुलाये बोलने लगे कि; इनको भगवान का खप है सो उनको भगवान दिखाये। यह सुनकर भोजाभाई बोले ''आप हमें भगवान बताईए। तब उसमें से एक लडके ने आगे आकर उसे रामानंद स्वामी के पास ले गया। भोजाभाई ने रामानंद स्वामी के दर्शन किए। ज्ञानवार्ता सुनकर रामानंद स्वामी ही भगवान हे ऐसा निश्चय किया। कावड में लाये हुए गंगाजल से स्वामीजी को स्नान करवाया। और साथ में रहने के लिए रात ठहरे। फिर स्वामीजी ने भोजाभाई को कहाँ अब आप घर जाइए। तब भोजाभाई ने कहाँ मेरा एक मित्र है। आप कहे तो मैं आपके दर्शन के लिए उसे बुला लाउँ? तब प्रसन्नता के साथ स्वामीजीने कहाँ कि; ''यहाँ बहुत भीड होती है इसलिए उन्हे अकेले ही लाना।''

बाद में भोजाभाई कारीयाणी आये और रामानंद स्वामी की महिमा की सब बातें कही। वे बाते सुनकर मुझे शांति मिल गई और अतिशय आनंद हुआ। यह आनंद के वेग से मेरे खेत में तीनसो बिघा में कपास था। वह गायो को चरा दिया। इसलिए सब रिस्तेदारोंने मेरी निंदा की और मुझे गालियाँ दी। तब मैंने कहाँ बडे पुरूष के दर्शन के लिए जाने में खेत रूकावट बन जाता है। इसलिए

यह खेत को चरा दिया। '' इस तरह रिस्तेदारो को समझाकर गंगाजल का कावड लेकर मैं जेतपुर रामानंद स्वामी के पास पहुँच गया। उनकी अद्भूत कथावार्ता सुनकर मुझे रामानंद स्वामी के भगवान होने का निश्चय हुआ। रामानंद स्वामीने खुश होकर कहाँ कि;''भगतजी'' अब घर जाईएँ। तब मै ने कहाँ ''जो आप मेरे घर आये तो मैं घर जाउँगा।''तब रामानंद स्वामीने कहाँ कि; अन्नकूट के उत्सव पर हम कारीयाणी अवश्य आयेंगे। आप घर जाइएँ। भजन करिएँ इस तरह मांचा भगत स्वामी की आज्ञा और आशीर्वाद लेकर घर गये।

रामानंद स्वामी के ऐसे निष्ठावान मांचाभगत नाजा भगत और मीणबाई थे। वे सब रामानंद स्वामी का ध्यान करते थे तो उनको ध्यान में श्रीजी महाराज दिखाई देते थे। मस्तक पर शोभाईमान केश लग रहे है। और सुंदर झुमके वाली अलफी धारण की हुई है ऐसी मूर्ति का सब ध्यानमें दर्शन करते सोच रहे थे कि यह कौन है? फिर निःसंशय होने के लिए सभी रामानंद स्वामी के पास गये। लेकीन रामानंद स्वामी तो अंतर्धान हो गये थे।

इसके बाद एकदिन वो सब फरेणी गाँव में श्रीजीमहाराज के दर्शन के लिए गये। तब उन्होंने महाराज को पूछा कि हम रामानंद स्वामी की ध्यान करते थे तब हमे आपकी मूर्ति दिखाई देती थी आप हमें उस रूपमें दर्शन दीजिए। इसलिए महाराज ने किसीके घर पर अलफी बँधवा के रखीथी वह मंगवाई और महाराजने पहन ली। बादमें दर्शन करके वे भक्त बोले कि;''हम स्वामीजी का ध्यान करते थे तब आपके ऐसे दर्शन हुए थे।''

(१४) स्वामिनारायण मुख से उच्चरे :

उद्धव अवतार रामानंद स्वामी अंतर्धान हुए। रामानंद स्वामी के चौदहवाँ के बाद सद् मुक्तानंद स्वामी को कच्छ भेजा गया। सद्

रधघुनाथदास को अमदाबाद भेजा गया । श्रीजी महाराज अपने हरिभक्तों और संतो के साथ धोराजी गये । धोराजी से भाडेर, माणावदर, होकर मेघपुर पहुँचे । मेघपुर में मुख्यत्वे समाधि प्रकरण चलाया । शास्त्र के अनुसार सात अंग सिद्ध हो उसको ही समाधि होती है । लेकीन श्रीजी महाराज तो अपने ऐश्वर्य से किसी को भी समाधि कराने लगे । स्त्री या पुरूष, विद्वान या अनपढ, मनुष्य या पशु, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र, अशतशुद्र, ज्ञानी-अज्ञानी जो कोई महाराज के दर्शन करे, बात सुने महाराज को याद करे वे सब को समाधि होने लगी । श्रीजी महाराज की ऐसी ऐश्वर्य की बाते देशभर में होनें लगी । कच्छ प्रदेश में मुक्तानंद स्वामीने भी समाधि प्रकरण की बात सुनी इसलिए सत्संग की माँ सद्. मुक्तानंद स्वामी भुज से मेघपुर आये और सहजानंद स्वामी को समाधि प्रकरण के बारेमें बात की कि ''रामानंद स्वामीने इस तरह सत्संग को आगे बढाया नही हैं ।'' यह बात सुनकर श्रीजी महाराजने जेठामेर और माधवदास को समाधि करवाई । यह दोनो मुक्तानंद स्वामी के प्रिय और विश्वासु थे । उसने रामानंद स्वामी को श्रीजी महाराज की सेवा में समाधि में देखा । उन्होनें मुक्तानंद स्वामी को समाधि में जैसा देखा वैसा कहां इसलिए मुक्तानंद स्वामी संशयवत हुए । और मेघपुर से सब कालवाणी पहुँचे ।

कालवाणी में सद्.रामानंद स्वामीने जहाँ पर आश्रय किया था वही पर सभीने आश्रय किया । दूसरे दिन सभा हुई; श्रीजी महाराज उच्च आसन पर बिराजमान थे । ब्रह्मचारियों, संत एवं गृहस्थ सत्संगीयों भी मर्यादापूर्वक सभामें बैठे और श्रीजीमहाराजने स्वरूपानंद स्वामी को आज्ञा की कि'' आप जमपुरी में जाईऐं और वहाँ जाकर स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण, स्वामिनारायण इस तरह बोलना

इसलिए जमपुरी के दुःखी होनेवाले जीव सब उर्द्धगति को पाकर भूमा पुरूष के लोक में जाएँगे स्वरूपानंद स्वामी जमपुरी में श्रीजी महाराज की आज्ञा से गये और स्वामीनारायण स्वामिनारायण स्वामिनारायण स्वामिनारायण स्वामिनारायण बोले । यह महामंत्र सुनने से नरक में पीडा पाकर जिवात्मा उर्द्धगति पा कर भूमापुरूष के लोक में गये । यह प्रौढ शक्ति-प्रभाव मुक्तानंद स्वामी ने देखी और अपनी विणा उठाकर बोले ।

१ सुखदायक रे स्वामी सहजानंद, प्रगट पुरूषोतम श्री हरि ,
जिनका स्वामिनारायण नाम है, जिनके भजनसे रे हो भवजलपार
– प्रगट पुरूषोतम श्रीहरि

२ प्रेमे प्रगटया रे सुरज सहजानंद , अधर्म अंधाला टालिया
मुक्तानंद कहे महासुख दिनु उनके वारणे रे जाउँ बारंबार
– अधर्म अंधाला टालिया

३ करी करूणा रे स्वामी सहजानंद, पधारे अखंड सुख देने को

४ स्वंय परब्रह्म रे स्वामी सहजानंद, नारायण प्रबल प्रताप है
स्वामिनारायण मुखे उच्च रे, उनके जनम मरणका भय दूर हो जाय
– नारायण प्रबल प्रताप है
सभी नरकके कुंड खाली हुए, भूखे जमगण रे कर घीसके पस्ताय
– नारायण प्रबल प्रताप है
पामें अनंत जीव हरिधामको, उनकी गणना रे कहेते शेष लजाय
– नारायण प्रबल प्रताप है
मुक्तानंद कहे महिमा अति गुना, उनको एक मुखसे रे कवि कितना गाय
– नारायण प्रभु प्रबल प्रताप है

इस तरह कीर्तन में श्रीजी महाराज का महिमा सुनाया ।

१५ श्री हरि का २७ वाँ प्रागटयोत्सव

श्रीहरि भादरा शेखपाट, अलैया, मोडा और गाँव मुलेल होकर सं.१८६३ चैत्र शुद छठवी के दिन संध्या के समय फरेणीपुर में

आए । सुंदर वस्त्र एवं सुवर्ण के आभूषण पहने हुए थे । ब्रह्मांड की समग्र शोभा धार रहे थे । देव, मनुष्य और दैत्य जिस सुख के लिए मर मिटते है । जिसके लिए राहु, हिरण्याक्ष, हिरण्यकशिपु, रावण, कंस, शिशुपाल आदि अनेक दैत्योंने शिर कटवाये, इससे भी करोडगुनी सुखरूपी शोभा श्रीहरि में समविष्ठ है । इस शोभा का जिसको अनुभव हो वे दुसरी शोभा को विष्टा समान समझते है ।

जब तक श्री हरि और संत, हरिभक्तों अनुभव के बिना मनुष्य जैसे मानते हैं तब तब सत्संग कच्चा है, ऐसी बात करते फरेणीपुर में आए । बाजार में खडे आदमींओंने और औरतोनें फूलहार से पूजा करके दर्शन किए और बधाएँ । श्री हरि को देखकर सब आनंदित हुए और घर के काम भूल गए । श्रीहरिने उसे अलौकिक दर्शन दिए । रामानंद स्वामी के साथ यहाँ आते रहते थे । इसलिए गाम के सब नर-नारियों को नाम से पहचानते थे । सब कहते हैं कि बचपन की प्रीत आपने छोड दीं । हम तो रात-दिन आपका स्मरण करते हैं । और यहाँ इसलिए आकर संत से आपका खबर पूछते हैं । तब श्रीहरि ने कहाँ हमे तो आपकी उपर ऐसा ही भाव है, किन्तु देश-देश में हरिभक्तों हुए है वे जगह जगह खींच जाते है । एक-एक रात ठहर ते फिरभी कोई सीमा नही होतीं । तब पुरवासी ने कहाँ आप सत्य कहते हो । हरिभक्तों के लिए ही आप प्रगट हुए हो । मोक्ष का काम आपकें बिना दूसरा कोई देव मनुष्य से नही बन सकता । जो भी कई आश्चर्य दिखते हैं वे सब आपमें हैं । दूरसो में जो कोई सामर्थ्य मानते तो वे आपके स्वरूप का निश्चय नही, ऐसी हमारी सोच है । वे आप कहो या संत कहे फिर बदले नहिं, हमारी आहिरजात मूढ में मूढ कहलाती हैं आंखे देखे बगेर कभी मानतें नहीं, आपकी मूर्ति में और दूसरे अवतारमें सूर्य और मशाल जैसा तफावत है । होली जैसे अग्नि हो किन्तु सूर्य को न पहोंचे । गिरनार जितना हो तो भी सूर्य में लीन

हो जाय । सूर्य के बिना तारे होते तो चंद्र बडा माना जा सकता है परंतु सूर्य उदय होत लीन हो जाते है । चंद्र, तारे ये अग्नि में प्रकाश है, वे सूर्य के है, ऐसी हमारी बुद्धि के अनुसार हम प्रताप कहते है, श्रीहरि कह रहे हैं कि कस्तुरी की सुगन्ध छीपी नहीं जाती ऐसे जिसका जितना प्रताप हो छिपाया नही रह शकता । ऐसी बात करते करते दो घडी रात बाकी रही तब श्रीहरि अपनी जगह पर आएँ ।

चैत्र शुद छठवी के दिन श्रीहरि फरेणीपुर में आए और १८६३ की रामनवमी का उत्सव किया । आस-पास के सभी सत्संग सत्संगीओं श्रीहरि का जन्मोत्सव मानकर दर्शन करने आए । संत की जगह के पास श्री हरि बैठकर सभी हरिभक्तों का नाम पूछकर वर्ण के अनुसार आश्रय देते हैं । संत की जगह पर भव्य मंडप बाँधा गया । जो संत वही पर आते उन सब को श्रीहरि बडे भाव से मिलते हें और प्रेम से आदर-सत्कार करके प्रसादी का हार और योग्य चिज देते हैं । अपने शरीर से भी संतो को अधिक मानते थे ।

संतों श्रीहरि को प्रसन्न करते और उनकी इच्छा के अनुसार वर्तन और उनकी प्रसन्नता को ही श्रेष्ठ फल मानते थे । छल को छोडकर एक दूसरे की अमान्या रखकर प्रीति रखते थे । अपने मुँह से अपना बखान नही करते ओर दुसरे कोई अपना बखान करते ध्यान में नहीं लेते थे । कोई अपना अपमान कर दे तो भी सामनेवाले के अपमान करने को मनमें भी नहीं सोचते थे । पिंड ब्रह्मांड से अलग वर्तन करके ब्रह्मविधा में लीन रहते थे । लोगों को दिखाने के लिए जो ज्ञान पातें हैं उनका अज्ञान मिटता नहीं । ऐसा मानकर निर्दंभ रहते थे । श्रीहरिने आवश्यक निष्कामादिक गुणों की प्रस्थापना उनके भीतर की थी । जो देवों को भी दुर्लभ है वैसे गुणों को पाकर मायिक तृष्णा रहती नहीं । माया का स्पर्श न हो सके ऐसी तत्परता रखने की बात श्रीहरि प्रतिदिन कहा करते थे । जीव में बीझरूप रही

हुई मायिक सुख की कामना को भी मिटा दी गई थी क्योंकि बीझ के नाश के बिना विषय सुख कामना मिटती नहीं । काम क्रोधादिक अधर्म वंश के गुण वे विषय के बीझ है । उनके नाश हो जाने बाद फिर स्पर्श नहीं कर सकते । प्रगट हरिका संबंध तो गुणातीत है और भक्तों भी गुणातीत होते हैं । असंख्य भक्तजनों रथ-घोडे पर बैठकर दर्शन करने आए इससे पुरमें बडी भीड जमा हो गई । पुरमें समावेश न होने के फलस्वरूप पुर-बाहर व्यवस्था की गई । भव्य मंडप बाँधा गया । रामदासजी स्वामी हस्तकला में प्रवीण थे । देश के बढई भक्तोंने भव्य मंडप निर्माण किया ईससे लगा कि स्वयं विश्वकर्मा आकर अपनी कला का प्रदर्शन कर गये हैं । कनक, कलश, मोती के तोरण ध्वजा एवं बिछाना आदि से मंडप को सुसज्जित किया ।

मंडप की मध्य में झूले पर बैठे हुए श्रहरिने जो बात कही वे अब हम कर रहे हैं । श्रीहरि की जन्मतिथि होने के कारण सभी हरिभक्तोंने उपवास किया था और स्त्री-पुरूषों अलग-अलग बैठे थे ।

मतपंथ के नर-नारी एकत्रित होकर मोक्ष पद के पीछे व्यभिचारी हो जाते हैं । गुरूओं शिष्य को महिमा की बात कहते हैं । 'भक्तमाल' के उदाहरण से अपने आपको निर्दोष घोषित करतें हैं । सभी साधनों में भक्तमाल सुनना सर्वश्रेष्ठ है । भगवान भक्त के आधिन वर्तन करते हैं । भगवान के बांधे हुए जनों को भक्तों छुडाते है परंतु भक्त के बांधे हुए भगवान को छुडाना असमर्थ है । ऐसा कहकर दुर्वासामुनि ने अंबरीष का द्रोह कीया था और जो दुःख को भुगतना पडा ये प्रसंग वैकुंठनाथ ने कहे हुए शब्दो नवम् स्कंध में है, इसका उदाहरण देते हैं । जय-विजय के प्रति वैकुंठनाथ ने कहा था कि मैं भक्ताधिन हूँ इससे मेरे धाममें अनहद सुख होने के बावजूद भक्त को दुःख हो तो मैं नृसिंहादि अवतार धारण करता हूँ । दोष को मिटाने के लिए श्रीहरि ने नियम दिए है । इसी नियम

प्रणाली पर चलने का आदेश दिया है । संतो भी गाँवो में जाकर सभी को अपने धर्म अलग-अलग समझाते हैं । जिसके स्त्री और पुरूषों नियम में दृढ रहकर भजन भक्ति कर सकें । स्त्री-पुरूषो नियममे दृढ रहते थे । हरि की जनमतिथि के कारण हरिभक्तों पूजा करने आए । केसर-चंदनादिक सामग्री से पूजन किया, पुष्पहार अर्पण किया । मंडप की अंदर बहुत भीड एकत्रित हो गई । श्रीहरिने जब रामचंद्र का रूप धारण किया था तब दोपहर काल में जन्म लिया था वह उत्सव पहले किया और रात के दस बजे श्रीहरि का जन्मोत्सव हुआ ।

देवताओं ने भी प्रसंगानुसार आसमान में से केसर चंदन पुष्पादि एवं पंचामृत बनाकर स्नान करवाया । सामवेद का उच्चारण किया । सोंठ, घनिया अजवायन, जीरा, पोश्ता, नारियल, सूवाँ, चिनी, घी आदि डालकर पंचाजीरी बनाकर श्रीहरि को नैवेध दिया गया । श्री हरि ने इस प्रसादी संत, वर्णी एवं भक्तों को देने के लिए कहा । श्रीहरिने कहा कि इस पूर्णिमा का उत्सव गिरनार में करना है । ये सुनकर सबको अधिक आनंद हुआ । मयाराम विप्र ने सभी को पंचाजीरी का प्रसाद दिया । पूरे पुर में प्रसाद को बाँटा गया । सभीने संपत्ति के प्रमाण में सेवा की । धर्म, भक्ति, ज्ञान, वैराग्यको बढावा मिले इसलिए सभी को सचेत करते थे । जब तक शुभ गुण न आए तब तक दुर्गुण का लोप नही होता । अपने कोई त्यागी, गृही, आश्रित में लेश मात्र भी दोष दिखाई दे तो श्रहरि तुरन्त ही सचेत कर देते थे ।

हरि के वचन दर्पण की तरह है । जिसको विवेकरूपी नैत्र है उसको अपना दोष दिखाई देते हैं । जिसके नेत्र नष्ट हो चूके हो उन्हें दर्पण या सूर्य के प्रकाश कुछ भी नहीं कर सकते । विवेक के बिना जीवन को जीवन नहीं कहा जा सकता । बिना विवेकी जन, श्वपच या विप्र दोनों समान है । सभी स्त्रीओं एक जैसी है,

पाप पुण्य किसने देखा है ? पाषाण मूर्ति मे कया फर्क है ? ऐसा कहकर लोगों को भ्रमित करते हैं । तीर्थ व्रतो का खंडन करते है और पाप करने में डरते नहीं उसका तो जीव ही नष्ट हो जाता हैं । जिस मनुष्य का देह पापी होता है उनमें भी भगवान का ज्ञान प्रगट होता है । ये परमात्मा का अनंत प्रताप है । जल के बिंदु से मनुष्य तथा पशु-पक्षी पैदा होतें हैं । बीज में कोई आकार नहीं होता फिर भी वृक्ष, बेली, घास, फल, फूल आदि पैदा होते है । इत्यादि अनंत प्रकार के आश्चर्य भगवान के प्रताप से होता है । काष्ठ में अग्नि है परन्तु दिखाई नही देते उसी प्रकार श्रीहरि दिखाई नही देते परंतु सर्व जीवमात्र के आधार है । सामान्य और विशेष ऐसे दो श्रीहरि के स्वरूप है और दोनों परम अनुपम है । भगवान जब अवतार धारण करते हैं एवं चरित्र करते हैं इनको प्रत्यक्ष कहा गया है । पहले अवतार का जो प्रताप इसमे अपनी मूर्ति दिखा कर इससे उपर अपना प्रताप स्थापित करते हैं । जिस समय जैसा कार्य वैसा अवतार धारण करते हैं । परंतु एकांतिक भक्त तो अपने को जो अवतार प्राप्त हुआ हे उनको सर्वोपरि मानते हैं ।

श्रीहरि को सर्वोपरि स्विकारने के बाद भी जो देहाभिमानी हो तो ये ज्ञान कथन मात्र है । बात बडे निश्चय की करे इससे लोग उसके प्रति स्नेह रखे इतना ही फल मिलता है । परंतु बुद्धिमान मनुष्यों इन्हें स्विकारते नहीं । सर्वोपरि भगवान को मानने वाले एवं सच्चा ज्ञानवाला अपने शरीर को तृण समान मानकर,राग, द्वेष, इर्ष्यासे अलग रहकर भगवान के चरण के ही अनुरागी होते हैं । कोई अपमान करें तो भी दुःख न हो । तन और ब्रह्मांड से अलग वर्तन करके मायिकजन जो व्यवहार करते हैं उसको बच्चो का खेल के समान समझते हैं । दुःख के समय भगवान का भजन होगा एसा गुण ग्रहण करके प्रसन्न होते हैं उनको ब्रह्मांड के सुख की मात्रा जैसे जैसे

बडी वैसे वैसे अधिक विषरूप समझते है । उच्च प्रकार के विषयों की विशेष भावना रहे ऐसी जानकारी हो उसे सही निश्चय कहा गया है । उसको कभी भी दुःख स्पर्श नही करता । भगवान के वचन, मूर्ति, चरित्र तथा प्रसादी के वस्त्र, आभुषण आदि बंधन से मुक्त करते हैं । ब्रह्मांड और देह में जो पंच तत्त्व समाविष्ठ है इसमें जीव जहाँ लग जाता है वहीं से मन कर्म वचन से शरण में आया हो तो भगवान बचाते हैं । जागरण करके सुबह सभी स्नान करने गये । रामानंद स्वामीने भद्रावती के तट पर जहा ही निवास किया था । सभी लोगोंने वहीं पर ही स्नान किया । जो सिद्ध हे उनके चरित्र किसी को समझ में नहीं आ सकते जो सिद्ध हो वही समज सकते है । रामानंद स्वामीने शरीर का त्याग किया ऐसा दिखाया और शरीर को अग्नि में प्रवेश कराया फिर भी जैसे थे वैसे ही जनोनें वैसा ही देखे । रामानंद स्वामी समर्थ सिद्ध थे । श्रीहरि स्वयं जानते थे परंतु पात्रता के बिना किसीको भी कहते नहीं थे । रामानंद स्वामी अल्प सिद्ध का स्वरूप लेकर जाते थे ऐसा दर्शन बन में एक-दो लोगो को हुआ इस बात को सुनकर सभी अति प्रसन्न हुए और अपने आप को धन्य मानने लगे । श्रीहरि स्नान करके वस्त्रालंकर धारण करके आनंद से हरिभक्तों के साथ उतारे पर पधारे । रसोई तैयार हुई और श्रीहरि रूचि के अनुसार दूध, चावल, मिसरी का भोजन किया । संतोने भावसे प्रभु को खाना खिलाया । अनेक भक्तों प्रभु के दर्शन करने के इंतेजार में खडे थे । श्रीहरि पीरस रहे थे वही मूर्ति का ध्यान करते । बहार-गाँव से आये हुए हरि-भक्तोंने साथ में मिलकर रसोई दी थी । सभी लोग भोजन करने के बाद श्री हरि झूले पर बैठे । पहोर दिन रहते श्रीहरि भक्तजनों के साथ तैयार होकर धोराजी के मार्ग चल निकले ।

३.७ दिनमणि शर्मा फरेणी में (सद्.श्री नित्यानंद स्वामी):

सद्. नित्यानंद स्वामी का जन्म वि.सं. १८३७ की महा सुदि वसंत पंचमी के दिन मध्यप्रदेश के गौड जिल्ले के लखनौ तहसिल के दंतिया गाँव के गर्भ श्रीमंत पवित्र ब्राह्मण परिवार के पिता विष्णुशर्मा और माता विरजादेवी के यहाँ हुआ था। उसका पहेले का नाम दिनमणि शर्मा था।

दिनमणि शर्मा को आठवे साल यज्ञोपवित दिया गया। तब गुरूजी का उपदेश सुना कि;''ब्राह्मणो को ब्रह्मचारी बनके काशी विधाभ्यास करके विद्वता लेनी चाहिए।'' इससे माता-पिता की आज्ञा लेकर विशेष विधाभ्यास काशीमें ही किया।

शास्त्राभ्यास और पूर्व के शुभ संस्कारो से उसके हृदय में सच्चे सद्गुरू और प्रभु प्राप्ती के लिए तीव्र झंखना जगी। इससे सच्चे सद्गुरू की खोज में तीर्थाटन करते करते सिद्धपुर होकर वडनगर-विसनगर आये। वहाँ उसने भगवान स्वामिनारायण के गुणगान सुने। यह तिर्थाटन करते करते द्वारका जाने के लिए सौराष्ट्र प्रदेश के फरेणी गाँव मे आये। फरेणी गाँव में स्वामिनारायण भगवान का सदाव्रत चल रहा था। उसमें सदाव्रत लेने जाते भगवान स्वामिनारायण के शिष्य प्रभुतानंदजी का दर्शन हुआ। प्रभुतानंद स्वामी के गुण, कीर्ति और सद्आचरण देखकर अत्यधिक प्रभावित हुअे। इससे कुछ दिन तक साथ रहे इसलिए समागम करने के लिए फरेणी ठहरे। साथ समागम करके मनमें निश्चय हुआ कि जो स्वामिनारायण का शिष्य प्रभुतानंद इतना महान हो तो उसका गुरू उससे भी अधिक महान होना चाहिए। प्रभुतानंद स्वामी के मुख से ज्ञान-वार्ता सुनकर दिनमणि शर्मा को भगवान स्वामिनारायण के दर्शन करने की इच्छा विशेष जागी। रास्ते में चलते अन्य लोगों से जानने को मिला कि;''स्वामिनारायण भगवान सिद्धपुर से ऊंझा

जानेवाले है । इससे वो संवत १८६२ में ऊंझा गये और माह मास में महानुभावानंद स्वामी के साथ एवं कई सारे मुमुक्षु भगवान स्वामिनारायण का दर्शन किया । ऐसे ही दर्शनमात्र से भावविभोर बनकर चरणारविंद में दंडवत् प्रणाम किया । और भगवान है ऐसा निश्चय किया । इस तरह उसके पार्षद रूपमें श्री हरि की सेवामें रखे । पार्षद दिनमणि शर्मा की उत्तम स्थिति को देखकर स्वामिनारायण भगवानने अपने साथ विचरण में रखा । संवत १८६३ में पीपलाणा गाँव के पास मेघपुर में भागवती दीक्षा देकर नित्यानंद मुनि नाम रखा । नित्यानंद मूनि सब संतोमें बहुत विद्वान थे और उसका नाम सुनकर अच्छेसे अच्छा विद्वान उसके साथ शास्त्रार्थ करने के लिए हिंमत नही करते थे ।

३.८ सद्. गुणातीतानंद स्वामी फरेणी में :

श्रीजी महाराजने इस पृथ्वी पर प्रगट होकर भागवत धर्म को स्थापित करने के लिए और शुद्व उपासना को फैलाने के लिए छे छे शिखरबद्ध मंदिरो को बनाया था । यह छे मंदिरों की सेवा-पूजा और धर्म प्रचार की व्यवस्था के लिए अलग अलग महंत नियुक्त किये थे । उसमे अ.मू.सद्. गुणातीतानंद स्वामी को संवत १८८३ की चैत्र सुदि पुनम के दिन जूनागढ मंदिर का महंतपद दिया गया । जूनागढ मंदिर के राधारमणदेव ताबामें आनेवाले गाँव और शहर का क्षेत्र निश्चित कर दिया । इस प्रदेशमें कई सारे गाँव के सत्संग पोषण का सेवा कार्य सद्. गुणातीतानंद स्वामीने संभाला था । उसमें पैसे इकठे करना, नये मंदिर की स्थापना करना, सत्संगीओ के सुःख दुःख में साथ देना आदि विशाल सेवाकार्य सद्. गुणातीतानंद स्वामी करते थे । श्रीजी प्रसादीभूत लोज, मांगरोल, पंचाला,, पीपलाणा, कालवाणी और फरेणी जैसे

छोटे छोटे गाँव में जाते और वहाँ के सत्संगी की निगरानी रखते थे । और सत्संगी के दुसरे गाँव में भी विचरण के द्वारा सत्संग का प्रचार करते थे । साथ साथ वरताल कार्तिकी पुनम और चैत्री पुनम के दो समैया भी करते थे । हजारो सत्संगीयों को इस समैया का दर्शन सेवा का मौका भी देते थे । ऐसी सत्संग की अधिक प्रवृत्ति होते हुए भी धर्म, नियम, ब्रह्मचर्य, आत्मानिष्ठा आदि गुणो का अणीशुद्ध पालन किया और दुसरों को करवाया । कथा वार्ता को शांत नही होने देते थे । इस कथावार्ता से पुरे सत्संग को ब्रह्मरूप कर दिया था । स्वामी की अणीशद्ध साधुता और श्रीजी महाराज के बडे प्रभाव से जूनागढ प्रदेश में सत्संग की अति वृद्धि होने लगी । जिससे सेवा कार्य को विशाल और व्यवस्थित करने के लिए चार सद्गुरूओं का मंडल बनाया । (१) सद्. व्रजानंद स्वामी (२) सद्. राधवानंद स्वामी (३) सद्. केवलानंद स्वामी (४) सद्. रामदास स्वामी इस तरह चार सदगुरूओं को पुरे जूनागढ प्रदेश के सत्संग रक्षण का सेवा कार्य करने के लिए कहाँ । यह चार सद्गुरू भी धर्म, ज्ञान, वैराग्यभ भक्ति के माध्यम से कथा के जरिए नये सत्संगी को जोडना, नये मंदिर की स्थापना करना, देवों के पैसे एवं अन्न एकठा करना विगेरे सेवाकार्य गुणातीतानंद स्वामी की आज्ञा से करने लगे । उसमे भी प्रसादी के गाँवो में विशेषकर मंदिर होने लगे ।

उसमें भायावदर, जेतपुर और फरेणी आदि गाँवो में सद्.बडे व्रजानंद स्वामीने ही सो प्रथम मंदिर बनवाये थे । व्रजानंद स्वामी उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जिल्ला (जनपद) के एक गाँव में रहते थे । वैराग्य से घर का त्याग करके कोई गुरू के पास से दीक्षा ली और ''मोहनदास'' नाम धारण कीया । यह मोहनदास नीलकंठवर्णी को वनविचरण के दौरान मिले । और तिर्थाटन के दौरान कुछ महिने तक मोहनदास नीलकंठ वर्णी के साथ रहे थे । लेकीन नीलकंठवर्णी कुछ

वक्त अेकतीर्थ में रहकर दुसरे तीर्थ की यात्रा पे अचानक चल निकले । नीलकंठवर्णी और मोहनदास कईबार यात्रा करते-करते जुदा हो जाते थे । लेकीन फिरसे कही तीर्थमें मिल ही जाते थे ।

नीलकंठवर्णी यात्रा करते करते सौराष्ट्र में आये । लोज गाँव में रामानंद स्वामी के आश्रममें नीलकंठवर्णी स्थिर हो के रहे । साधु मोहनदास भी यात्रा करते-करते सौराष्ट्रमें आये । सोमनाथ के दर्शन करके द्वारका जानेकी उसकी इच्छा थी । द्वारका जाते वक्त रास्ते में उसने सुना कि; मांगरोळ के पास लोज गाँव में एक तपस्वी आये है । और वो भी नीलकंठवर्णी के नामसे जाने जाते हैं । और वहाँ रामानंद स्वामी के आश्रममें उसके संतो के साथ रहते है । मोहनदास घुमते घुमते मांगरोळ आये वहाँ उसको रामानंद स्वामी का दर्शन हुआ । और केवल दर्शन सेही शांति हो गई नीलकंठवर्णी भी रामानंद स्वामी के साथ थे । शांति होने से ओ भी वहाँ कुछ दिन ठहरे । फिर रामानंद स्वामी की आज्ञा से द्वारका की यात्रा पर गये । और कहाँ कि; ''मैं यात्रा करके आपके आश्रममें आउँगा और आपकी सेवामें रहुँगा । तब रामानंद स्वामीने कहाँ कि;'' ठिक है तुम यात्रा करके आओ यह आश्रम तुम्हारा है । ऐसा मानकर जरूर आना ।''

मोहनदास द्वारका की यात्रा करके फिरसे लोज आये लेकीन तब रामानंद स्वामी अंतर्धान हो गये थे । इसलिए वो नीलकंठवर्णी को कहने लगे कि;'' बहुत दुःख की बात है । कि मुझे स्वामीजी का फिरसे दर्शन नही हुआ ।'' तब श्रीजी महाराजने कहाँ कि;'' आप यहाँ इस संतो के साथ रहो । और स्वामीजी का भजन करो । आपको स्वामीजी के दर्शन होंगे । श्रीजी महाराजने वर्णी के वेशमें मोहनदासजी को कोई ऐश्वर्य नही दिखाया था । इसलिए वो श्रीजी महाराज को एक साधु मानते थे । और रामानंद स्वामी को भगवान मानने लगे थे

। इसलिए रामानंद स्वामीका भजन करने लगे कुछ ही दिनों में रामानंद स्वामीने दिव्य दर्शन देकर मोहनदास को कहाँ कि ; अप तिर्थो में जिसके साथ घुमते थे वो ही नीलकंठवर्णी खुद ही भगवान है । हम उसके दास है । और उनका भजन करते है । आपभी आजसे ही स्वामीनरायण प्रभु का भजन करना । '' ऐसा चमत्कार देखकर मोहनदास शरणागत बन गये । इससे श्रीजी महाराजने उसको साधु दीक्षा देकर 'व्रजानंद स्वामी' ऐसा नाम रखा ।

जूनागढ में गुणातीतानंद स्वामी के साथ २५ नंद संत रहते थे । उसमे से बडे व्रजानंद स्वामी सबसे वृद्ध और सबसे पुराने संत थे । वह रामानंद स्वामी के समय में हि सत्संग मे आये थे । ऐसे साधुता की मूर्ति जैसे सद्. रामानंद स्वामी और श्रीजीमहाराज के कृपा पात्र थे । बडे व्रजानंद स्वामी का जीवन सत्संग की सेवा करना ही था । ईसमें भी गुणातीतानंद स्वामी की आज्ञा होने से जूनागढ प्रदेश में आये हुए फरेणी गाँव में रामानंद स्वामी और श्रीजि महाराज के प्रसादीका स्थान जानकर सबसे पहले मिट्टी का मंदिर बनाया । उस पर देशी खपरेल रखकर मंदिर को तैयार किया । वहाँ रहने वाले सत्संगी वेलाभाई एवं रामभाई सोनी, हरिदास वैरागी तथा करशनभाई बढई आदि सत्संगीओने तन, मन, और धन से सेवा करके स्वामीजी को प्रसन्न किया । मंदिर तैयार होते ही सद्. गुणातीतानंद स्वामी को फरेणी आने का आमंत्रण देकर सत्संगीयो को बुलाया । दिवार की अलमारी में मुर्ति को पधराया । गुणातीतानंद स्वामीजीने यहाँ के सत्संगीयोंको आनंदित किया और गुणातीतानंद स्वामीने भी सुखी होने का आशीर्वाद दिया और कहां कि;''आपको तो यहाँ घर बैठे अडसठ तीर्थ आ गये हे कयुं कि रामानंद स्वामी के स्थापित किये हनुमानजी है और रामानंद स्वामी इस स्थळ पर अंतर्धान हुए और विशेष में श्रीजी महाराजने खुद ही स्वामिनारायण महामंत्र का यहाँ

पर उद्घोष किया । ऐसा अक्षरधाम के समान यह स्थळ उसमें रेहने को मिला । यहाँ आपका बडा भाग्य है । मंदिर पर दर्शन करने आना, धुन-कीर्तन करना, इस मंदिर में श्रीजी महाराज है वही आपकी रक्षा करेंगे । यह हनुमानजी महाराज आपके दुःख को दुर करेंगे ''। ऐसे आशिर्वाद देकर स्वामीजीने सब भक्तों को अधिक शांति दी ।

इस तरह बडे व्रजानंद स्वामीने सद्. गुणातीतानंद स्वामी की आज्ञा से इस फरेणी गाँव में मंदिर बनवा कर सत्संग का रक्षण और पोषण किया । और शसक्त थे तब तक दूसरे गाँवो की तरह व्रजानंद स्वामी यहाँ पर बारी बारी आते रहेते थे ।

३.९ सद्. श्री बालमुकुंददासजी स्वामी :

काफी वक्त के बाद गुणातीतानंद स्वामी और पहेले के चार सद्गुरूओं के मंडळ के जरिए सत्संग अधिक बढा । नये मंदिर भी बहुत हुए । जूनागढ प्रदेशमें सत्संगीयों के गाँवो की संख्या भी बढी जीससे सत्संग की सेवा और प्रचार प्रसार के लिए सद्. गुणातीतानंद स्वामीने दस मंडल की व्यवस्था कि । उसमें अपना मुख्य शिष्य सद्. बालमुकुंददास स्वामीका भी एक मंडल स्थापा गया । और स्वामीजी की आज्ञा से सद्. बालमुकुंददासजी स्वामीने भी सत्संग विचरण का सेवाकार्य शुरू किया । सद्. गुणातीतानंद स्वामीजी की तरह सद्. बालमुकुंददास स्वामी भी सत्संग विचरण द्वारा कथा-वार्ता से सत्संगीयो को शांति देते थे । और नये सत्संगीओं और नये मंदिरोंको बनाकर श्रीजी महाराज को प्रसन्न करते थे । स्वामीजी के पाससे मिले हुए श्रीजी प्रसादीभूत गाँवो में मंदिर करना और सत्संग कराना ऐसी रूची सद्. बालमुकुंददासजी स्वामी की थी ।

सद्. स्वामी बालमुकुंददासजी और प्रसादी के गाँवो की तरह फरेणी में भी स्वामीजी की आज्ञा से बार बार आते थे । यहाँ

के सत्संगीयों को कथा-वार्ता और आशिर्वाद से शांति देते थे । सद्. गुणातीतानंद स्वामी के सेवा समागम और आशिर्वाद से यहाँ का सत्संग सक्षम बना । पुराना मंदिर विशेष जिर्ण होने से सद्. बालमुकुंददास स्वामीने इस मंदिर का जीर्णोद्धार किया । और सद्. रामानंद स्वामी के स्थापित कीए हुए हनुमानजी के बैठक पर शिखर बनाया । और रामानंद स्वामी के स्थापित किये हुअे हनुमानजी के पास हनुमानजी की दुसरी एक मूर्ति सद्. बालमुकुंददास स्वामि ने स्थापित की । यह प्रसंग भी वहाँ के रहने वाले हरि भक्तोने एवम् स्वामीजी की आज्ञा से धोराजी, गुंदाला, नई-पुरानी सांकली, आदि गाँवो में भक्तोंने अत्याधिक सेवा करके स्वामीजी को प्रसन्न किया ।

३.१० सद्.श्री कृष्णचरणदासजी स्वामी की कृपा :

सद्. श्री कृष्णचरणदासजी स्वामी सद्. गुणातीतानंद स्वामी के शिष्य सद्. माधवाचरणदासजी स्वामी के शिष्य थे । उसका जन्म अमरेली जनपद के नानी कुंकावाव में सद्. योगीवर्य गोपालानंद स्वामी के आशिर्वाद से हुआ था । वो भी सद्. बालमुकुंदस्वामी की आज्ञा से सत्संग का सेवा कार्य करते थे । स्वामी स्वभाव से दयालु थे । जीस गाँव में जाते वहाँ सत्संगीओं को माँ का प्यार देकर आनंदित करते थे इस तरह सद्. कृष्णचरणदासजी स्वामीजी भी फरेणी गाँव आते थे । सद्. बालमकुंददासजी स्वामी की आज्ञा से यहाँ के मंदिर का जीर्णोद्धार करने का संकल्प किया । यहाँ के सत्संगीयों के कथा-वार्ता से आनंदित करते थे । आसपास के गाँवों में भी और फरेणी की महिमा कहकर वहाँ के सत्संगीयों के पास सेवा करवाते थे । इस तरह वहाँ रहने वाले और दूसरे गाँव के हरिभक्तों की

तन, मन, धन की सहाय से सद्. कृष्णचरणदासजी स्वामीने इस मंदिर का जीर्णोद्धार किया । विदेशी खपरेल रखकर नया मंदिर का निर्माण किया इस प्रसंग पे धोराजी, उपलेटा, नयी सांकली, पुरानी सांकली, चोकी, वडाल, गुंदाला, मंडलीकपुर, जेतपुर आदि गाँवों के भक्तोंने उत्साहित होकर सामग्री एवं बेलगाडी को लाकर इस अलौकिक सेवामें सामिल हुए । इस भक्तों की ऐसी निस्वार्थ सेवा से आनंदित होकर कृष्णचरणदासजी स्वामी को उपलेटा के खवास कालुभाईने कहाँ कि; स्वामी ! अब जेठ माह आया है इसलिए बारीस कब होगी ? तो यहाँ पर मैं अपना बेल गाडी लेकर आपकी सेवामें आया हूँ । इसलिए खेत का काम अभी कितना बाकी है । और बारिस का आना भी हो गया है । आप हमे घर जाने की आज्ञा दिजीए तब स्वामीजीने कहाँ अभी तो बारीश आने की देर है इसलिए घास को बोना तब कालुभाईने कहा ''अभी घास को बोयेंगे तो वो होगा कब?'' तब स्वामीजीने कहाँ ''खाने जैसा हो जायेगा और आप अच्छी तरह से हल चलाकर बारिस को कहोंगे कि अब आओ तब बारिस आयेगी''। फिर कालुभाई उपलेटा गये । और बात कही कि; '' स्वामी कहते थे कि बारिस बहुत देरसे होगी इसलिए घास को बो देना वो बात सुनकर कुछ लोगोंने घास को बोया । वह खाने जैसा हुआ उसके बाद स्वामीजीने कहाँ था उस तरह अषाढ जाने के बाद बहुत देर के बाद बारिस हुई ।

इस प्रसंग पर वेरावल के रहनेवाले प.भ.श्री जादवजीभाई नागजीभाई घी वाला ने भी आर्थिक सेवामें सहभागी बनकर स्वामीजीको प्रसन्न किये थे ।

जेतपुर के सद्. श्री निर्गुणदासजी स्वामी एवं सद्. कोठारी स्वामी श्रीहरिकृष्णदासजी स्वामी की भी इस गाँव पर दृष्टि थी उसने

भी प्रसंगोपात इस मंदिर में जीर्णोद्धार कार्य किया है और यहाँ के हरिभक्तों को आशिर्वाद भी दिया है ।

पुजारी वीरजी बापा

इस फरेणी गाँव के मंदिर की पूजा और आरती का सेवाकार्य वहाँ के रहनेवाले सत्संगी करते थे । उसमें मुख्यतया सेवा करनेवाले आंबलिया वीरजीभाई कालाभाई प्रजापति थे । उसने इस मंदिर की सेवा ६०/७० साल तक की धुप-दीया, अगरबत्ति, नैवेधं, श्रीफळ, मिसरी आदि, तीर्थाटन पर आनेवाले भक्त दे जाते थे । एवं जेतपुर, धोराजी के आसपास के सत्संगी श्रद्धा के अनुकूल ले आते । लेकीन बहुत कुछ तो वहाँ के पुजारी वीरजीबापा और दूसरे स्थानिक भक्त नैवेधं की साकर आदि ठाकुरजी की सेवामें लाते । इस तरह इस मंदिर का व्यवहार और पूजा कार्य चलता था । लेकीन कोई त्यागी पार्षद या संत कायम यहाँ यह पर रहते नहीं थे ।

३.११ पार्षद पोपट भगत :

अब से इस मंदिर का युग बदला । पार्षद पोपट भगत त्यागी के रूप में इस मंदिर में रहे । अ.मू. सद्.गुणातीतानंद स्वामी के शिष्य सद्. बालमुकुंददास स्वामी थे । उसके शिष्य सद्. पुराणी स्वामी श्री गोपीनाथदासजी स्वामी और उसके शिष्य केशवप्रियदासजी स्वामी थे । और उनके शिष्य पार्षद पोपट भगत इस मंदिर की सेवा पूजा करने के लिए रहे । उसको भी इस मंदिर की सेवा और विकास का विचार आया । स्थानिक सत्संगीयों को बुलाया और पुराने मंदिर की मूर्तियों की जगह नयी एवं बडी मूर्ति और नया सिंहासन बनाना ऐसा विचार किया । सब सत्संगी सहमत हुए । गोखरवाला के बढई को साग का बडा सिंहासन करने के लिए

कहा । मूर्ति के लिए पोपट भगत धोराजी के सत्संगी को मिले उसने मूर्ति की आर्थिक सेवा का स्वीकार किया । मूर्ति और सिंहासन तैयार होते ही संवत - १९९९ की श्रावण वदी-जन्माष्टमी के दिन नये सिंहासन में मूर्ति को स्थापित कीया गया । देशकाल के अनुसार उत्सव हुआ । इस मूर्ति की आर्थिक सेवा के सहभागी धोराजी में रहने वाले जमनाबाई पुरूषोतमभाई बने । इस मूर्ति और सिंहासन के दर्शन अभि भी होते है ।

इस तरह इस मंदिर के विकास के लिए पार्षद पोपट भगत कइ साल तक यहाँ पर रहेा इस मंदिर की सेवामें रहने के बाद स्वामी केशवप्रियदासजी बहुत हर्षित हुअें और वडताल आचार्य महाराज के पास भागवती दीक्षा दिलाकर साधु हरिकृष्णदासजी नाम रखा । दीक्षा लेने के बाद भी सत्संग में नये मंदिर बनाकर बहुत सेवा की । वो कवि होने से साहित्यक्षेत्र में और संप्रदायमें भी उसकी अच्छी सेवा प्राप्त है । उसके शिष्य जामजोधपुर गुरूकुल के संस्थापक और संचालक सद्.शास्त्री भगवतचरणदासजी का भी फरेणी मंदिर में बहुत योगदान रहा है ।

३.१२ सद्. पुराणीश्री हरिवल्लभदासजी स्वामी :

अमरेली जनपद में हलियाद गाँव है । परापूर्व से श्रीजी महाराज और बडे संतो का कृपापात्र सत्संग बहुत अच्छा है । इस सत्संग में रफालिया परिवार मुख्य है । रफालिया परिवार का सत्संग श्रीजी महाराज जब थे तब का है । पुराणी स्वामी हरिवल्लभदास स्वामी का जन्म वि.सं.१९७० में इस रफालिया परिवार में हुआ था । उसके पिता का नाम कानजीभाई वशरामभाई रफालिया था । और माता का नाम गलालबहन था उसके बडे भाई का नाम वल्लभभाई और छोटेभाई का नाम केशवभाई था ।

माता-पिता अति धर्मनिष्ठ थे । उसके घर एक पुत्ररत्न का जन्म हुआ इस पुत्र का नाम लालजी था । बचपन से ही वो सद्गुणी थे । यह गाँव जूनागढ प्रदेश का मुख्य गाँव है । यहाँ पर जूनागढ के सब संतो नाम धर्मादा के लिए बरसो बरस आते है । तन, मन और धन से जूनागढ मंदिर की सेवा करने वाले इस गाँव के सत्संगी ज्यादा समर्थ संत के कृपापात्र भक्त हैं । जूनागढ से पुराणी माधवजीवनदासजी स्वामी हलियाद आये । धर्म, ज्ञान, वैराग्य, भक्ति एवं जगतमिथ्या की ओर उपदेश की बहुत बातें कई दिनो तक की । शाम एवं सवेरे सत्संग सभा होती थी । उसमे कानजीभाई का पुत्र लालजीभाई को स्वामीजी के उपदेश से वैराग्य उत्पन्न हुआ । इसलिए पुराणी स्वामी के साथ ही माता-पिता की आज्ञा लेकर लालजीभाई जुनागढ गये । पुराणी स्वामीने उसको पार्षद बनाकर अपने मंडल में रखा । सत्संग के नियम वर्तमान कुछ ही दिनों में सिख गये । पार्षद लालजी भगत की सत्संग में स्थिरता को देखकर पुराणी स्वामीने उसे साधु दीक्षा देने का विचार किया । उसके माता-पिता की आज्ञा लेकर प.पू.ध.धू.१००८ आचार्यश्री आनंदप्रसादजी महाराज के पाससे दीक्षा दीलवाइ । और लालजीभगत का नाम साधु हरिवल्लभदास रखा ।

साधु दीक्षा के बाद गुरू के साथ रहकर साधुता, सेवा आदि सदगुण ग्रहण कीये । संस्कृतका विधाभ्यास भी कीया । कथावार्ता करके सत्संग प्रसार प्रचारका सेवा कार्य गुरुके होते हुए शुरु कर दिया । कथा पारायणो के जरिए सत्संगवृद्वि का कार्य करने लगे । उसके गुरुकी सेवा समागम करके प्रसन्नता हांसील की । उसके गुरु सद्.पुराणी श्री माधवजीवनदासजी स्वामी वि. सं. १९९१ मे कारतक वदी ऐकादशी के दिन भजन स्मरण करते करते अक्षरनिवासी हुऐ । इस तरह जुनागढमे रहकर उसने अपना जीवन पुर्ण किया ।

अब सद्. पुराणी श्री हरिवल्लभदासजी स्वामीने कही हुईं परंपरा के साथ रहकर सत्संग सेवाकार्य शुरू रखा । सत्संग विचरण करना, देवोके लीए आया हुआ दान को इकठ्ठा करना आदि सेवाकार्य धर्म, नियम और साधुतामे रहकर करते थे । पुराणी स्वामी पहले सेही श्रीजी प्रसादी भुत स्थान की रूचि वाले थे । इसलीए जुनागढ मंदिर का धर्मादा लेने का कार्य एवं साधु भगवत् प्रकाशदास के साथ श्रीजी प्रसादीभुत वरजांगजालिया हरिमंदिर में रहे । और इस स्थान का विकास करने का विचार किया । कुछ समय वहाँ रहकर वहाँ के मंदिर का विकास किया । वहाँ के सत्संग का भी कथा-वार्ता से पोषण किया । सत्संग के विकास के लिए तीन-तीन बडी पारायणो का आयोजन किया । जिसमें कुछ नये सत्संगी भी हुए । तथा श्रीजी महाराजने दिया हुआ प्रसादी रतवा पारा की निगरानी की । यह पारा जो बांधे उसको रतवा दूर हो जाए । ऐसे श्रीजी महाराज के आशीर्वाद थे । पुराणी स्वामीने इस मोती का प्रचार अच्छी तरह से किया । यह मोती गुम न हो जाय इसलिए पुराणी स्वामीने ऐसी व्यवस्था की थी कि; जो भी मोती लेजाये वो सोना का आभूषण देकर ले जाए । जिस से मोती का अच्छा ख्याल रहे । । अभी भी इस प्रसादी का मोती पीडीतों का संकल्प पुरा करता है । इस तरह पुराणी स्वामीने श्रीजी प्रसादीभूत स्थान एवं चिजो का ख्याल रखने के आग्रही थे । इस तरह शायद २० साल तक पुराणी स्वामी इस मंदिर में रहे । उसमें संत हरिभक्तों के विशाळ समुदाय मे इकठे करके एक पारायण करने की इच्छा थी । इस पारायण के आयोजन के लिए पुराणी स्वामी वरजांग जालिया से जूनागढ आये । तब जूनागढ मंदिर के कोठारी सद्. भक्तितनयदासजी स्वामी का शिष्य सद्. धर्मस्वरूपदासजी स्वामी थे । उसके साथ बैठकर पुराणी स्वामीने पारायण का आयोजन किया । लेकीन कोई कारणसर पुराणी स्वामी को इलेकट्रीक का शोक लगा

। जिससे हाथ कंधे से उत्तर गया था और गंभीर इजा हुई । इसलिए पुराणी स्वामी को जूनागढ से बम्बई अस्पताल ले गये । उसके साथ रामसुखदासजी का शिष्य सद्. हरिचरणदास स्वामी भी गये । वहाँ बहुत दिनो तक रहकर ठिक हुए । फिर जूनागढ आये । इस तरह पुराणी स्वामीने अपने जीवन में बहुत दुःख सहकर भी सत्संग परायण जीवन बिताया है । शिष्य मंडल छोटा होते हुए भी दुसरे संतो की सहाय से कभी हार मानते नहीं । निस्पृहिता और निष्परिग्रहता उनके जीवन का ध्येय था । फिर तो पुराणी स्वामीने वरजांगजालिया जाने की इच्छा को टाल दिया ।

जूनागढ के इवनगर गाँव में नाथाभाई शामजीभाई मकवाणा रहते थे । वो पीपलाणावाले प.पू.सद्. जोगीस्वामी के बहुत ही विश्वासु सत्संगी थे । उसके और उसकी धर्मपत्नी लाधीबाई को फरेणी धाम के प्रति अधिक महिमा थी । वो पुराणी स्वामी के भी विश्वासु थे । उसको पुराणी स्वामी के प्रति स्नेह था । पार्षद पोपटभगत फरेणी का विकास करके कुछ ही साल में साधु दीक्षा लेकर सत्संग की अन्य कोई सेवाओं में जुड गये । इससे नाथाबापा मकवाणा को ऐसा हुआ कि इस फरेणी जैसे प्रसादी के गाँव में कोई कायम के लिए रहनेवाला संत हो तो अच्छा है । इसलिए स्थान का विकास होता रहे । नाथाबापा के विचार को पुरा करने के लिए श्रीजीमहाराजने जूनागढ जाने के लिए प्रेरणा प्रदान की । इस लिए नाथाबापा जूनागढ पुराणी स्वामी के पास गये और पुराणी स्वामी को फरेणी गाँव में कायम रहने की बात की । पुराणी स्वामीने भी नाथाबापा की बात का सहर्ष स्वीकार करके जूनागढ से फरेणी आने का तय किया । कुछ ही दिन बाद फरेणी आये और नित्य के लिए फरेणी में ही निवास किया । और उसके साथ साधु घनश्यामदासजी थे ।

अब पुराणी स्वामी फरेणी मंदिर के लिए सत्संग विचरण करने लगे । ओर जहाँ निमंत्रण हो वहाँ जाते थे । जो भी छोटी-बडी रकम आती थी वह फरेणी के लिए रखते थे । और सत्संगीयों को फरेणी दर्शन करने आने का नियम देते थे । नजदीक एवं दूर के सत्संगीयों को पता चला कि फरेणी में नित्य के लिए संत रहते है । इसलिए दर्शनार्थीओं और पुजा-एवं मिन्नत करनेवाले की संख्या में एक साथ बढती हुई । सौराष्ट्र के अलावा गुजरात के यात्रालु भी आने लगे । संत भी दर्शन के लिए आते थे । इससे मंदिर की आर्थिक स्थिति में वृद्धि हुई । शिष्य मंडल में भी बढावा हुआ । एक पार्षद के प.पु.ध.धू. आचार्य श्री नरेन्द्रप्रसादजी महाराजके पास दीक्षा दीलाकर साधु देवस्वरूपदास नाम रखा । इस प्रकार शिष्य मंडल में भी बढ ौती होने लगी ।

सद्. पुराणी हरिवल्लभदास स्वामी को जब नूतन मंदिर बनाने का विचार आया । इसलिए गाँव मे एवं दूसरे गाँव में सत्संगीयों को बुलाकर पुराणी स्वामी ने बात कि; हमे पुराने मंदिर को तोडकर छत भर के पक्का मंदिर बनाना है । सब सत्संगी सहमत हुए । और सद्. बालमुकुंददासजी स्वामी और सद्. कृष्णचरणदासजी स्वामी के द्वारा बनाया हुआ पुराने मंदिर को तोडकर एक भव्य मंदिर बनाया । इस मंदिर की सेवा कार्य में जुडे हुए हरिभक्तों के गाँव के नाम इस तरह है ।

धोराजी, जेतपुर, गुंदाला, मंडलीकपुर, नयी-पुरानी सांकली, छोटी-बडी परबडी, वडाल, चोकी, इवनगर, नवागाँव, उपलेटा, अगतराय, आदि गाँव के भक्तोने तन,मन और धन से सेवा करके स्वामी का आशिर्वाद पाया । इस तरह यह दिव्य मंदिर बनाकर पार्षद पोपट भगत के जरिए बनाया हुआ सिंहासन और बडी मूर्ति को स्थापित करने का निर्णय किया ।

गाँव के भक्त वैष्णव संप्रदाय में होते हुए भी कुछ भी धार्मिक कार्य में श्रध्धापूर्वक जुडकर सेवा करते थे । इस तरह इस सेवा में बैलगाडी और शारीरिक श्रम करके नये मंदिर में भी कई सारे भक्त ने सेवा की है ।

नये मंदिर के निर्माण कार्य में सेवा करनेवालो के नाम इस प्रकार है ।

- श्री स्वामिनारायण मंदिर - जेतपुर ह. कोठारी स्वामी
- श्री डायाभाई रवजीभाई मकवाणा - पुणे
- श्री महिपतराम शुक्ल - भावनगर
- नारायण राठोड - पूणे
- जशवंतभाई जोषी - भावनगर
- प्रभुदासभाई मसाला वाला-कल्याण (बम्बई)
- श्रीजी स्टील - राजकोट
- धरमशीभाई - मोरझर
- मणिबेन - शापुर
- वसुमतीबेन - महुआ

इसके अलावा पुराणी हरिवल्लभदास स्वामी की प्रेरणा से इस नये मंदिर के बरामदे में मोझेक टाइल्स की सेवा सं. २०२५ में हरिभक्तों की और से करने में आयी है । जिसके नाम इस प्रकार है ।

(१) मणिलाल त्रिकमभाई - बीलखा ह. पुराणी केशवप्रसाददासजी

(२) मोहन काला ह. पुजारी वीरजीभाई

(३) महिपतराम केशवलाल शुक्ल - भावनगर

(४) चंद्राबहन मनसुखलाल

(५) भाणजीभाई गोपाभाई - गुंदाला

(६) वल्लभ कानजी रफालिया - पुरानी हलियाद ह. भनुभाई एवं ननुभाई

३.१३ प.पू.सद्. जोगीस्वामी श्रीधर्मप्रसाददासजी स्वामी - पीपलाणावाले ।

अक्षरमूर्ति सद्गुरू गुणातीतानंद स्वामी के शिष्य सद्.श्री अक्षरस्वरूपदासजी स्वामी उनके शिष्य सद्गुरू ऋषिस्वामी श्री कृष्णस्वरूपदासजी स्वामी उसके शिष्य प.पू. सद्. जोगीस्वामी श्री धर्मप्रसाददासजी स्वामी यह समर्थ संतश्री जोगीस्वामी से की गई फरेणी मंदिर में सेवा को हम सब जाने ।

परापूर्व से समर्थ सद्गुरूओं की दृष्टि फरेणी की ओर रही है । क्युंकि रामानंद स्वामी के अंतर्धान होने का स्थान और 'स्वामिनारायण मंत्र' प्रागटय धाम होने का स्थान यह दो दो महत्व के प्रसंग जहाँ बने हो उस धाम की कितनी अद्भूतता होगी ! प्राचीनकाल से उद्धव संप्रदाय एक ही अलौकिक प्रसंग से 'स्वामिनारायण संप्रदाय' बन जाता है । वो सहजानंद स्वामी की अभूतपूर्व सर्वोपरिता गीनी जाय । रामानंद स्वामी को भगवान के रूपमें माननेवाले और उनकी पुजा करनेवाले मुक्तानंद स्वामी जैसे एवं पर्वतबापा जैसे स्थितिवाले भक्त जिसका निश्चय चट्टान की तरह था । यह निश्चय ''स्वामिनारायण'' ऐसे नाम से बदल जाए वो नामी की कितनी अलौकिकता होगी ! वो तो ''श्वेतरः सर्व नियंता'' का बिरूद सार्थक किया है । ऐसे दिव्य अक्षरधाम जैसे इस फरेणी मंदीर की सेवा करने के लिए पीपलाणावाले प.पू.सद्. जोगीस्वामी श्री धर्मप्रसाददासजी स्वामी ने भी यह स्थान की सेवा करके हम सबको सेवा करने के लिए अंगुली निर्देश किया है ।

जुनागढ पास के इवनगर गाँव में नाथाभाई शामजीभाई मकवाणा थे । उसको और उसकी धर्मपत्नी को फरेणी के प्रति अधिक महिमा था । बारबार नियमित दर्शन करने आते थे । दूसरे दुःखी, दरिद्र, अशांत, उद्वेगी ऐसे भक्त मनुष्य को भी फरेणी के दर्शन करके एवं मिनते, पुजापाठ, कराकर सुखी हो ऐसा मार्गदर्शन देते थे । इस नाथाबापा को पीपलाणावाले जोगीस्वामी पर अधिक भरोसा था । इसलिए जोगी स्वामी नाथाबापा को लेकर फरेणी आये । वह साल था संवत -२०२१ का नाथाभाई आदि सत्संगी पू. जोगीस्वामी के साथ फरेणी आये । तब पुराणी स्वामीश्री हरिवल्लभदासजी इस मंदिर के विकास और सेवा पुजा का कार्य अच्छी तरह से करते थे । जोगीस्वामीने पुराणी स्वामी को कहा कि; ''हमें रामानंद स्वामी के अंतिम संस्कार के स्थान पर वेदी करना है । एवं प्रसादी की भद्रावती बावली के पगथिये करने है । और यहाँ मंदिर में भी मंदिर के उपर के भाग में कमरे बनाकर संतहरिभक्तों के रहने की व्यवस्था करनी है ।'' पुराणी स्वामी और सभी हरिभक्त इस बात में सहमत थे । मंदिर के उपर के ओर तीन कमरे बनवाये । नाथा सामजी मकवाणा की पत्नी लाधीबाई के मोक्षार्थे मंदिर को रंग करवाया और मंदिर के आँगन में पानी के लिए डंकी (पानी खिंचने का पंप) लगवाया और बिजली के बल्ब और रामानंद स्वामी के अंतिम संस्कार के स्थान पर वेदी बनवाकर चरणाविंद पधराये । जहाँ अभी वेदी और छत्री नये बनाये है । इस तरह यात्रीकों आसानी से प्रसादी का पानी ले सके ओर स्नान कर शके ऐसे शुभ हेतु से भद्रावती बावली (वाव) में पगथिये कराए । (सीढी बनवाई)

ऐसे शुभ कार्य में फरेणी में रहनेवाले भक्तों ने भी शारीरिक सेवा का योगदान दिया था । आस-पास के गाँव के हरिभक्तोने भी बैलगाडी के साथ अच्छी सेवा की थी । इसलिए आर्थिक सेवा (योगदान) देनेवाले भक्त बहुत थे । जिसके नाम इस प्रकार है ।

(१) प.भ. श्री धरमशीभाई भोवानभाई टीलवा (महोबतपुर नवागाम)
(२) प.भ. श्री रवजीभाई नरशीभाई जाटकीया (महोबतपुर नवागाम)
(३) प.भ. श्री राधवभाई रवजीभाई मकवाणा (महोबतपुर नवागाम)
(४) प.भ. श्री खीमजीभाई लक्ष्मणभाई मकवाणा (महोबतपुर नवागाम)
(५) प.भ. श्री मनजीभाई पंचाणभाई नादपरा (महोबतपुर नवागाम)
(६) प.भ. श्री भाणजीभाई आंबाभाई कलोला (महोबतपुर नवागाम)
(७) प.भ. श्री नरशीभाई डायाभाई मारडीया (महोबतपुर नवागाम)
(८) प.भ. श्री देवशीभाई लालाभाई जाटकीया (महोबतपुर नवागाम)
(९) प.भ. श्री अमृतलाल बेचरभाई त्रांबडिया (वंथली , सोरठ)
(१०) प.भ. श्री नानजीभाई गोकलभाई त्रांबडिया (वंथली , सोरठ)
(११) प.भ. श्री नाथाभाई खीमाभाई रतनपरा (माणावदर)
(१२) प.भ. श्री मोहनभाई काळाभाई (फरेणी)
(१३) प.भ. श्री ओधवजीभाई मयाभाई चोटलिया (इवनगर)
(१४) प.भ. श्री मुळजीभाई भीमाभाई कलोला (इवनगर)
(१५) प.भ. श्री करशनभाई मावजीभाई घोडासरा (पानेली)
(१६) प.भ. श्री प्रेमजीभाई खीमजीभाई (इवनगर)
(१७) प.भ. श्री गोरधनभाई गोवाभाई मकवाणा (इवनगर)
(१८) प.भ. श्री थोभणभाई मावजीभाई घोडासरा (पानेली)
(१९) प.भ. श्री केशवभाई शामजीभाई (महोबतपुर, नवागाम)

इस सेवा कार्य का शिलालेख इवनगर के नाथा शामजी मकवाणाने कराया था । जो अभी भी फरेणी मंदिर की दिवार पे मौजुद है ।

३.१४ पुराणी स्वामी का पूर्ववत् योगदान :

अब इस मंदिर में सदा रहनेवाले पुराणी स्वामी की सेवा को विशेषतः देखते है । सद्. पुराणी श्री हरिवल्लभदासजी स्वामी को कई सदगुरूओं की छोटी-बडी सहाय और आशीर्वाद मिलते रहते है । पुराणी स्वामी अपनी गुरू परंपरा से प्राप्त हुई साधुता और नियम मे रहकर बडे धैर्य से इस स्थान का विकास करते रहे है । सद्. रामानंद स्वामीने हनुमानजी को चैत्र सुदि पुनम के दिन पधराये इसलिए पुराणी स्वामीने चैत्र सुदि पुनम का उत्सव शुरू किया । आसपास के और दूर-दूर से मन्नते रखनेवाले और पुजा करनेवाले दर्शनार्थी आते और दर्शन करते और उनकी इच्छाए पूर्ण हो जाती । पूनम के दिन हजारो दर्शनार्थी आते थे । फिर भी पुराणी स्वामी किसी भी प्रकार के आवरण से रूके नही । छोटे छोटे मंडलो ने बडे कार्य के माध्यम को संभाला । और स्वामिनारायण सम्प्रदाय के केन्द्र को अखंडित रखा । इस चैत्र सुदि पुनम के उत्सव में वार्षिक पाटोत्सव हनुमानजी की सेवा-पुजा के जरिए उत्सव मनाने में आता है । इस वार्षिक उत्सव द्वारा भी इस प्रसादी का धाम का बहुत प्रचार-प्रसार पुराणी स्वामी द्वारा हुआ है । उसके दोनों छोटे संत साधु देवस्वरूपदास और साधु पुरूषोतमचरणदास भी गुरूकी आज्ञा में रहकर आनेवाले यात्रालुओं और दर्शनार्थीओं की सेवा में से अभीतक विराम ही नही लेते । इस चैत्री पुनम के वार्षिक उत्सव फरेणी धाम के सत्य संकल्प का माध्यम बन गया है ।

दूसरा वार्षिक उत्सव श्रीजी महाराज की आज्ञा के अनुसार पुराणी स्वामीने आसो वदि चौदश के दिन कष्टभंजन हनुमानजी महाराज की सेवा पुजा और पक्का थाल अर्पित करने का शुभारंभ

किया । इस उत्सव के वक्त कृषक, वेपारीओं को कामकाज होने पर भी पुराणी स्वामी की आज्ञा से कई भक्त समय को ध्यान में रखते हुए सेवापुजा का हाथ बढाते थे । दर्शनार्थी दर्शन करके दर्शन का फल पाते है । पुराणी स्वामी के अथाग परिश्रम के कारण हजारों भक्त आते है । भोजन प्रसाद लेकर संतोष लेते है । पुरानी रूढि वाले इस संत दर्शनार्थी सत्संगी के पास से बहुत आग्रह करके कुछ लेते नही है । लेकीन कोई, दुःखी या दरिद्र हो तो उसको ऐसा कहते कि; ''फरेणी दर्शने के लिए आना । कष्टभंजन देव हनुमानजी आपकी इच्छाओं को पुरी करेंगे'' । इस तरह बहुत से मुमुक्षो के संकल्प इच्वाएँ पुरी होती थी । और फरेणी धाम में दर्शन करने को आते थे । इस तरह इस स्थान की महिमा कहकर सभी भक्त के हृदय में फरेणी के प्रति प्रेमभाव प्रकासित किया । पू. पुराणी स्वामीने और जामजोधपुर के श्री स्वामिनारायण गुरूकूल मे संस्थापक शास्त्री श्री भगवतचरणदासजी स्वामी श्री पुराणी स्वामी के पास फरेणी में बार बार आते थे और सेवामें सहायरूप होते थे । और मोरझर आदि गाँव के सत्संगी के पास इस स्थान के लिए आर्थिक सेवा कराकर पुराणी स्वामी को वो सहायरूप होते थे । इस तरह इस स्थान का विकास करके पुराणी स्वामीने अपना पुरा जीवन इस स्थान के लिए पुरा कर दिया । और आखिर मे उसके शिष्य साधु देवस्वरूपदासजी को इस मंदिर की सब जिम्मेदारी देकर संवत-२०४१ के फाल्गुन वदि आठम के दिन श्रीजी महाराज का भजन करते करते धाम में सिधारे ।

३.१५ कोठारी स्वामी देवस्वरूपदासजी :

सद्गुरू पुराणी श्री हरिवल्लभदासजी स्वामी अक्षरनिवासी होने के बाद कोठारी स्वामी देवस्वरूपदासजीने कोठारी पद पर रहकर मंदिर की सब जिम्मेदारी लेली । चैत्र सुदि पुनम और आसो

वदि चौदश एवं कारतक सुदि एकम का अन्नकूटोत्सव एवं उत्सव चालु रखा । और सत्संग की वृद्धि की, फिर अपने गुरू पुराणी स्वामी की स्मृति में श्रीमद् भागवत पुराण की कथा का भव्य आयोजन किया । जिसमें मुख्य मार्गदर्शक धोराजीवाले कोठारी स्वामी देवप्रसादस्वामीजी थे । कथा के वक्ता जामजोधपुरवाले शास्त्री स्वामी श्री चगवत्चरणदासजी और उनावाले शास्त्री श्री माधवदासजी स्वामी रहे ।

सप्तकुंडी यज्ञ के आचार्य पद पर दवे मुकुंदराय भानुशंकर धोराजी एवं पंडया नरभेराम मोरारीदास - फरेणी की नियुक्ति करने में आयी । यज्ञ के मुख्य यजमान (महेमान) धोराजीवाले वल्लभभाई वशरामभाई वघासिया थे ।

जूनागढ के कोठारी हरिकृष्णदासजी स्वामी, जेतपुर के स्वामी घनश्यामचरणदासजी, धोराजी के पुराणी स्वामी मोहनप्रसाददासजी, पोरबंदर से शास्त्री स्वामी श्री हरिकृष्णदासजी, खांभा से शास्त्री श्री राधारमणदासजी स्वामी आदि संत आये थे । और दर्शन एवं अमृतवचनों का अलभ्य लाभ दिया था ।

इस पारायण (कथा) का भव्य आयोजन फरेणी गाँव की गौशाला में करने में आया था । पुरा गाँव धर्मप्रेमी होने से गाँव में कोई भी धार्मिक प्रसंग हो तो उत्साहपूर्वक साथ मिलकर मनाने मे आता है । उसमें भी यह उत्सव तो स्वामिनारायण मंदिर का था । इसमें तो पुरे गाँव के आबाल वृद्ध तन ,मन और धन से जुडे थे । सात दिनों तक युग परीवर्तन हो गया । कथा के प्रभाव से और स्वामिनारायण भगवान के प्रबल प्रताप से बहुत सारे व्यसन मुक्त बने । बहुत से मुमुक्षुओंने स्वामिनारायण संप्रदायका स्वीकार किया । यज्ञ नारायण का प्रसाद लेकर सब पुण्यशाली बने । यह अलौकिक प्रसंग में सेवारत मार्गदर्शक और स्वयं सेवको के नाम इस तरह है ।

१ सरधारा भीखाभाई नारणभाई
२ सरधारा हंसराजभाई नारणभाई
३ माखणसा दामजीभाई धरमशीभाई
४ माखणसा हरसुखभाई कुरजीभाई
५ माखणसा रतिलाल धरमशीभाई
६ माखणसा जयन्तिभाई मोहनभाई
७ शिंगाळा रवजीभाई उकाभाई
८ शिंगाळा हिराभाई कल्याणभाई
९ शिंगाळा गांडुभाई नारणभाई
१० शिंगाळा जीवाभाई भगवानजीभाई
११ शिंगाळा लीलाधरभाई वालजीभाई
१२ शिंगाळा परषोतमभाई नारणभाई
१३ शिंगाळा रवजीभाई करशनभाई
१४ शिंगाळा विनुभाइ कल्याणभाई
१५ शिंगाळा जयन्तिभाई कल्याणभाई
१६ रूपापरा नाथाभाई वाघजीभाई
१७ रूपापरा रणछोडभाई नारणभाई
१८ रूपापरा मोहनभाई मावजीभाई
१९ रूपापरा जयन्तिभाई भगवानभाई
२० रूपापरा जमनभाई नाथाभाई
२१ वघासिया जेठाभाई विरजीभाई
२२ वघासिया परषोतमभाई विरजीभाई
२३ वघासिया बचुभाई चनाभाई
२४ वघासिया दामजीभाई जेरामभाई
२५ वघासिया भीखाभाई केशवभाई
२६ वघासिया रमेशभाई जेठाभाई
२७ वघासिया मनसुखभाई जेठाभाई
२८ विरडिया वल्लभभाई आणंदभाई
२९ विरडिया केशवभाई रवजीभाई
३० विरडिया चिमनभाई भीखाभाई
३१ विरडिया धीरजभाई देवराजभाई आंबाभाई
३२ विरडिया धीरजलाल देवराजभाई कानाभाई
३३ विरडिया नारणभाई रवजीभाई
३४ विरडिया दिनेशभाई वेलजीभाई
३५ विरडिया रामजीभाई देवराजभाई
३६ विरडिया मनसुखभाई गोविंदभाई
३७ विरडिया विनोदभाई नाथाभाई
३८ राबडिया जमनभाई नरशीभाई
३९ राबडिया भीखाभाई लवाभाई
४० राबडिया जेठाभाई रणछोडभाई
४१ राबडिया लालजीभाई गोरधनभाई
४२ वेगड चीमनलाल जीवराजभाई
४३ वेगड धीरजलाल माधाभाई
४४ आंबलिया विरजीभाइ काळाभाई
४५ आंबलिया रणछोडभाइ विरजीभाई
४६ कपुपरा प्रागजीभाई मेपाभाई
४७ कपुपरा जगदीशभाई भीमजीभाई
४८ शेखवा जिलुभाई विक्रमभाई
४९ शेखवा अनकभाइ नाजभाई
५० शेखवा बचुभाई गलाभाई
५१ पटोळिया परषोतमभाई रणछोडभाई
५२ बोरड विनुभाइ वेलजीभाई
५३ बांभरोलिया मगनभाइ मोहनभाई
५४ बांभरोलिया भूपतभाइ छगनभाई
५५ बांभरोलिया विनुभाई मोहनभाई
५६ वाछाणी जेन्तिभाइ नारणभाई
५७ वाछाणी विजयभाई गांडुभाई
५८ वाछाणी दुर्लभभाई छगनभाई
५९ वाछाणी रमेशभाई छगनभाई
६० टोटा सोमाभाई हीराभाई
६१ वेकरिया भीखाभाई मोहनभाई
६२ भेसाणिया बाबुभाई गोकळभाई
६३ भेसाणिया वल्लभभाई गोकळभाई
६४ अमिपरा नंदलालभाई नरशीभाई
६५ उंधाड परषोतमभाई घेलाभाई

परिशिष्ट - १

संस्था परिचय

श्री सहजानंद संस्कार धाम मंत्रपीठ फरेणी

स्वामिनारायण संप्रदाय में महामंत्रपीठ फरेणी की सुमधुर खुश्बु तो आज से दो सौ साल पहले थी ''स्वामिनारायण'' मंत्ररत्न के प्रादुर्भाव के दिन से ही वातावरण में फैल चूकी है, यह निर्विवाद सत्य है । किन्तु वर्तमान काल में इस पवित्र धरा के विकास का भविष्य अत्यंत उज्जवल दिखाई दे रहे है । इसका प्रमुख रहस्य ''श्री सहजानंद संस्कार धाम - महामंत्रपीठ'' की स्थापना और उसके विकासलक्षी कार्य है ।

किसी भी स्थान के विकास के पीछे प्रमुख प्रेरणा स्त्रोत - शुभचिंतक और मार्गदर्शक होते है । समग्र सत्संग समाज में पीपलाणावाले प.पू सद्. जोगीस्वामी श्रीधर्मप्रसाददासजी स्वामी, वचनामृत के प्रखर ज्ञानी और जो वचन सिद्ध समर्थ संत के रूप में प्रसिद्ध हुए है; उन्होनें भी इस पवित्र फरेणी में सत्संगीयों के द्वारा सेवा करवाकर इस स्थान के विकास हेतु अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है । इन्हीं के आध्यात्मिक वारिस एवं सत्संग में सुप्रसिद्ध, वचनामृत के मर्मज्ञ, श्रीजी महाराज की छोटी-बडी आज्ञा का पालन करवानेवाले और करवाने का आग्रही ऐसे प.पू.सद्. शास्त्रीश्री बालकृष्णदासजी स्वामी अपने युवा उत्साही शिष्य मंडल के साथ फरेणी के विकास के लिए एक विशिष्ट अभियान के साथ फरेणी की

फुलवारी में श्री सहजानंद संस्कार धाम-महामंत्रपीठ संस्था की नींव डालकर स्थिर हुए है ।

इस संस्था की प्रमुख प्रवृत्तियों में प्रत्येक गुजराती माह के प्रथम रविवार के दिन मासिक सत्संग सभाएँ होती है । जिसमें हजारों भक्त अपने मोक्ष हेतु अमूल्य पुण्य पाथेय बटोरने का लाभ ले रहे है । साथ-साथ सांप्रदायिक प्रत्येक उत्सव धामधूम से अत्यंत आनंद-उत्साह के साथ मनाये जाते हैं । वार्षिक ब्रह्मज्ञान व्याख्यान सभामें वचनामृत और सांप्रदायिक मान्य ग्रंथो पर विवेचनात्मक - ज्ञानात्मक ब्रह्मसभर चर्चा के द्वारा मोक्ष-पीपासु व्याख्यान शिबिर द्वारा ब्रह्म दशा तक पहुँचने का प्रयास करते हैं । अनेक भक्त ब्रह्मरस युक्त जलाशय में स्नान करके ब्रह्मदशा प्राप्त करते हैं ।

गुरूराज जोगी स्वामी तथा सद्. शास्त्री स्वामी के सत्संगी शिष्यों के निमंत्रण से प.पू.सद्. शास्त्री श्री बालकृष्णदासजी स्वामी का शिष्य मंडल के साथ अविरत सत्संग विचरण चलता ही रहता है । इसमें वे गुजरात के छोटे से छोटे गाँवो को लेकर बडे शहर एवं भव्य भारतवर्ष के अन्य राज्य तथा देश-विदेश में भी सत्संग विचरण, सत्संग प्रचार, प्रसार तथा पोषण के लिए सत्संगियों की तृषा को तृप्त कर रहे है ।

सत्संग समाज में रहते सत्संगियों के त्रिविध ताप के शमन हेतु भक्त चिंतामणि की पारायणो कर-करवा रहे है । बाल, युवा और महिला संगठनों के द्वारा धार्मिक, सामाजिक एवं अध्यात्मिक प्रवृत्तियाँ निरंतर चलती रहती है । सत्संगी तथा अन्य धार्मिक शांतिप्रिय गृहस्थों दंपत्ति के लिए शांतिदायी ''शांति निकेतन'' योजना भविष्य में साकार करने का आयोजन आगे बढ रहा है । सत्संग प्रचार, प्रसार, पोषण एवं संवर्धन को ध्यान में रखते हुए

सत्संग साहित्य प्रकाशन पुस्तकों और ''मंत्र प्रकाश'' सामयिक, श्राव्य (सी.डी.) दृश्य-श्राव्य (वी.सी.डी.) प्रकाशन वितरण के द्वारा आदि अनेक आयोजन चल ही रहे है । ऐसी अनेक योजनाएँ भविष्य में अधिक विकासित हो ऐसे ठोस कदम उठाये जा रहे है ।

ऐसे अनेक प्रयत्नों के माध्यम से सत्संग तथा समाज का सामाजिक बौधिक और आध्यात्मिक स्तर उपर उठाने के प्रयत्न अविरत चल रहे है तथा आगे भी चलते रहेंगे । अंत में समाज के युवा धन सम्पत्ति को भ्रष्ट करनेवाले पाश्चात्य विषय, व्यसन एवं फेशन की आँधी को रोकने के लिए तथा भारतीय संस्कृति की रक्षा के लिए एक विशिष्ट अभियान भी चल रहा है । इस युवा पीढि में से मुमुक्षों को योग्य मार्गदर्शन देकर ज्ञानोपदेश द्वारा मुक्त बनाने तथा मुक्त हुए को ज्ञान पिपासा परितृप्त करके ब्रह्मदशा तक पहुंचाने के लिए अखंड, अविरत प्रयत्नशील है, ''श्री सहजानंद संस्कार धाम-महामंत्रपीठ-फरेणी''

- कोठारी चतुर्भुजदास

परिशिष्ट - २

संदर्भ ग्रंथ

क्रम	ग्रंथ का नाम	लेखक-प्रकाशक
१	श्रीमत् सत्संगिजीवन	श्री शतानंद स्वामी
२	श्रीहरि लीलामृत	श्री विहारीलालजी महाराज
३	भक्तचिंतामणि	वैराग्यमूर्ति सद्. निष्कुलानंद स्वामी
४	श्री हरि चरित्रामृत सागर	सद्. आधारानंद स्वामी
५	श्री हरिलीला कल्पतरु	सद्. अचिंत्यानंद ब्रह्मचारी
६	सोरठी संतो	लेखक-प्रकाशक : प्रभु शास्त्री - जूनागढ
७	ब्रह्मनिष्ठ संतो	सद्. शास्त्री धर्मवल्लभदासजी स्वामी
८	सद्. स्वामी श्री बालमुकुंददास स्वामी	प्रकाशक'श्रीस्वामिनारायण मंदिर - जेतपुर
९	स्वामिनारायण संहिता	लेखक-पुराणी देवचरणदासजी
		प्रकाशक -- पार्षद चंदुभगत
		गुरू सद्. स्वामी बालकृष्णदासजी-मूली
१०	श्री रामानंद स्मृति	शास्त्री हरिप्रसाददासजी - नासिक
११	श्री हरिचरित्र चिंतामणि	सद्.स्वामी श्री रूगनाथचरणदासजी - जूनागढ
१२	श्री स्वामिनारायण महामंत्र का अर्थ एवं महिमा	लेखक- शास्त्री निर्मलदासजी स्वामी
		प्रकाशक - श्री स्वामिनारायण गुरूकूल - राजकोट.
१३	श्रीहरिकृष्ण चरित्रामृत सागर	स्वामी माधवदास
१४	निमित्त मात्र	पंडया इश्वरदास लाभशंकरभाई
१५	जूनागढ के जोगी सद्.श्री महापुरूषदासजी स्वामी	संपादक - राजकवि मावदानजी भीमजीभाई रत्नु
१६	सद्. कृष्णचरणदासजी स्वामी का जीवन चरित्र	लेखक - पुराणी गोविंदप्रसाददासजी स्वामी
१७	सर्वोपरी उपासना	लेखक - पू. धर्मप्रकाशदासजी स्वामी

परिशिष्ट - ३

समग्र संप्रदाय के लिए फरेणी के सुवर्ण अवसर

क्रम	संवत्	माह	तिथि	वार	दिनांक	प्रसंग
१						सद्. रामानंद स्वामीने कष्टभंजन देव की स्थापना की ।
२	१८५९	मागशर	सुद-१३	गुरूवार	१३.१२.१८०१	सद्. रामानंद स्वामी की तिरोधान लिला
३	१८५९	मागसर	वद-११	गुरूवार	३१.१२.१८०१	प्रथम धर्मसभा ।
४	१८५९	मागसर	वद-११	गुरूवार	३१.१२.१८०१	स्वामिनारायण महामंत्र प्रागट्य दिन
५	१८५९	मागसर	वद-११	गुरूवार	३१.१२.१८०१	प्रथम समाधि करवायी ।
६	१८५९	मागसर	वद-११	गुरूवार	३१.१२.१८०१	सन्यासी शीतलदास को प्रथम भागवती दीक्षा
						स्वामी व्यापकानंद ।
७	१८५९	मागसर	वद-११	गुरूवार	३१.१२.१८०१	उद्धव संप्रदाय को स्वामिनारायण संप्रदाय के
						रूपमें उद्घोषित किया गया ।
८						अ.मू.सद्. गुणातीतानंद स्वामीने व्रजानंद स्वामी
						के पास प्रथम हरिमंदिर बनवाया ।
९						सद्. बालमुकुंददासजी स्वामीने दूसरे हनुमानजी
						की स्थापना की ।
१०	२०६०	मागसर	वद-१३	रविवार	२१.१२.२००३	प.पू.ध.धु.१००८ आचार्यश्री राकेशप्रसादजी
						महाराज श्री का पवित्र आगमन
११	२०६७	कारतक	शुद-५	बुधवार	१०-११-२०१०	श्री धनश्याम महाराज मूर्ति प्राणप्रतिष्ठा महोत्सव

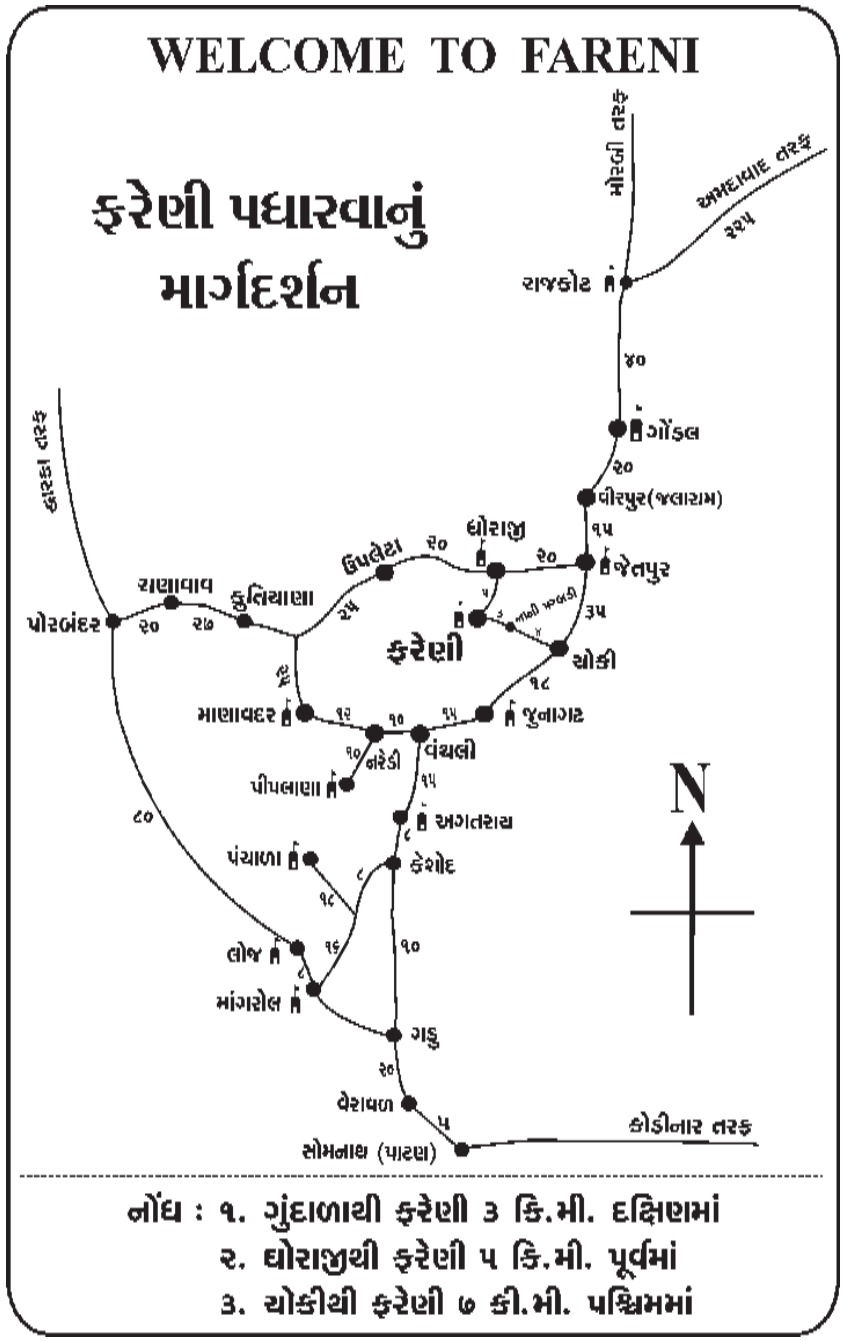

નોંધ : ૧. ગુંદાળાથી ફરેણી ૩ કિ.મી. દક્ષિણમાં
૨. ધોરાજીથી ફરેણી ૫ કિ.મી. પૂર્વમાં
૩. ચોકીથી ફરેણી ૭ કી.મી. પશ્ચિમમાં